बी.एड. प्रथम वर्ष

पाठ्यक्रम में भाषा

(LANGUAGE ACROSS THE CURRICULUM)

GEDE-04

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय – भोपाल

MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY - BHOPAL

Reviewer Committee

1. Dr. Pushpita Rajawat
   Assistant Professor
   Madhyanchal University, Bhopal (M.P.)

2. Dr. Mamta Bakliwal
   Professor
   Rajiv Gandhi College, Bhopal (M.P.)

3. Dr. Chitra Sharma
   Principal
   Ever Green Education Society, Bhopal (M.P.)

Advisory Committee

1. Dr. Jayant Sonwalkar
   Hon'ble Vice Chancellor
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

2. Dr. L.S. Solanki
   Registrar
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

3. Dr. Hemlata Dinkar
   HOD B.Ed
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

4. Dr. Pushpita Rajawat
   Assistant Professor
   Madhyanchal University, Bhopal (M.P.)

5. Dr. Mamta Bakliwal
   Professor
   Rajiv Gandhi College, Bhopal (M.P.)

6. Dr. Chitra Sharma
   Principal
   Ever Green Education Society, Bhopal (M.P.)

COURSE WRITERS

Dr Neha Goswami, Faculty of Education, School of Open Learning, University of Delhi
Units: (1-2)

Copyright © Reserved, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal

All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Registrar, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal.

Information contained in this book has been published by VIKAS® Publishing House Pvt. Ltd. and has been obtained by its Authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, the Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal, Publisher and its Authors shall in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use.

Published by Registrar, MP Bhoj (Open) University, Bhopal in 2020

Vikas® is the registered trademark of Vikas® Publishing House Pvt. Ltd.

VIKAS® PUBLISHING HOUSE PVT. LTD.
E-28, Sector-8, Noida - 201301 (UP)
Phone: 0120-4078900 • Fax: 0120-4078999
Regd. Office: A-27, 2nd Floor, Mohan Co-operative Industrial Estate, New Delhi 1100 44
• Website: www.vikaspublishing.com • Email: helpline@vikaspublishing.com

SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

पाठ्यक्रम में भाषा

Syllabi	Mapping in Book
इकाई–1 भाषा की प्रकृति एवं प्रयोग– भाषा की प्रकृति एवं कार्य, बोली एवं मानक भाषा, भाषा एवं संस्कृति, भाषा का मौखिक एवं लिखित रूप, प्रथम एवं द्वितीय भाषा, घर एवं विद्यालय में बोली जाने वाली भाषा; भाषिक विकास की रणनीतियां– द्विभाषावाद एवं बहुभाषावाद, मौखिक भाषा पद्धति के लिए रणनीतियां, कहानी सुनाना, भाषायी कौशल, अनुवाद उपागम, त्रुटि विश्लेषण; समेकित उपागम के माध्यम से भाषा प्रयोग एवं शिक्षण– समेकन : परिभाषा, विशेषताएं, प्रकार एवं क्षेत्र, चयनित विषयों पर समेकित दृष्टिकोण के लिए भाषा के घटकों का प्रयोग एवं शिक्षण; भाषा में अधिगम संसाधनों का प्रयोग– शब्दकोश, विश्वकोश, समाचारपत्र एवं पत्रिकाओं का प्रयोग, भाषा शिक्षण में अधिगम स्रोतों का प्रयोग, कम्प्यूटर, इंटरनेट, इंटरनेट वेबसाइट, विकिपीडिया एवं ई–संसाधनों का प्रयोग, भाषा शिक्षण और कक्षागत अंतःक्रिया	**इकाई 1** : भाषा की भूमिका **(पृष्ठ 3–88)**
इकाई–2 पाठ्यपुस्तकें, पाठ्यचर्या एवं पाठ्यक्रम– पाठ्यपुस्तकों की आवश्यकता, भाषा की पाठ्यपुस्तकों की विशेषताएं, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यचर्या, पाठ का विश्लेषण एवं अवलोकन, पाठ्यपुस्तक विश्लेषण; अध्ययन कौशल विकसित करना– प्रश्नों के प्रकार एवं उद्देश्य, विभिन्न विषयों के प्रश्नों के उत्तर कैसे दें (मौखिक एवं लिखित), नोट लेना एवं नोट बनाना, सारांश लिखना, लेखन प्रक्रिया, प्रभावी लेखन के गुण, व्यक्तिगत एवं सामूहिक रिपोर्ट लेखन; भाषा कौशलों का मूल्यांकन– समझ की प्रकृति, सुनने की समझ, पढ़ने की समझ, पढ़ना सिखाने में शिक्षक की भूमिका, समझ का मूल्यांकन करने के लिए उपकरण, पढ़ने की समझ में क्या और कैसे मूल्यांकन करें : सूचना, शब्द–भंडार, व्याकरण एवं रचना; पाठ्यचर्या क्षेत्रों में भाषाई प्रयोग– आलोचनात्मक चिंतन, विद्यालयी विषयों से अलग–अलग विषयों के पाठ, घटनाओं के विवरण, व्याख्या, वर्णन, तर्क–वितर्क आदि कर पाना, आनंद के लिए पढ़ना	**इकाई 2** : पठन एवं लेखन का शिक्षाशास्त्र **(पृष्ठ 89–166)**

विषय–सूची

परिचय 1–2

इकाई 1 भाषा की भूमिका 3–88

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 भाषा की प्रकृति एवं प्रयोग
  1.2.1 भाषा की प्रकृति एवं कार्य
  1.2.2 बोली एवं मानक भाषा
  1.2.3 भाषा एवं संस्कृति
  1.2.4 भाषा का मौखिक एवं लिखित रूप
  1.2.5 प्रथम एवं द्वितीय भाषा
  1.2.6 घर एवं विद्यालय में बोली जाने वाली भाषा
1.3 भाषिक विकास की रणनीतियां
  1.3.1 द्विभाषावाद एवं बहुभाषावाद
  1.3.2 मौखिक भाषा पद्धति के लिए रणनीतियां
  1.3.3 कहानी सुनाना
  1.3.4 भाषायी कौशल
  1.3.5 अनुवाद उपागम
  1.3.6 त्रुटि विश्लेषण
1.4 समेकित उपागम के माध्यम से भाषा प्रयोग एवं शिक्षण
  1.4.1 समेकन : परिभाषा, विशेषताएं, प्रकार एवं क्षेत्र
  1.4.2 चयनित विषयों पर समेकित दृष्टिकोण के लिए भाषा के घटकों का प्रयोग एवं शिक्षण
1.5 भाषा में अधिगम संसाधनों का प्रयोग
  1.5.1 शब्दकोश, विश्वकोश, समाचारपत्र एवं पत्रिकाओं का प्रयोग
  1.5.2 भाषा शिक्षण में अधिगम स्रोतों का प्रयोग
  1.5.3 कम्प्यूटर, इंटरनेट, इंटरनेट वेबसाइट, विकिपीडिया एवं ई–संसाधनों का प्रयोग
  1.5.4 भाषा शिक्षण और कक्षागत अंतःक्रिया
1.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.7 सारांश
1.8 मुख्य शब्दावली
1.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.10 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 2 पठन एवं लेखन का शिक्षाशास्त्र 89–166

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 पाठ्यपुस्तकें, पाठ्यचर्या एवं पाठ्यक्रम
  2.2.1 पाठ्यपुस्तकों की आवश्यकता
  2.2.2 भाषा की पाठ्यपुस्तकों की विशेषताएं
  2.2.3 पाठ्यक्रम एवं पाठ्यचर्या
  2.2.4 पाठ का विश्लेषण एवं अवलोकन
  2.2.5 पाठ्यपुस्तक विश्लेषण

2.3 अध्ययन कौशल विकसित करना
2.3.1 प्रश्नों के प्रकार एवं उद्देश्य
2.3.2 विभिन्न विषयों के प्रश्नों के उत्तर कैसे दें (मौखिक एवं लिखित)
2.3.3 नोट लेना एवं नोट बनाना
2.3.4 सारांश लिखना
2.3.5 लेखन प्रक्रिया, प्रभावी लेखन के गुण
2.3.6 व्यक्तिगत एवं सामूहिक रिपोर्ट लेखन
2.4 भाषा कौशलों का मूल्यांकन
2.4.1 समझ की प्रकृति
2.4.2 सुनने की समझ
2.4.3 पढ़ने की समझ
2.4.4 पढ़ना सिखाने में शिक्षक की भूमिका
2.4.5 समझ का मूल्यांकन करने के लिए उपकरण
2.4.6 पढ़ने की समझ में क्या और कैसे मूल्यांकन करें : सूचना, शब्द–भंडार, व्याकरण एवं रचना
2.5 पाठ्यचर्या क्षेत्रों में भाषाई प्रयोग
2.5.1 आलोचनात्मक चिंतन
2.5.2 विद्यालयी विषयों से अलग–अलग विषयों के पाठ
2.5.3 घटनाओं के विवरण, व्याख्या, वर्णन, तर्क–वितर्क आदि कर पाना
2.5.4 आनंद के लिए पढ़ना
2.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.7 सारांश
2.8 मुख्य शब्दावली
2.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.10 सहायक पाठ्य सामग्री

परिचय

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक 'पाठ्यक्रम की भाषा' विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित बी.एड. (प्रथम वर्ष) के पाठ्यक्रम के अनुरूप लिखी गई है। पाठ्यक्रम में भाषा के स्वरूप एवं विषयों का अध्ययन एक जटिल कार्य है क्योंकि पाठ्यक्रम के उद्देश्य तथा व्यवहार का निर्धारण भाषा से ही संबद्ध है। प्रत्येक स्तर के छात्रों के अनुरूप भाषा–पाठ्यक्रमों की नीतियां, कौशल एवं अधिगम प्रकारों का चयन किया जाता है। यद्यपि भाषा का आरंभ मानव के जन्म से ही होता है, परिवार एवं विद्यालय के प्रशिक्षण द्वारा बालक अनुकरण, पठन, लेखन अधिगमों द्वारा भाषा का संपूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लेता है। भाषाई व्यवहार में कुशलता प्राप्त करने हेतु व्यवस्थित भाषा शिक्षण की आवश्यकता सदैव रहती है। अन्य कलाओं की भांति भाषा सीखने के लिए सतत् अभ्यास व साधनों की आवश्यकता है। इस प्रयोजन हेतु व्याकरण के साथ ध्वनि ज्ञान का अध्ययन अत्यावश्यक है। भाषाई कौशलों को ग्रहण करने के लिए छात्रों को भाषा विज्ञान के सभी स्वरूपों का अर्थ व महत्व ज्ञात होना चाहिए।

प्रत्येक इकाई के प्रारंभ में विषय के विश्लेषण से पूर्व उसके निहित उद्देश्यों को स्पष्ट कर दिया गया है। इकाई के बीच–बीच में 'अपनी प्रगति जांचिए' के माध्यम से विद्यार्थियों की योग्यता को परखने के लिए प्रश्न दिए गए हैं। इस पुस्तक के अंतर्गत पाठ्यक्रम में भाषा के सभी विषयों पर विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से संपूर्ण पुस्तक को दो इकाइयों में समायोजित किया गया है, जिनका विवरण इस प्रकार है–

पहली इकाई भाषा के महत्व पर आधारित है। इसमें भाषा के अर्थ, स्वरूप, प्रकृति, सिद्धांत और विशेषताओं का वर्णन किया गया है। साथ ही भाषा विकास की रणनीतियां, समेकित उपागम के माध्यम से भाषा प्रयोग एवं शिक्षण, भाषा में अधिगम संसाधनों का प्रयोग आदि तथ्यों का भी उल्लेख किया गया है।

दूसरी इकाई पठन एवं लेखन के शिक्षाशास्त्र पर आधारित है। इसमें पाठ्यपुस्तकें, पाठ्यचर्या एवं पाठ्यक्रम का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, साथ ही अध्ययन कौशल विकसित करना, भाषा कौशलों का मूल्यांकन करना तथा पाठ्यचर्या क्षेत्रों में भाषाई प्रयोग को विस्तार से समझाया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक के अंतर्गत पाठ्यक्रम में भाषा के विभिन्न पहलुओं तथा शिक्षण में भाषा के महत्व एवं भाषा शिक्षण के कौशलों का सांगोपांग अध्ययन किया गया है। इस पुस्तक की इकाइयों के अध्ययन से छात्र विषय के विभिन्न पक्षों से अवगत हो पाएंगे। हमें पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक छात्र–छात्राओं की जिज्ञासा को शांत कर उनके ज्ञानवर्द्धन में सहायक सिद्ध होगी।

इकाई 1 भाषा की भूमिका

संरचना

1.0 परिचय

1.1 उद्देश्य

1.2 भाषा की प्रकृति एवं प्रयोग

- 1.2.1 भाषा की प्रकृति एवं कार्य
- 1.2.2 बोली एवं मानक भाषा
- 1.2.3 भाषा एवं संस्कृति
- 1.2.4 भाषा का मौखिक एवं लिखित रूप
- 1.2.5 प्रथम एवं द्वितीय भाषा
- 1.2.6 घर एवं विद्यालय में बोली जाने वाली भाषा

1.3 भाषिक विकास की रणनीतियां

- 1.3.1 द्विभाषावाद एवं बहुभाषावाद
- 1.3.2 मौखिक भाषा पद्धति के लिए रणनीतियां
- 1.3.3 कहानी सुनाना
- 1.3.4 भाषायी कौशल
- 1.3.5 अनुवाद उपागम
- 1.3.6 त्रुटि विश्लेषण

1.4 समेकित उपागम के माध्यम से भाषा प्रयोग एवं शिक्षण

- 1.4.1 समेकन : परिभाषा, विशेषताएं, प्रकार एवं क्षेत्र
- 1.4.2 चयनित विषयों पर समेकित दृष्टिकोण के लिए भाषा के घटकों का प्रयोग एवं शिक्षण

1.5 भाषा में अधिगम संसाधनों का प्रयोग

- 1.5.1 शब्दकोश, विश्वकोश, समाचारपत्र एवं पत्रिकाओं का प्रयोग
- 1.5.2 भाषा शिक्षण में अधिगम स्रोतों का प्रयोग
- 1.5.3 कम्प्यूटर, इंटरनेट, इंटरनेट वेबसाइट, विकिपीडिया एवं ई–संसाधनों का प्रयोग
- 1.5.4 भाषा शिक्षण और कक्षागत अंतःक्रिया

1.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1.7 सारांश

1.8 मुख्य शब्दावली

1.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

1.10 सहायक पाठ्य सामग्री

टिप्पणी

1.0 परिचय

भाषा को 'बहता नीर' कहा गया है। प्रत्येक भाषा की एक निश्चित प्रकृति होती है। हर व्यक्ति को अपनी भाषा से एक स्वाभाविक जुड़ाव होता है। भाषा का प्रश्न व्यक्ति की चेतना एवं अस्तित्व से जुड़ा हुआ होता है। बचपन से ही एक बालक भाषा सीखने लगता है और बड़े होते–होते परिवार, समाज और विस्तृत देश में आपसी व्यवहार के लिए भाषा का प्रयोग करने लगता है। एक–दूसरे को समझने एवं अपने विचारों के आदान–प्रदान के लिए भाषा व्यवहृत होती है। व्यवहार एवं प्रयोग के कारण भाषा का विकास भी होता है।

भारत एक बहुभाषिकता वाला देश है। यहां बहुत सी भाषाएं बोली–सुनी जाती हैं। बहुभाषिकता ही भारतीय समाज एवं संस्कृति का अभिन्न अंग है। हमारा बहुभाषी

टिप्पणी

होना हमें दूसरों से जुड़ने एवं उनको समझने में हमारी मदद करता है। बहुभाषिकता संप्रेषण को बाधित करने के बजाय बच्चे के संज्ञानात्मक विकास को सकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। बच्चे को विभिन्न भाषाओं का ज्ञान करवाने के लिए बहुभाषिकता का एक उपकरण के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त 'कहानी सुनाना', 'मौखिक बातचीत', 'अनुवाद करना', 'त्रुटि विश्लेषण' जैसे साधन भाषाई कौशलों (बोलना, सुनना, पढ़ना, लिखना) के विकास में सहायक हो सकते हैं।

हम सब कक्षा की शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया से परिचित हैं। विद्यालय में हर विषय के लिए एक अलग कालांश होता है और उस कालांश में केवल वही विषय पढ़ाया जाता है। लंबे समय तक बिना परिवर्तन के यह चलता रहता है। समेकित शिक्षण प्रणाली परंपरागत शिक्षण प्रणाली से इस रूप में भिन्न है कि इसके अंतर्गत विषय से संदर्भित अन्य विषयों पर भी चर्चा की जाती है और वास्तविक जीवन से संबंधित अनुभवों को कक्षा में स्थान दिया जाता है। वर्तमान समय में समेकित शिक्षण पर आधारित उपागम को अधिक सार्थक माना जाता है।

इस इकाई में हम भाषा की प्रकृति एवं कार्य के साथ–साथ बोली एवं मानक भाषा के बारे में पढ़ेंगे। किसी बच्चे के लिए मातृभाषा एवं द्वितीय भाषा क्या होती है? उनमें क्या अंतर है? घर और विद्यालय में बोली जाने वाली भाषा में क्या अंतर है? इन सभी तथ्यों का अध्ययन करेंगे।

द्विभाषिकता एवं बहुभाषिकता की अवधारणा को समझने का प्रयास करेंगे। इसके अतिरिक्त किसी बच्चे के भाषाई विकास के लिए आवश्यक कुछ रणनीतियों एवं साधनों पर चर्चा करेंगे साथ ही भाषा के चार कौशलों को भी समझने का प्रयास करेंगे।

समेकित शिक्षण प्रणाली की मूल अवधारणा, उसकी विशेषताओं एवं प्रकारों को समझने का प्रयास करेंगे। साथ ही विभिन्न विषयों पर समेकित उपागम के माध्यम से भाषा प्रयोग एवं शिक्षण की चर्चा भी करेंगे।

1.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- भाषा एवं उसके कार्यों के बारे में जान पाएंगे;
- बोली एवं मानक भाषा के अंतर को समझ पाएंगे;
- भाषा के अलग–अलग रूपों जैसे– मौखिक एवं लिखित भाषा, मातृभाषा, द्वितीय भाषा, घर एवं विद्यालय में बोली जाने वाली भाषा से परिचित हो पाएंगे;
- द्विभाषिकता एवं बहुभाषिकता की अवधारणा को समझ पाएंगे;
- भाषा कौशलों– सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना के बारे में विस्तार से जान पाएंगे;
- भाषा कौशल सीखने के विभिन्न उपकरणों के बारे में जान सकेंगे एवं उनका प्रयोग करना सीख पाएंगे;
- विद्यार्थी समेकित उपागम की अवधारणा को समझ पाएंगे;
- विद्यार्थी समेकित उपागम के माध्यम से भाषा प्रयोग एवं शिक्षण के तरीकों को समझ पाएंगे;

- पाठ्यपुस्तकों में समेकित सामग्री की पहचान कर पाएंगे;
- शब्दकोश, विश्वकोश, समाचारपत्र एवं पत्रिकाओं के महत्व को समझ पाएंगे;
- शब्दकोश, विश्वकोश, समाचारपत्र एवं पत्रिकाओं का प्रयोग करना सीख पाएंगे;
- कक्षा में विद्यार्थी–विद्यार्थी एवं शिक्षक–विद्यार्थी की अंतःक्रिया के माध्यम से वाद–विवाद एवं चर्चा के कौशल को कैसे विकसित किया जाए, यह समझ पाएंगे।

टिप्पणी

1.2 भाषा की प्रकृति एवं प्रयोग

भाषा की प्रकृति एवं प्रयोगों को क्रमशः विस्तार से इस प्रकार समझा जा सकता है–

1.2.1 भाषा की प्रकृति एवं कार्य

भाषा की प्रकृति समझने से पहले 'भाषा क्या है?' यह समझना अत्यंत आवश्यक है। भोलानाथ तिवारी के अनुसार, "भाषा वह साधन है जिसके माध्यम से हम अपने विचारों को दूसरों पर व्यक्त करते हैं या सोचते हैं।" इस प्रकार भाषा मुंह से उच्चारित ध्वनियों द्वारा अभिव्यक्ति के साथ–साथ मौन चिंतन का साधन एवं सांकेतिक अभिव्यक्ति भी है। परंतु यदि हम थोड़ी गहराई में जाकर समझें तो भाषा केवल अभिव्यक्ति का साधन मात्र नहीं है अपितु यह सोचने, समझने, महसूस करने एवं चीजों से जुड़ने का भी माध्यम है। कृष्ण कुमार (1996) भाषा को किसी भी बच्चे के व्यक्तित्व एवं उसकी क्षमताओं के विकास को आकार देने का एक महत्वपूर्ण साधन मानते हैं। "एक सूक्ष्म किन्तु मजबूत ताकत की तरह भाषा संसार के प्रत्येक बच्चे के दृष्टिकोण, उसकी रुचियों, क्षमताओं, यहां तक कि मूल्यों और मनोवृत्तियों को भी आकार देती है।"

कुछ अन्य भाषाविदों द्वारा दी गई भाषा की परिभाषाएं इस प्रकार हैं–

क्रोचे के अनुसार, "भाषा ऐसी ध्वनियों का संगठन है जो अभिव्यक्ति की दृष्टि से उच्चरित एवं सीमित है।"

स्वीट के अनुसार, "विचारों को ध्वयन्यात्मक शब्दों द्वारा प्रकट करने का साधन ही भाषा है।"

बान्द्रिए के अनुसार, "भाषा एक प्रकार का संकेत है। संकेत से तात्पर्य उन प्रतीक चिह्नों से है जिनके द्वारा मनुष्य अपने विचारों को प्रकट करता है। जैसे– नेत्रग्राह्य, कर्णग्राह्य, स्पर्शग्राह्य। कर्णग्राह्य प्रतीक ही भाषा की दृष्टि से मान्य है।"

ब्लॉक एवं ट्रागोर के अनुसार, "भाषा यादृच्छिक मौखिक प्रतीकों की व्यवस्था है जिसके द्वारा एक मनुष्य समुदाय के लोग परस्पर विचारों का आदान–प्रदान करते हैं।"

ब्रिटेनिका एनसाइक्लोपीडिया के अनुसार, "भाषा यादृच्छिक मौखिक प्रतीकों की व्यवस्था है जिसके द्वारा मनुष्य समाज का सदस्य तथा संस्कृति का प्रतिभागी होने के नाते परस्पर क्रिया–प्रतिक्रिया एवं विचारों का आदान–प्रदान करता है।"

कामता प्रसाद गुरु के अनुसार, "भाषा वह साधन है, जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों पर भली–भांति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचार स्पष्टतया समझ सकता है।"

टिप्पणी

इन सभी परिभाषाओं में भाषा की प्रकृति और कार्य दोनों ही समाहित हैं। निरंजन कुमार सिंह (2002) भाषा को मौखिक प्रतीकों की व्यवस्था की जगह ध्वन्यात्मक प्रतीकों की व्यवस्था मानते हैं। उनका मानना है कि "वस्तुतः भाषा शब्द भी मुख्यतः मौखिकता का द्योतक है। भाषा निश्चित रूप से उच्चारण सापेक्ष ध्वनि है। 'ध्वन्यात्मक' शब्द में भाषा के मौखिक और लिखित दोनों रूपों का समावेश हो जाता है।" इस प्रकार निरंजन कुमार सिंह भाषा को इस प्रकार परिभाषित करते हैं–

"भाषा यादृच्छिक ध्वन्यात्मक प्रतीकों की व्यवस्था है जिसके द्वारा समुदाय विशेष के लोग परस्पर विचारों का आदान–प्रदान तथा सहयोग करते हैं।"

इन सब परिभाषाओं से भाषा की प्रकृति के बारे में पता चलता है–

1. भाषा एक व्यवस्था है

यदि हम किसी भी भाषा के स्वरूप पर गहनता से विचार करें तो पाएंगे कि भाषा एक व्यवस्था है। इस संदर्भ में निरंजन कुमार सिंह लिखते हैं कि "भाषा की यह व्यवस्था उसके तत्त्वों–ध्वनि व्यवस्था, शब्द व्यवस्था, वाक्य व्यवस्था आदि स्तरों पर देखी जा सकती है।" इस प्रकार भाषा की व्यवस्थात्मक प्रकृति को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है–

(क) प्रत्येक भाषा में कुछ मूल ध्वनियां होती हैं और इन ध्वनियों की भी व्यवस्था होती है जैसे लिपि, चिह्न, स्वर, व्यंजन, संयुक्त व्यंजन, ध्वनियों के उच्चारण आदि।

(ख) भाषा में ध्वनियां मिलकर ही शब्द का निर्माण करती हैं। स्वतंत्र ध्वनियां अर्थहीन होती हैं। जब ध्वनियां मिलकर शब्दों का निर्माण करती हैं तब ही वे सार्थक सिद्ध होती हैं। इन शब्दों की भी अपनी एक व्यवस्था होती है और जब इनका प्रयोग करके ही वाक्यों का निर्माण किया जाता है। जब ये शब्द वाक्यों में प्रयुक्त होते हैं तो पद कहलाते हैं। इन पदों का रूप (लिंग, वचन, कारक, काल आदि के कारण) बदलता रहता है।

(ग) शब्दों से वाक्यों का निर्माण होता है। वाक्यों से ही अधिक स्पष्ट अभिव्यक्ति मिलती है। ये भाषा की सार्थक इकाई है। हर भाषा की वाक्य संरचना भिन्न–भिन्न होती है। उदाहरण के लिए हिन्दी भाषा में वाक्य संरचना, अंग्रेजी भाषा की वाक्य संरचना से भिन्न है। वाक्य संरचना में पदक्रम, विराम–चिह्न आदि शामिल हैं।

(घ) वाक्यों से हमें स्पष्ट अभिव्यक्ति तो मिलती है परंतु भावाभिव्यक्ति नहीं। बहुत सारे वाक्य मिलकर एक अनुच्छेद का निर्माण करते हैं। एक या अधिक अनुच्छेदों से हम अपनी अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करते हैं।

इस प्रकार ध्वनि, शब्द, वाक्य एवं अनुच्छेद आदि के आधार पर भाषा का आकार या ढांचे का निर्माण होता है जो भाषा की व्यवस्था का निर्माण करता है। इस व्यवस्था को बनाए रखने के लिए प्रत्येक भाषा के व्याकरणिक नियमों और उसके प्रयोगों को जानना आवश्यक होता है। भाषा की इसी व्यवस्थात्मक प्रकृति को ध्यान में रखते हुए कुछ भाषाविदों ने इसको "परस्पर सम्बद्ध अवयवों से युक्त संश्लिष्ट व्यवस्था" भी कहा है।

2. भाषा प्रतीकात्मक है

भाषा में ध्वनियों से शब्दों का निर्माण होता है। ये शब्द किसी वस्तु, विचार या भाव आदि के प्रतीक हैं। भ67ाषा में प्रयुक्त लगभग हर शब्द प्रतीक होते हैं। तात्पर्य यह है कि

टिप्पणी

किसी भी ध्वनि का अपने आप में कोई स्वतंत्र अर्थ नहीं होता और जब ये ध्वनियां मिलकर शब्द बनाती हैं तो उन शब्दों को किसी वस्तु, भाव आदि का प्रतीक मान लिया जाता है। निरंजन कुमार सिंह के अनुसार, "किसी वस्तु या विचार को प्रकट करने के लिए उनके प्रतीक रूप से शब्द का प्रयोग किया जाता है। फिर परंपरागत प्रचलन के कारण शब्द और उनमें निहित अर्थ इतने संपृक्त हो जाते हैं कि शब्द (प्रतीक) मात्र को सुनते ही तत्संबंधी वस्तु, भाव या विचार का प्रत्यक्षीकरण हमारे मानसपटल पर हो जाता है।" उदाहरण के लिए हिन्दी भाषा में म, ए, ज स्वतंत्र ध्वनियां हैं जिनका कोई सार्थक अर्थ नहीं है परंतु इनसे बना शब्द 'मेज' किसी वस्तु की ओर संकेत करता है। इस प्रकार सभी भाषाओं में लगभग सभी शब्द प्रतीक होते हैं।

3. भाषा प्रतीक ध्वन्यात्मक हैं

भाषा जिन प्रतीकों से मिलकर बनी है वे मूलतः ध्वनि समूह ही हैं। मनुष्य के मुख से उच्चरित ध्वनि या ध्वनि समूह मिलकर ही प्रतीकों का निर्माण करते हैं। इन ध्वनियों को लिपि के रूप में लिखकर लिखित रूप प्रदान किया जाता है। नीरा नारंग (2002) के अनुसार, "अपना आशय प्रकट करने के लिए अन्य आंगिक या सांकेतिक साधन भाषा नहीं हैं, केवल सार्थक ध्वन्यात्मक संकेत ही उच्चारित और श्रोतग्राह्य होने के कारण भाषा का निर्माण करते हैं।"

4. प्रतीक यादृच्छिक होते हैं

भाषा में जो भी प्रतीक होते हैं वे स्वयं में सार्थक होते हैं परंतु उनसे बोधित वस्तु, विचार या भाव से उनका किसी प्रकार का संबंध नहीं होता। यह संबंध यादृच्छिक या माना हुआ संबंध होता है। शब्द एवं अर्थ का संबंध किसी प्रकार के तर्क पर आधारित नहीं होता परंतु दीर्घकाल में इनका व्यावहारिक प्रयोग होने के कारण यह संबंध इतना प्रगाढ़ हो जाता है कि वह बेहद सहज एवं स्वाभाविक लगने लगता है। निरंजन कुमार सिंह (2011) इस विषय में लिखते हैं, "वस्तुतः भाषा के प्रतीक या ध्वनि–संकेत रूढ़–अर्थ विशेष में प्रसिद्ध होते हैं। यह रूढ़ि परम्परागत प्रचलन से बन जाती है फिर शब्द और अर्थ का रूढ़ अर्थ हम बिना तर्क या कारण मानते चलते हैं।" यदि शब्दों के अर्थ किसी भी तर्क पर आधारित होते तो विश्व की सभी भाषाओं में किसी वस्तु, विचार एवं भाव के लिए एक ही शब्द होता। परंतु हम देखते हैं कि ऐसा नहीं है। संसार की विभिन्न भाषाओं में एक ही वस्तु या भाव के लिए अनेक शब्द हैं।

5. भाषा को उत्पन्न नहीं किया जा सकता, इसका अर्जन किया जा सकता है

भाषा को उत्पन्न नहीं किया जा सकता। कोई भी व्यक्ति अपने समाज से भाषा का अर्जन कर सकता है। समाज ही भाषा का जनक है और परंपरा एवं संस्कृति के द्वारा भाषा पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती रही है। भाषा का अर्जन, भाषा के अनुकरण द्वारा किया जाता है। कोई भी बच्चा सुनकर ही भाषा को ग्रहण करना प्रारम्भ कर देता है।

6. भाषा विचार विनिमय एवं परस्पर सहयोग का साधन है

भाषा को एक सामाजिक क्रिया माना जाता है। किसी भी भाषा का उद्‌भव एवं विकास समाज में ही होता है। कोई भी व्यक्ति समाज से ही भाषा अर्जित करता है और भाषा के द्वारा ही वह अपने विचार दूसरों तक प्रेषित करता है। भाषा ही समाज में उसके सम्बन्धों एवं परस्पर सहयोग का आधार है।

टिप्पणी

7. भाषा सदैव परिवर्तित होती रहती है

भाषा को हम अनुकरण के द्वारा सीखते हैं। इसलिए हमारे सीखने की प्रक्रिया में होने वाले परिवर्तन के कारण ही भाषा भी परिवर्तित होती रहती है। नीरा नारंग (2002) के अनुसार, "वैयक्तिक विभिन्नता, प्रयोगात्मक भिन्नता, अन्य भाषाओं से संपर्क, बोलियों के प्रभाव, ज्ञान–विज्ञान के उत्कर्ष के कारण शब्द भंडार में वृद्धि, अभिव्यक्ति के विभिन्न रूपों का प्रयोग आदि अनेक कारणों से भाषा का विकास होता रहता है और उसमें यह परिवर्तन परिलक्षित होता है।" ये भाषिक परिवर्तन भिन्न–भिन्न स्तरों पर हो सकते हैं चाहे वह ध्वनि हो, शब्द हो या वाक्य संरचना हो। उदाहरण के लिए यदि हम वर्तमान हिन्दी शब्द भंडार की तुलना सौ–दो सौ साल पुराने शब्द भंडार से करें तो हमको भाषा के परिवर्तन का अर्थ स्पष्ट हो जाएगा।

8. प्रत्येक भाषा की संरचना स्वतंत्र होती है और दूसरी भाषा से भिन्न होती है

किसी भी दो भाषाओं की संरचना भिन्न होती है। इसलिए कोई नई भाषा सीखने के लिए अपनी भाषा से दूसरी भाषा की भिन्नता को समझना आवश्यक है। "ध्वनि, शब्द रूप, वाक्य, अर्थ आदि दृष्टियों से किसी एक या अनेक स्तरों पर एक भाषा का ढांचा दूसरी भाषा के ढांचे से भिन्न होगा ही। यह भिन्नता ही एक भाषा को दूसरे से पृथक कर देती है या विशिष्टता प्रदान कर देती है। इस विशिष्टता को न मानने या उस पर ध्यान न देने के कारण ही हम 'अन्य भाषा' सीखते समय अपनी भाषा के रूप में आरोपित कर देते हैं।" (निरंजन कुमार सिंह, 2011)

9. प्रत्येक भाषा का एक मानक रूप अवश्य होता है

हालांकि भाषा परिवर्तनशील है और जब हम भाषा का प्रयोग करते हैं तो विभिन्नताएं पाते हैं परंतु भाषा का एक मानक रूप अवश्य होता है। भाषा शिक्षण में हमें किसी भी भाषा के मानक रूप का ही प्रयोग करना चाहिए जो कि व्याकरणसम्मत हो।

10. भाषा जटिलता से सरलता की ओर प्रवाहित होती है

मानव समाज में यदि भाषा के विकास का अध्ययन किया जाए तो यह स्पष्ट हो जाता है कि भाषा का प्रवाह जटिलता से सरलता की ओर है। यह सरलता ध्वनियों के उच्चारण, शब्द रचना, वाक्य संरचना, मुहावरे आदि सभी क्षेत्रों में परिलक्षित होती है।

भाषा के कार्य

भाषा के निम्न कार्य होते हैं–

1. **भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति** : भाषा की सबसे बड़ी उपयोगिता यह है कि यह हमारे भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति का साधन है। जब हम किसी भाषा को सीखने लगते हैं तो हमारे भीतर भाव एवं विचार स्फुरित होने लगते हैं। भाषा किसी बालक के शारीरिक एवं मानसिक विकास के साथ जुड़ी हुई होती है। हमारे भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति का समाज में बहुत महत्व है। व्यक्तियों का पारस्परिक संबंध भाषा द्वारा ही संभव है। परस्पर वार्तालाप, किसी भी मुद्दे पर विचार विमर्श करना, सामाजिक आयोजनों में सहभागिता आदि भाषा के द्वारा ही संभव है।

टिप्पणी

2. **मनुष्य के भावात्मक विकास का साधन** : मनुष्य के भावों का भाषा के साथ गहरा संबंध है। ओग्डेन और रिचर्ड के अनुसार भाषा के दो भेद है– भावात्मक एवं प्रतीकात्मक। भावात्मक भाषा को वे संवेगों की भाषा कहते हैं जबकि प्रतीकात्मक भाषा वह है जो चिंतन से संबंधित है। भाषा के द्वारा ही किसी बच्चे का भावात्मक विकास किया जा सकता है। किसी भी भाषा के साहित्य के द्वारा प्रेम, उल्लास, क्रोध, करुणा आदि मनोवेगों का उदात्तीकरण किया जा सकता है।
3. **सृजनात्मकता का विकास** : भाषा के द्वारा किसी बच्चे की सृजनात्मकता का विकास किया जा सकता है। विशेषतः मातृभाषा में बच्चे की सृजनात्मक शक्ति का विकास होता है। ऐसा क्यों होता है? इस संदर्भ में निरंजन कुमार सिंह लिखते हैं– "मातृभाषा का संबंध अपने भौगोलिक, प्राकृतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश तथा उसके परंपरागत इतिहास से जुड़ा होता है। इस परिवेश में ही उसका उद्‌भव और विकास हुआ रहता है, अतः व्यक्ति का संबंध केवल बाह्य साधन के रूप में न होकर आंतरिक भावात्मक रूप ग्रहण कर लेता है।"
4. **बौद्धिक विकास, आलोचनात्मक चिंतन एवं विचारात्मक चिंतन का विकास** : भाषा का संबंध हमारी बुद्धि एवं उसके विकास से है। ऐसे कई प्रयोग हुए हैं जहां यह सिद्ध किया गया है कि जिन बच्चों में भाषायी क्षमता का विकास नहीं हो पाता वे बुद्धि परीक्षाओं में सफल नहीं हो पाते। (जी. एस. थॉमसन, 1924) भाषा का हमारी विचार प्रक्रिया से संबंध होता है। भाषा के बिना हमारी बुद्धि सक्रिय नहीं हो पाती। भाषा हमारी बुद्धि को क्रियाशील एवं प्रखर बनाती है।
5. **सामाजिक क्रिया–कलापों का आधार** : भाषा हमारी समस्त सामाजिक क्रियाओं का आधार है। प्रसिद्ध भाषाविद ब्लूमफील्ड इस संदर्भ में लिखते हैं कि "मनुष्य के समस्त व्यवहार एवं क्रिया–कलापों का आधार भाषा है क्योंकि बाह्य एवं आंतरिक उत्तेजना के फलस्वरूप व्यक्ति की प्रतिक्रिया जब तक वाणी के रूप में नहीं प्रकट होती तब तक क्रिया–सम्पादन में दूसरों का सहयोग नहीं प्राप्त होता।" मनुष्य एक भाषायुक्त सामाजिक प्राणी है। भाषा मात्र विचारों का सम्प्रेषण नहीं है अपितु यह सामाजिक नियंत्रण का साधन भी है। हम जिस भाषा में व्यवहार करते हैं उसमें हमारे सामाजिक जीवन की परंपरा, रीति–नीति, आचरण आदि का ज्ञान भी निहित होता है।
6. **सांस्कृतिक जीवन का आधार** : भाषा हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग है। किसी भी क्षेत्र की भाषा में वहां की संस्कृति निहित होती है। किसी भी भाषा के अध्ययन से हम उस क्षेत्र की संस्कृति से, वहां के निवासियों से भी जुड़ाव महसूस करते हैं। डॉ. रामविलास शर्मा अपनी पुस्तक 'भाषा और समाज' में लिखते हैं कि "हम अपने भाषा के शब्दों को इसलिए प्यार नहीं करते कि वे विभिन्न पदार्थों और व्यापारों की ओर संकेत करते हैं बल्कि इसलिए भी कि वे हमारे हैं, उनसे हमारा एवं हमारे पूर्वजों का संबंध रहा है। इसलिए भारतीय बच्चे जब मां को मम्मी और पिता को डैडी कहते हैं तो वस्तुगत अंतर न होते हुए भी हमें अच्छा नहीं लगता।" हमारे सांस्कृतिक विकास के साथ–साथ हमारी भाषा का भी विकास होता है।

1.2.2 बोली एवं मानक भाषा

बोली और मानक भाषा को अलग–अलग क्रमशः इस प्रकार समझा जा सकता है–

बोली : किसी भी भाषा के क्षेत्र में उस भाषा के बोले जाने वाले उपरूप को ही बोली कहा जाता है। उदाहरण के लिए हिन्दीभाषी क्षेत्र में बोली जाने वाली विभिन्न बोलियां हैं– अवधी, ब्रज, छत्तीसगढ़ी, बुंदेली, हरियाणवी आदि। बोली के अंतर्गत भी व्यक्ति बोली, स्थानीय बोली, उपबोली आदि आते हैं। हर व्यक्ति की अपनी भाषा या बोली होती है जो अन्य व्यक्तियों की बोली एवं भाषा से भिन्न होती है। कोई दो व्यक्ति भी एक जैसी बोली नहीं बोलते। उनकी बोली में अंतर अवश्य पाया जाता है। किसी एक व्यक्ति की अपनी भाषा या बोली को ही व्यक्ति बोली कहा जाता है। स्थानीय बोली किसी बहुत छोटे क्षेत्र या स्थान में बोली जाने वाली भाषा है। उदाहरण के लिए 'बनारसी' एक स्थानीय बोली है जो बनारस शहर में बोली जाती है। कई स्थानीय बोलियों के सामूहिक रूप को 'उपबोली' कहा जाता है। उदाहरण के लिए ब्रजभाषा के क्षेत्र में भुक्सा, डांगी जैसी उपबोलियां बोली जाती हैं।

टिप्पणी

बोलियां कैसे बनती हैं : बोलियों के निर्माण का प्रमुख कारण भौगोलिक है। किसी एक मूल भाषा से अन्य शाखाएं फूट कर अलग–अलग चली गईं और दूर–दूर जा बसीं। इन अलग–अलग शाखाओं में कुछ विशेषताएं विकसित हो गईं और इस प्रकार अलग–अलग बोलियां विकसित हो गईं। अतः यह कहा जा सकता है कि किसी भाषा से अन्य शाखा का अन्य से अलग होना ही बोली बनने का प्रधान कारण है। कई बार ऐसा भी होता है कि यदि कोई भाषा एक बड़े क्षेत्र में बोली जा रही है और उस क्षेत्र में दूरी के कारण एक उपक्षेत्र के लोग, दूसरे उपक्षेत्र के लोगों से नहीं मिल पाते तो उन दोनों क्षेत्रों में अलग–अलग बोलियां विकसित हो जाती हैं। हिन्दी भाषा की विभिन्न बोलियां जैसे ब्रज और अवधी भी इसी प्रकार विकसित हुई हैं। कभी–कभी राजनैतिक एवं आर्थिक कारणों से लोगों को दूर बसना पड़ता है और वहां पर नई भाषा के प्रभाव से उनकी नई बोली विकसित हो जाती हैं।

बोलियों का महत्व : कई बार बोलियां इतना महत्व प्राप्त कर लेती हैं कि वह भाषा बन जाती हैं। इसके पीछे निम्नलिखित कारण हो सकते हैं–

- कुछ बोलियां अपनी अन्य शाखाओं से अलग बची रह जाती हैं और इसलिए उनको महत्वपूर्ण समझा जाता है और वे भाषा मानी जाने लगती हैं पर ऐसा जरूरी नहीं कि हमेशा ही बोली, भाषा बन जाए।
- जिस बोली में साहित्य रचना अधिक होती है वह बोली महत्वपूर्ण हो जाती है।
- धार्मिक श्रेष्ठता भी बोली के महत्व को बढ़ा देती है। जैसे अयोध्या की बोली अवधी और मथुरा की बोली ब्रज को अन्य बोलियों से अधिक महत्व मिला है। ब्रज को तो ब्रजभाषा ही कहा जाता है।
- बोली के महत्वपूर्ण होने का एक प्रमुख कारण है– राजनीति। जहां राजनीति का मुख्य केंद्र होगा वहां की बोली, भाषा का दर्जा पा जाती है। उदाहरण के लिए दिल्ली के समीप की खड़ी बोली आज अन्य हिन्दी भाषा भाषी प्रान्तों की प्रमुख भाषा है। उसने अन्य बोलियों जैसे अवधी, मैथिली और ब्रज जैसे प्राचीन एवं महत्वपूर्ण बोलियों को दबाकर अपना स्थान बना लिया है।

- कई बार कोई बोली विशेष शिक्षा का माध्यम, सेना में स्वीकृत होने के कारण, व्यापारिक कारणों, विज्ञान आदि में प्रयोग के कारण महत्वपूर्ण हो जाती है।

भाषा और बोली में अंतर

व्यावहारिक दृष्टि से भाषा एवं बोली में बहुत अंतर पाया जाता है। उनमें से कुछ अंतर इस प्रकार हैं–

टिप्पणी

1. भाषा बड़े क्षेत्र में बोली जाती है जबकि बोली अपेक्षाकृत छोटे क्षेत्र में बोली जाती है। उदाहरण के लिए हिन्दी भाषा भारत के कई राज्यों में बोली जाती है जैसे हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान आदि जबकि इन क्षेत्रों में बोली जाने वाली ब्रज, अवधी आदि सीमित क्षेत्र में बोली जाती है।
2. एक भाषा के अंतर्गत कई बोलियां आ सकती हैं परंतु एक बोली के अंतर्गत कई भाषाएं नहीं हो सकतीं।
3. भाषा का मानक रूप अवश्य होता है जबकि बोली का कोई मानक रूप नहीं होता।
4. भाषा स्वायत्त होती है जिसका परिचय प्रायः स्वतंत्र रूप से दिया जाता है। इसके विपरीत बोली की पहचान इस बात से होती है कि वह किस भाषा की है।
5. भाषा शासन के कार्यों, शिक्षा, साहित्यिक रचनाओं का निर्माण करने के काम आती है। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो बोली इन सबके काम नहीं आती। हां लोक साहित्य की रचना अवश्य बोली में की जाती है।
6. किसी एक भाषा की बोलियों को बोलने वाले एक–दूसरे की बात को समझ लेते हैं परंतु किसी एक भाषा को बोलने वाला प्रायः दूसरी भाषा को नहीं समझ सकता। उदाहरण के लिए हिन्दी–भाषी, तमिल या तेलुगु भाषा को नहीं समझ सकता जबकि हिन्दी की ही दो बोलियों– बुन्देली एवं ब्रज को बोलने वाले लोग एक–दूसरे की बात को समझ सकते हैं।
7. भाषा, बोली से अधिक प्रतिष्ठित होती है इसलिए औपचारिक परिस्थितियों में भाषा का प्रयोग होता है।
8. बोली बोलने वाले लोग अपने क्षेत्र के लोगों से सम्प्रेषण के लिए बोली का प्रयोग करते हैं जबकि बाहरी क्षेत्र के व्यक्ति के लिए भाषा का प्रयोग करते हैं।

इस प्रकार यह दृष्टिगत होता है कि भाषा एवं बोली का अंतर वैज्ञानिक न होकर समाजशास्त्रीय है।

मानक भाषा : किसी भी भाषा को मानक भाषा तब माना जा सकता है जब वह प्रयोग की दृष्टि से सर्वोत्तम हो और निश्चित पैमाने के अनुसार लिखी जाती हो। यह व्याकरण के अनुसार ही लिखी और बोली जाती है। भोलानाथ तिवारी (2013) के अनुसार, "भाषा का मानक रूप उस भाषा के पूरे क्षेत्र में शिक्षा प्रशासन, साहित्य–रचना तथा औपचारिक विचार विनिमय आदि का माध्यम होता है।" कुछ भाषाविद मानक भाषा को किसी समूह के शिक्षित वर्ग द्वारा मान्यता प्राप्त भाषा मानते हैं। भाषायी शब्दावली के शब्दकोश (1966) के अनुसार, "परिनिष्ठित या मानक भाषा किसी भाषा की उस विभाषा को कहा जाता है जिसे साहित्यिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से अन्य विभाषाओं की तुलना में वरीयता

प्राप्त हो जाती है तथा जिसे अन्य विभाषा भाषी सामाजिक दृष्टि से सर्वाधिक उपर्युक्त भाषा स्वीकार कर लेते हैं।"

टिप्पणी

जब कोई बोली मानक भाषा का रूप ले लेती है तो आस–पास की बोलियों पर भी उसका असर पड़ता है। उदाहरण के लिए खड़ी बोली ने ब्रज, अवधी, भोजपुरी आदि सभी बोलियों को प्रभावित किया है। मानक भाषा का उच्चारण एवं व्याकरण आदि निश्चित कर दिया जाता है परंतु फिर भी पूरे क्षेत्र में इसका प्रभाव एक सा नहीं रहता क्योंकि उन पर प्रादेशिक बोलियों का प्रभाव बना रहता है। यह प्रभाव उस भाषा की व्याकरण, शब्द–समूह एवं उच्चारण पर पड़ता है।

मानक भाषा के भी दो रूप हो सकते हैं– लिखित एवं मौखिक। मौखिक भाषाएं प्रायः लिखित रूपों से भिन्न होती हैं। बोलने में वाक्य छोटे ही प्रयोग किए जाते हैं और लिखित रूप में वाक्य अक्सर बड़े हो जाते हैं। इस प्रकार मौखिक रूप, लिखित रूप से अधिक स्वाभाविक प्रतीत होता है। यही बात मानक भाषा पर भी लागू होती है। मानक भाषा के लिखित रूप पर, मौखिक रूप की अपेक्षा प्रादेशिकता की छाप कम होती है, क्योंकि लिखने में लोग अधिक सतर्क रहते हैं।

1.2.3 भाषा एवं संस्कृति

संस्कृति को हम कुछ ऐसे आचरणों/व्यवहारों से परिभाषित कर सकते हैं जो किसी समूह विशेष में पाए जाते हैं। यह जीवन जीने का एक तरीका है जिसके द्वारा किसी समाज का निर्माण होता है और व्यक्ति समाज में रहने योग्य बनता है। संस्कृति की उत्पत्ति समाज में ही होती है, कोई एक व्यक्ति विशेष संस्कृति का निर्माण नहीं कर सकता। यह समूह पर आधारित अवधारणा है। एडवर्ड टायलर के अनुसार, "संस्कृति अपने व्यापक अर्थ में एक जटिल समग्र है जिसमें ज्ञान, कला, नैतिकता, कानून, आस्था एवं विश्वास, रीति–रिवाज तथा मनुष्य के समाज के सदस्य के रूप में होने के फलस्वरूप प्राप्त आदतें एवं क्षमताएं शामिल हैं।"

भाषा एवं संस्कृति का आपस में गहरा संबंध है। भाषा किसी भी समाज एवं संस्कृति का उतना ही महत्वपूर्ण हिस्सा है जितना कि अन्य तत्त्व। विभिन्न समाजशास्त्रियों, भाषाविदों एवं मानवविज्ञानियों ने समाज, संस्कृति एवं भाषा के बीच के सम्बन्धों को समझने का प्रयास किया है। विभिन्न शोधों से यह जानकारी मिलती है कि भाषा एवं किसी समाज की संस्कृति एक दूसरे पर अन्योन्यश्रित है। कोई भी बच्चा अपनी भाषा मां के उदर से नहीं सीख कर आता अपितु वह जिस परिवेश में जन्म लेता है वहीं की भाषा सीख जाता है। वह अपने परिवार एवं समाज से भाषा सीख लेता है। यह सीखना इतना सहज होता है जिससे यह प्रतीत होने लगता है कि बच्चे को भाषा अपने माता–पिता से उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुई है। परंतु यह सत्य नहीं है। यदि बच्चे को पैदा होते ही किसी अन्य भाषी स्थान पर भेज दिया जाए तो वह उस स्थान की भाषा अर्जित कर लेगा। यदि उसको भाषाविहीन समाज में भेज दिया जाए तो वह भी भाषाविहीन बन जाएगा। भाषा सीखना वास्तव में भाषा का अर्जन है जो समाज में रहकर होता है। बच्चे का इस प्रकार भाषा सीखना, भाषा के सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भ को स्पष्ट करता है।

जब भी हम किसी समाज की संस्कृति को समझने का प्रयास करते हैं, भाषा उसका एक मुख्य अंग माना जाता है। भाषा किसी भी संस्कृति द्वारा प्रदत्त एक वरदान

माना जाता है। यही कारण है कि जिस व्यक्ति को अपनी संस्कृति से जितना लगाव होगा, उतना ही लगाव उनको अपनी भाषा से भी होगा। यदि किसी समाज में संस्कृति का ह्रास होता है तो उस समाज की भाषा एवं साहित्य में भी ह्रास होना प्रारम्भ हो जाता है।

टिप्पणी

1.2.4 भाषा का मौखिक एवं लिखित रूप

सभी भाषा वैज्ञानिक भाषा के मौखिक रूप को ही उसका मूल रूप मानते हैं। सभी व्यक्ति पहले बोलचाल की भाषा सीखते हैं और फिर लिखित भाषा सीखते हैं। इसलिए बहुत से विद्वान भाषा के मौखिक रूप को ही भाषा का प्राथमिक रूप मानते हैं और भाषा के लिखित रूप को उसका द्वितीय रूप मानते हैं। परंतु इस बात को निर्विरोध स्वीकार किया जा सकता है कि भाषा के दोनों ही रूप स्वायत्त एवं स्वतंत्र होते हैं।

व्यावहारिक दृष्टि से भाषा के दो रूप हैं– (1) मौखिक रूप (2) लिखित रूप

भाषा का मौखिक रूप

भाषा के मौखिक रूप को ही भाषा का सहज रूप माना जाता है। जब कोई व्यक्ति अपने विचार बोलकर अभिव्यक्त करता है या आमने–सामने आपस में बात करता है तो वह भाषा का मौखिक रूप कहलाता है। इसको हम भाषा का अमूर्त रूप भी कह सकते हैं। मौखिक रूप के भी दो पक्ष हैं– ग्रहण एवं अभिव्यक्ति जिसको हम सुनना एवं बोलना भी कह सकते हैं। मौखिक भाषा की सूक्ष्मतम इकाई ध्वनि होती है। प्रत्येक भाषा की अपनी ध्वनियां हैं।

भाषा का लिखित रूप

जिस भाषा को लिखकर अथवा पढ़कर हम अपने विचारों को अभिव्यक्त कर सकते हैं वह भाषा का लिखित रूप कहलाता है। इसको भाषा का अमूर्त रूप भी कहा जाता है। लिखित रूप के भी दो पक्ष हैं– ग्रहण एवं अभिव्यक्ति जिसको हम पढ़ना एवं लिखना भी कह सकते हैं। लिखित भाषा की अंतिम इकाई वर्ण है जो भाषा को लिखने के लिए प्रतीकों के रूप में प्रयुक्त होती है। वर्णों के समूह को वर्णमाला कहा जाता है और जिस रूप में इन वर्णों को लिखा जाता है वह रूप लिपि कहलाता है। हालांकि भाषा के लिखित रूप का विकास उसके मौखिक रूप से बहुत बाद में हुआ परंतु भाषा एवं साहित्य को स्थायित्व प्रदान करने के लिए भाषा के लिखित रूप का बहुत महत्व है।

इसके अतिरिक्त भाषा का एक सांकेतिक रूप भी माना जाता है। उदाहरण के लिए जब ट्रैफिक पुलिस का सिपाही चौराहे पर संकेतों के द्वारा यातायात संचालित करता है या फिर कक्षा में पढ़ा रही अध्यापिका अपने मुंह पर उंगली रखकर विद्यार्थियों को चुप रहने का इशारा करती हैं तो यह भाषा का सांकेतिक रूप है। इसके अतिरिक्त शारीरिक रूप से अक्षम लोग भी सांकेतिक भाषा का प्रयोग करते हैं।

1.2.5 प्रथम एवं द्वितीय भाषा

भाषा बहुत ही महत्वपूर्ण है। हमारे दिन–प्रतिदिन के लगभग सारे कार्य भाषा पर ही निर्भर हैं। भाषा हर वक्त हमारे साथ है चाहे हम किसी से बातचीत कर रहे हों या फिर चुपचाप बैठे हो, भाषा हर पल हमारे साथ होती है। भाषा के बिना जीवन असंभव सा प्रतीत होने लगता है।

टिप्पणी

प्रथम भाषा : बच्चे की प्रथम भाषा वह भाषा है जो वह जन्म लेने के बाद सबसे पहले सीखता एवं बोलता है। जब बच्चा जन्म लेता है तो उसके लिए सब कुछ नया होता है। जन्म लेने के बाद वह अपने माता–पिता एवं परिवार के अन्य सदस्यों के संपर्क में आता है और उनके मुख से उच्चरित ध्वनियों को सुनता है। बच्चा इन ध्वनियों को सुनकर समझने का और उनका अनुकरण करने का प्रयास करता है। बच्चा जब बड़ा होता है तो संभव है कि वह अन्य भाषाओं के संपर्क में भी आता है और उनको सीखता है। वह विद्यालय जाता है वहां भी वह अन्य भाषाओं का अध्ययन करता है परंतु वह अपनी प्रथम भाषा घर में ही सीखता है अर्थात बच्चा जो भाषा सर्वप्रथम सीखता है वह उसकी प्रथम भाषा है। मातृभाषा एवं प्रथम भाषा को प्रायः एक–दूसरे का पर्यायवाची समझा जाता है। इस संदर्भ में डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव (2016) का मानना है कि "मातृभाषा एक संस्थागत यथार्थता है। वह व्यक्ति के आत्मीय व्यवहार क्षेत्रों को भाषाई समाज के वृहत्तर सामाजिक संदर्भों से जोड़ने वाली वह संकल्पना है जो व्यक्ति की सामाजिक अस्मिता (सोशल आइडेंटिटी) को निर्धारित करती है। यह अस्मिता ही व्यक्ति को किसी भाषाई समुदाय की एक निश्चित सामाजिक परंपरा एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण से संबद्ध करती है। अतः मातृभाषा न तो बालक की प्रथम भाषा है जिसे बालक भाषा के रूप में सबसे पहले स्वाभाविक व्यापार के रूप में सीखता है और न ही वह स्वभाषा (नैटिव) है जिसके सहारे व्यक्ति अपने बाल्यकाल में सबसे पहले सामाजिक बनता है।" विद्यालय में सिखाई जाने वाली मातृभाषा हो, ऐसा जरूरी नहीं। उदाहरण के लिए हिन्दीभाषी क्षेत्रों में विद्यालयों में मातृभाषा के रूप में हिन्दी सिखाई जाती है परंतु यह आवश्यक नहीं कि बच्चों की प्रथम भाषा या मातृभाषा हिन्दी हो, यह भोजपुरी, हरियाणवी, खड़ी बोली, मैथिली, पंजाबी आदि भी हो सकती है। हमारी शिक्षा नीतियां बच्चे के प्राथमिक वर्षों में मातृभाषा में शिक्षा देने की अपील करती हैं। "स्कूली शिक्षा के दौरान सभी स्तरों पर या कम से कम आरंभिक स्तर तक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा होनी चाहिए।" (एन.सी.एफ. 2000) परंतु अभी ऐसा पूर्णतः संभव नहीं हो सका है।

द्वितीय भाषा : मातृभाषा के अतिरिक्त व्यक्ति अन्य बहुत सी भाषाओं को सीखता है। इनमें से द्वितीय भाषा वह भाषा होती है जो बच्चा अपने परिवार से तो नहीं सीखता परंतु उसके आस–पास के परिवेश में यह भाषा पर्याप्त सुनाई देती है। यह भाषा हमारे परिवेश में बोली जाने वाली भाषा हो सकती है, हमें विद्यालयों में सिखाई जाने वाली भाषा हो सकती है, हमारे किसी मित्र या रिश्तेदार के द्वारा बोलने वाली भाषा हो सकती है, हमारे क्षेत्र के कामकाज की भाषा हो सकती है, हमारे प्रमुख मीडिया संस्थानों की भाषा हो सकती है, हमारे स्वयं के कार्यस्थल के क्षेत्र की भाषा हो सकती है। डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव (2016) के अनुसार, "द्वितीय भाषा, मातृभाषा के साथ की वह सहयोजित भाषा होती है जिसे भाषाई समुदाय का एक सदस्य होने के नाते प्रयोक्ता को सीखनी पड़ती है।" कई बार द्वितीय भाषा को विदेशी भाषा मान लिया जाता है। विदेशी भाषा प्रयोक्ता के भाषाई समुदाय से भिन्न कोई भी भाषा हो सकती है। 'भारतीय भाषाओं का शिक्षण–2005' के अनुसार "वे भाषाएं जो कक्षाओं में पढ़ाई जाती हैं, और जहां उनको बोलने वाले, सीखने वालों के साथ न हों और अजनबी हों तो उन्हें विदेशी भाषाएं कहा जा सकता है।" द्वितीय भाषा एवं विदेशी भाषा में अंतर को इस प्रकार से समझा जा सकता है–

टिप्पणी

- विदेशी भाषा, अपने समाज एवं राष्ट्र से अलग समाज एवं राष्ट्र की संस्कृति को समझने का माध्यम है जबकि द्वितीय भाषा अपने ही समाज की संस्कृति एवं समाज को समझने का दूसरा माध्यम है।
- द्वितीय भाषा को सीखने वाला उस भाषा के माध्यम से अपनी सृजनात्मकता को बढ़ावा देता है जबकि विदेशी भाषा को अधिकांशतः केवल ग्रहण करने के स्तर पर ही अपनाया जाता है।
- विदेशी भाषा सीखने के पीछे किसी प्रकार का सामाजिक दबाव नहीं होता जबकि द्वितीय भाषा को सीखने के लिए काफी सामाजिक दबाव का सामना करना पड़ता है।
- द्वितीय भाषा सामान्यतः अपनी भाषा के जैसी प्रतीत होती है इसलिए उसको सीखने में अधिक कठिनाई नहीं होती इसके विपरीत विदेशी भाषा अपनी भाषा से बिल्कुल भिन्न होती है और इसको सीखने वाले को यह कठिन प्रतीत हो सकती है।
- विदेशी भाषा एवं द्वितीय भाषा को सिखाने की रणनीति भिन्न–भिन्न हो सकती है।

यदि इन विशेषताओं के आधार पर देखा जाए तो हमारे देश में हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के सम्मुख 'अंग्रेजी' भाषा द्वितीय भाषा है जबकि जर्मन, फ्रेंच, रूसी आदि विदेशी भाषा है। हिन्दीभाषी समाज के लिए अंग्रेजी भाषा, द्वितीय भाषा के रूप में उभर कर आई है परंतु यह आवश्यक नहीं कि हिन्दीभाषी क्षेत्र के लिए केवल अंग्रेजी ही द्वितीय भाषा है, अन्य भारतीय भाषाएं भी इसका विकल्प हो सकती हैं। इसी प्रकार अन्य भारतीय भाषाओं के लिए भी अंग्रेजी, हिन्दी या अन्य कोई भारतीय भाषा द्वितीय भाषा हो सकती है।

हिन्दीभाषी समाज के लिए अंग्रेजी भाषा का द्वितीय भाषा के रूप में वर्चस्व देखा जा सकता है। यहां पर बड़े पैमाने पर अंग्रेजी भाषा का प्रयोग होता है, चाहे वह न्यायालय हो, तकनीकी ज्ञान हो, या उच्च शिक्षा हो। इसलिए यहां अंग्रेजी को बहुत अच्छे से, सृजनात्मकता के स्तर पर सीखा जाता है।

1.2.6 घर एवं विद्यालय में बोली जाने वाली भाषा

हम पढ़ चुके हैं कि बच्चा जो भाषा सर्वप्रथम सीख रहा है वह उसकी प्रथम भाषा है या यही उसकी सहज भाषा है। बच्चा जब विद्यालय जाना प्रारम्भ करता है तो वहां पर वह अन्य भाषाएं सीखता है। यह अन्य भाषा बच्चे की मातृभाषा हो सकती है, द्वितीय भाषा भी हो सकती है या विदेशी भाषा भी हो सकती है। इनमें से कोई दो या तीन भी एक साथ सिखाई जा सकती हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि बच्चा तो भाषा घर पर ही सीख लेता है तो उसको विद्यालय में भाषा क्यों सिखाई जाती है? इस प्रश्न पर विचार करने पर हम निम्नलिखित विमर्श तक पहुंच सकते हैं–

- सर्वप्रथम बच्चा घर पर केवल अपनी प्रथम भाषा ही सीखता है, इसके अलावा वह अन्य भाषाओं को विद्यालय से सीखता है।
- घर पर बोली जाने वाली भाषा बहुत ही अनौपचारिक होती है जबकि औपचारिक भाषा बच्चे को विद्यालय में ही सिखाई जाती है।

टिप्पणी

- बच्चा भाषा तो घर में सीख लेता है परंतु उस भाषा का कहां और कैसे प्रयोग करना है यह बच्चा विद्यालय से सीखता है।
- बच्चों को अन्य विषयों का ज्ञान प्रदान करने के लिए विद्यालयों में भाषा का शिक्षण आवश्यक है।
- विद्यालय में सीखी जाने वाली भाषा बच्चे के ज्ञान का विस्तार करती है। यह भाषा न केवल अन्य विषयों से उसका परिचय करवाती है बल्कि ये साहित्य तक भी बच्चों की पहुंच को सुनिश्चित करती है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. "विचारों को ध्वयन्यात्मक शब्दों द्वारा प्रकट करने का साधन ही भाषा है।" यह किसका कथन है?

   (क) क्रोचे (ख) स्वीट

   (ग) ब्लॉक एवं ट्रागोर (घ) कामता प्रसाद गुरु

2. व्यावहारिक रूप से भाषा के कितने रूप हैं?

   (क) दो (ख) तीन

   (ग) चार (घ) पांच

3. निम्न में से 'बोली' किसको कहा गया है?

   (क) हिन्दी (ख) अंग्रेजी

   (ग) अवधी (घ) उर्दू

4. कोई भाषा जब प्रयोग की दृष्टि से सर्वोत्तम हो और निश्चित पैमाने के अनुसार लिखी जाती हो, वह कौन–सी भाषा कहलाती है?

   (क) प्रथम भाषा (ख) द्वितीय भाषा

   (ग) विदेशी भाषा (घ) मानक भाषा

1.3 भाषिक विकास की रणनीतियां

भारत में अनेक भाषाएं बोली–सुनी जाती हैं। द्विभाषावाद से अभिप्राय दो भाषा बोलने से है। बच्चा अपनी प्रथम भाषा के अतिरिक्त अपने आस–पास के परिवेश की भाषा भी सीखता है। अपनी प्रथम भाषा के अलावा बच्चा द्वितीय भाषा अपने ही घर में या फिर विद्यालय में सीखता है। बहुत पहले ऐसा समझा जाता था कि एक से अधिक भाषा सीखने से बच्चे के संज्ञान एवं सीखने पर बुरा प्रभाव पड़ता है। परंतु इस क्षेत्र में हुए अनेक शोधों से यह पता चलता है कि द्विभाषिकता से संज्ञानात्मक विकास पर एवं सीखने पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इस संदर्भ में भारतीय भाषाओं का शिक्षण का राष्ट्रीय फोकस समूह 2005 के अनुसार, "दो भाषा बोलने वाले बच्चे न केवल अन्य भाषाओं पर अच्छा नियंत्रण रखते हैं, बल्कि शैक्षिक स्तर पर भी वे ज्यादा रचनात्मक होते हैं, साथ ही उनमें ज्यादा सामाजिकता और सहिष्णुता भी पाई गई है। भाषिक

खजाने की व्यापक व्यवस्था पर नियंत्रण उन्हें विविध प्रकार की एवं विविध स्तर की सामाजिक परिस्थितियों से कुशलतापूर्वक जूझने में सहायक होता है। साथ ही इस बात के पक्के सबूत मिले हैं कि द्विभाषी बच्चे विविध सोच में ज्यादा अच्छा प्रदर्शन करते हैं।"

अधिकांश व्यक्तियों के लिए, पहली सीखी हुई भाषा– मातृभाषा सबसे बड़ी उपयोग की भाषा भी है, इसके विपरीत – दूसरी भाषाएं आमतौर पर उपयोग के संदर्भ में द्वितीयक हैं, अर्थात् सहायक भाषाएं। लेकिन व्यवहार में, इस बात से कोई मतलब नहीं है कि कोई व्यक्ति कितनी भाषाओं का उपयोग करता है।

टिप्पणी

1.3.1 द्विभाषावाद एवं बहुभाषावाद

द्विभाषिकता एक भाषिक स्थिति है जबकि द्विभाषी होना भाषा प्रयोक्ता पर निर्भर करता है। अगर कोई राष्ट्र द्विभाषी हो तो यह आवश्यक नहीं कि वहां के सभी लोग दो भाषाएं बोलने वाले हो। हमारे देश में ऐसे बहुत से लोग मिलेंगे जो न तो हिन्दी बोलते हैं न ही अंग्रेजी। ऐसे में द्विभाषिकता को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है– स्थितिसापेक्ष एवं प्रयोक्तासापेक्ष। "स्थितिसापेक्ष द्विभाषिकता, राष्ट्र के स्तर पर देखी जा सकती है जिसमें प्रयोक्ता को द्विभाषिक होना अनिवार्य नहीं होता। इसके विपरीत प्रयोक्तासापेक्ष द्विभाषिकता में व्यक्ति दो भाषाओं में पूर्ण अथवा आंशिक दक्षता रखता है।" (डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, 1992)

द्विभाषा को भी हम दो स्तरों पर देख सकते हैं– सामान्य द्विभाषिकता एवं शिक्षासापेक्ष द्विभाषिकता। सामान्य द्विभाषिकता में हमारे रोजमर्रा के जीवन में बोली जाने वाली दो भाषाओं ओ शामिल किया जाता है। इनमें एक तो मातृभाषा होती है एवं दूसरी भाषा प्रायः मातृभाषा से प्रभावित होती है। उदाहरण के लिए जब मराठी मातृभाषी, हिन्दी भाषा को अपनाते हैं तो वह 'बंबइया हिन्दी' बन जाती है। इसी प्रकार जब बंगाली मातृभाषी, हिन्दी भाषा बोलते हैं तो हिन्दी के स्वरूप में बहुत परिवर्तन आ जाता है। यहां पर अन्य भाषा का प्रयोग बोलने में सुनने तक ही सीमित रहता है। इसके विपरीत शिक्षा सापेक्ष द्विभाषिकता वह है जो विद्यालयों में सिखाई जाती है। इसमें बच्चा दो भाषाएं इस प्रकार सीखता है कि वह औपचारिक रूप से इनका प्रयोग कर सके। इस प्रकार की द्विभाषिकता में दोनों ही भाषाएं मानक रूप में सीखी जाती हैं। यहां अन्य भाषा को बोलने एवं सुनने के साथ–साथ पढ़ने–लिखने के स्तर पर सीखा जाता है।

भाषाओं की सामाजिकता के अनुसार भी द्विभाषिकता को दो स्तरों पर बांटा जा सकता है– व्यक्तिपरक द्विभाषिकता एवं समुदायपरक द्विभाषिकता। (डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, 1997) व्यक्तिपरक द्विभाषिकता में व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताओं के कारण दूसरी भाषा को सीखता है। उदाहरण के लिए यदि कोई हिन्दीभाषी जर्मन, फ्रेंच जैसी अन्य भाषा सीखता है तो यह व्यक्तिपरक द्विभाषिकता की श्रेणी में आएगी। इसके विपरीत समुदायपरक द्विभाषिकता में व्यक्ति अन्य भाषा को अपने समाज में बेहतर सम्प्रेषण करने के लिए सीखता है। इसको सीखने का सामाजिक दवाब होने के कारण ही व्यक्ति अन्य भाषा को अपनाता है। उदाहरण के लिए जब हिन्दीभाषी अंग्रेजी भाषा सीखता है तो वह व्यक्तिगत इच्छा से नहीं अपितु समाज में उसके प्रचलन के कारण उसको वो भाषा सीखनी ही पड़ती है जिससे वह उच्च भाषा एवं तकनीकी ज्ञान प्राप्त कर सके।

टिप्पणी

डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव ने द्विभाषिकता के संदर्भ में मातृभाषा के अतिरिक्त सीखी जाने वाली अन्य भाषा के चार प्रकार बताए हैं– सहायक भाषा, संपूरक भाषा, परिपूरक भाषा एवं समतुल्य भाषा।

सहायक भाषा : जब अन्य सीखी जाने वाली भाषा सामान्य बोल–चाल के लिए प्रयोग न की जाए और केवल ज्ञान प्राप्त करने के माध्यम के रूप में स्वीकार की जाए तो ऐसी भाषा को सहायक भाषा कहा जाता है। इस प्रयोजन से सीखी गई भाषा को 'पुस्तकालय भाषा' भी कहा जाता है।

संपूरक भाषा : जब कोई सीखी गई भाषा बेहद सीमित संदर्भों में प्रयोग की जाए तो उसको संपूरक भाषा कहा जाता है। पर्यटन के लिए सीखी गई भाषा को संपूरक भाषा कहा जा सकता है।

परिपूरक भाषा : जब कोई अन्य भाषा किसी भाषा समाज के सीमित परंतु निर्धारित सामाजिक संदर्भों में प्रयोग की जाती है तो उसको परिपूरक भाषा कहा जाता है। भारत के संदर्भ में हिन्दीभाषियों के लिए यह अंग्रेजी भाषा हो सकती है और अहिन्दी भाषियों के लिए यह हिन्दी हो सकती है।

समतुल्य भाषा : जब कोई अन्य भाषा को मातृभाषा के स्तर तक सीख कर प्रयोग किया जाने लगे तो वह भाषा समतुल्य भाषा बन जाती है। यह द्विभाषिकता की आदर्श स्थिति कही जा सकती है।

अन्य भाषा शिक्षण के उद्देश्य

विभिन्न व्यक्तियों द्वारा अन्य भाषा सीखने के उद्देश्य भी भिन्न–भिन्न हो सकते हैं। इनमें से कुछ उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

- **साहित्य पढ़ने के लिए** : किसी भाषा की किसी प्रसिद्ध रचना को पढ़ने के लिए कई बार अन्य भाषा सीखी जाती है। कहा जाता है कि देवकीनंदन खत्री के उपन्यास 'चद्रकांता' को पढ़ने के लिए बहुत से अहिन्दी भाषियों ने हिन्दी भाषा सीखी थी।
- **नौकरी पाने के लिए** : कई बार किसी नौकरी को पाने के लिए भी व्यक्ति अन्य भाषा सीखता है। जैसे अनुवादक की नौकरी के लिए व्यक्ति को दो भाषाएं सीखनी ही पड़ेंगी। इसी प्रकार यदि नौकरी किसी अन्य स्थान पर है तो व्यक्ति को वहां की भाषा सीखनी पड़ती है।
- **संपर्क साधने के लिए** : यदि आपको किसी अन्य राज्य या देश में लंबे समय के लिए रुकना हो तो व्यक्तियों से संपर्क के लिए आपको वहां की भाषा सीखनी पड़ती है अन्यथा सम्प्रेषण में समस्या होती है।
- **व्यक्तित्व के विकास के लिए** : कई बार स्वयं के विकास के लिए भी अन्य भाषा सीखनी पड़ती है। अक्सर गायक या अभिनेता, अन्य भाषाओं के सिनेमा से जुड़ने के लिए कई भाषाएं सीख लेते हैं। इससे उनको प्राप्त अवसरों में वृद्धि होती है।
- **स्व–इच्छा के कारण** : कोई व्यक्ति अन्य भाषा इसलिए भी सीख सकता है क्योंकि कोई भाषा विशेष सीखना उसका शौक हो सकता है।

बहुभाषावाद

टिप्पणी

भारतीय शैक्षिक नीतियों में बहुभाषावाद को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। बहुभाषावाद हमारे भारतीय समाज का एक अटूट हिस्सा है। हम सब बहुभाषी हैं और हमारा बहुभाषी होना हमें अपनी विभिन्नताओं को समझने में मदद करता है। यह हमारी अस्मिता से जुड़ा हुआ है। वर्तमान में पूरा विश्व एक–दूसरे से जुड़ा हुआ है। हर देश की आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विरासत एक दूसरे से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकती, ऐसे में एक राष्ट्र, एक भाषा एवं एक संस्कृति की कोई अवधारणा नहीं है। बहुभाषिक व्यक्ति को किसी राष्ट्र के लिए बहुमूल्य संपत्ति माना जाता है। यही बात बच्चों के संदर्भ में भी उतनी ही सत्य है जितनी किसी बड़े व्यक्ति के लिए। विद्यार्थियों को समझने के लिए एवं उनका विद्यालय से रिश्ता कायम करने के लिए उनकी घर की भाषा एवं उनकी स्कूली भाषा के बीच सामंजस्य बिठाने के लिए बहुभाषिकता की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) के अनुसार, "बहुभाषिकता, जो बच्चे की अस्मिता का निर्माण करती है और जो भारत के भाषा–परिदृश्य का विशिष्ट लक्षण है, उसका संसाधन के रूप में उपयोग, कक्षा की कार्यनीति का हिस्सा बनाना तथा उसे लक्ष्य के रूप में रखना रचनात्मक भाषा शिक्षक का कार्य है। यह केवल उपलब्ध संसाधन का बेहतर इस्तेमाल नहीं है बल्कि इससे यह भी सुनिश्चित हो सकता है कि हर बच्चा स्वीकार्य और संरक्षित महसूस करे और भाषिक पृष्ठभूमि के आधार पर किसी को पीछे न छोड़ा जाए।"

बच्चों के पास उनकी मातृभाषा है, अपने परिवेश के आस–पास की भाषा से भी वो जुड़े होते हैं। हो सकता है कि विद्यालय में वो कोई अन्य भाषा सीखें। अब इन सभी भाषाओं को मजबूती प्रदान करने की आवश्यकता है। उनकी अपनी भाषा को और अधिक मजबूत बनाया जाए एवं उनकी और दूसरी भाषा के बीच एक पुल बनाया जाए। इस तरह विद्यार्थी की बहुभाषिकता को मजबूत बनाया जाए जिससे वह सहजता से शिक्षा ग्रहण कर सके।

हम लिखना–पढ़ना एक ही बार सीखते हैं इसलिए मातृभाषीय कौशल का विकास किया जाए। एक बार मातृभाषा अच्छे से सीखने के बाद अन्य भाषाओं में पढ़ना लिखना आसान हो जाता है।

बच्चे की भाषा

अधिकांश बच्चे जब स्कूल आते हैं तो बहुत सी भाषा सीख कर आते हैं। स्कूल आने से पहले बच्चा लगभग पांच हजार से अधिक शब्दों को सीखकर आता है। बहुत से शोध एवं अध्ययन ये बताते हैं कि बहुभाषिकता का हमारे संज्ञानात्मक विकास, सामाजिक सहनशीलता एवं शैक्षिक चिंतन से सकारात्मक संबंध होता है। भाषा वैज्ञानिकों का मानना है कि वे सभी भाषाएं जो हम बोलते हैं चाहे वह खिचड़ी भाषा हो या आदिवासी भाषा, ये सभी वैज्ञानिक रूप से एक समान होती हैं। भाषाएं एक–दूसरे के संपर्क में आकर फलती–फूलती हैं और साथ ही अपनी विशेष पहचान भी बनाए रखती हैं। बहुभाषी कक्षा में सभी बच्चों का भाषा का सम्मान किया जाना चाहिए एवं यह प्रयास करना चाहिए कि कक्षा में व्याप्त इस भाषायी भिन्नता को शिक्षण विधियों का हिस्सा मानकर भाषा सिखाई जाए। भारतीय भाषाओं का शिक्षण का राष्ट्रीय फोकस समूह 2005 के अनुसार, "बहुभाषी कक्षाएं जो कि भारत में सामान्यतः बहुतायत में होती हैं,

उन्हें शिक्षा में अवरोधन के बजाय, संसाधन के तौर पर ही देखा जाना चाहिए। शिक्षकों को कक्षाओं में महज पढ़ाने की जगह नहीं बल्कि सीखने की जगह के रूप में भी लेना चाहिए। बहुभाषी व बहुभाषी–सांस्कृतिक कक्षाएं भाषिक व सांस्कृतिक विविधता के प्रति सकारात्मक प्रवृत्ति उत्पन्न करने में सहायक सिद्ध हो सकती है।"

टिप्पणी

अब हम बहुभाषिकता को थोड़ा विशिष्ट संदर्भों में देखने का प्रयास करेंगे।

बहुभाषिकता एवं अल्पसंख्यक भाषाएं

जो भाषाएं बहुत ही कम लोगों द्वारा एक सीमित क्षेत्र में बोली जाती हैं वह अल्पसंख्यक भाषा है। प्रायः यह देखा गया है कि जो बच्चे अल्पसंख्यक भाषिक समूहों से आते हैं उनका विद्यालय तक आना नामुमकिन ही होता है और यदि ऐसे कुछ बच्चे विद्यालय तक पहुंच भी जाते हैं तो वे भाषायी ताल–मेल नहीं बैठा पाते और शीघ्र ही विद्यालय से निकल जाते हैं। ऐसे बच्चे विद्यालय में अलगाव सा महसूस करने लगते हैं इसलिए यह आवश्यक है कि उन बच्चों की भाषा को भी सम्मान दिया जाए। उनको उनकी मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा दी जाए। मुख्यतः बहुभाषिकता की बात ऐसे ही वर्ग को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए की गई है। अल्पसंख्यक भाषा आयोग के अनुसार कई ऐसी भाषाएं जो अल्पसंख्यक नहीं हैं फिर भी शिक्षा की मुख्य धारा में शामिल नहीं हैं।

बहुभाषिकता एवं अंग्रेजी

शिक्षा नीतियां यह कहती हैं कि प्राथमिक शिक्षण बच्चे को अपनी मातृभाषा में ही दिया जाना चाहिए। लेकिन हम देख सकते हैं कि प्राथमिक एवं पूर्व–प्राथमिक कक्षाओं से ही अंग्रेजी का बोलबाला हो जाता है। अन्य विषयों को सिखाने के लिए भी अंग्रेजी को माध्यम के रूप में प्रयोग किया जाता है। शिक्षक अंग्रेजी पढ़ाते समय भी अनुवाद एवं व्याख्या करते हैं और अंग्रेजी की समझ विकसित करने के लिए बच्चे की मातृभाषा का प्रयोग निःसंकोच किया जाता है। इससे होता ये है कि बच्चे अंग्रेजी भाषा को ठीक से सीख नहीं पाते। क्रेशन (1985) के अनुसार, "साथ–साथ किया जाने वाला अनुवाद प्रभावी नहीं होता।" बहुभाषिकता को कक्षा में प्रयोग करने के नाम पर ऐसा भी नहीं होना चाहिए कि एक भाषा को सिखाने के लिए दूसरी भाषा का इस प्रकार उपयोग किया जाए कि सीखने वाली भाषा की बोधगम्यता पर इसका नकारात्मक प्रभाव पड़े।

बहुभाषिकता का कक्षा में कैसे प्रयोग किया जाए

किसी भी भाषा को सिखाने के लिए हमें उस भाषा के विज्ञान को समझना पड़ता है। लिखने के लिए मस्तिष्क एवं हाथ का समन्वय होना चाहिए। यह कौशल प्रायः 5–6 वर्ष के बाद ही विकसित होता है। सुनना एवं बोलना भी बहुत महत्वपूर्ण है। बच्चे काफी चीजें पहले से ही जानते हैं पर भाषा उनको एक नया विस्तार देती है। जैसे ठोस, तरल एवं गैस की अवधारणा को बच्चे पहले से ही जानते हैं लेकिन मातृभाषा में बेहतर समझाए जा सकते हैं। मातृभाषा के जरिए पारिभाषिक शब्दों का आदान–प्रदान होता है। दूसरी–तीसरी भाषा भले ही जुड़ जाए पर संकल्पनाओं का स्पष्टीकरण मातृभाषा के सहयोग से किया जाना चाहिए यदि आवश्यक हो तो। बच्चे अपनी मातृभाषा के जरिए अन्य भाषाओं को भी सीखने लगते हैं। हम लोग वही सुनते एवं समझते हैं जिनका हमको पहले से ज्ञान नहीं है। जो पहले से जानते हैं वह सब साधारण सा

प्रतीत होने लगता है। रमाकान्त अग्निहोत्री (1995) बहुभाषीय शिक्षण पद्धति के संबंध में लिखते हैं कि "बच्चों को उपलब्ध संवाद तथा इनका नए एवं भाषा–रहित संवाद के साथ पारस्परिक व्यवहार इस नवीन भाषा प्रशिक्षण पद्धति का मुख्य केंद्र–बिन्दु होगा।"

बहुभाषिकता एवं त्रिभाषा सूत्र

टिप्पणी

राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1964–66) ने भारत की बहुभाषिकता एवं भाषीय जटिलताओं को देखते हुए त्रि–भाषा सूत्र को अपनाने की सिफारिश दी। इसके बाद 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने त्रिभाषा सूत्र को अपनाने पर जोर डाला। 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने 1968 की शिक्षा नीति में दिए गए भाषा संबंधी प्रस्तावों का समर्थन किया था। 1986 की शिक्षा नीति में भाषा के विकास के प्रश्न पर बेहद गंभीरता से विचार किया गया। एनसीएफ 2005 में भी त्रिभाषा सूत्र को उसके मूलभाव के साथ लागू किए जाने की सिफारिश की गई जिससे बहुभाषी देश में बहुभाषी संवाद के माहौल को बढ़ावा दे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी संवैधानिक प्रावधानों, बहुभाषावाद एवं राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने की जरूरत को ध्यान में रखते हुए त्रिभाषा सूत्र को जारी रखने की सिफारिश की है। 1968 की शिक्षा नीति के त्रिभाषा सूत्र के अनुसार विद्यार्थियों को तीन भाषाएं इस प्रकार से सिखाई जाए–

- स्कूल में पहली भाषा जो पढ़ाई जाए वह मातृभाषा हो या क्षेत्रीय भाषा।
- द्वितीय भाषा
  - हिन्दीभाषी राज्यों में द्वितीय भाषा कोई भी अन्य आधुनिक भाषा हो या अंग्रेजी, और
  - गैर हिन्दीभाषी राज्यों में द्वितीय भाषा हिन्दी या अंग्रेजी होगी।
- तृतीय भाषा
  - हिन्दीभाषी राज्यों में तीसरी भाषा अंग्रेजी होगी या एक आधुनिक भारतीय भाषा जो द्वितीय भाषा के रूप में न पढ़ी जा रही हो।
  - गैर हिन्दीभाषी राज्यों में तीसरी भाषा अंग्रेजी होगी या एक आधुनिक भारतीय भाषा जो द्वितीय भाषा के रूप में न पढ़ी जा रही हो।

त्रिभाषा सूत्र एक रणनीति है। इसके द्वारा मातृभाषा, स्थानीय, शास्त्रीय एवं विदेशी भाषाओं के अध्ययन के लिए स्थिति तैयार करने का प्रयास किया गया है। हालांकि राज्य इस त्रिभाषा सूत्र के अलावा भी किसी अन्य भाषा को शिक्षण में शामिल करने के लिए स्वतंत्र थे। 1953 में यूनेस्को ने यह घोषणा की कि बच्चे की मातृभाषा उसकी शिक्षा के लिए सर्वोत्तम माध्यम है। उसके बाद से तमाम समूह अपनी–अपनी भाषाओं को मान्यता दिलवाने एवं उसको संविधान की आठवीं सूची में स्थान दिलवाने के लिए उठ खड़े हुए।

त्रिभाषा सूत्र के अनुसार बच्चे की प्राथमिक शिक्षा दो भाषाओं में होनी चाहिए एवं इसका इस प्रकार से विस्तार किया जाना चाहिए कि बाद में यह बहुभाषिकता का रूप ले सके। स्कूल का सर्वप्रथम दायित्व यही बनता है कि वह बच्चे की प्रथम भाषा को स्कूल की भाषा से जोड़े ताकि बच्चा प्रथम भाषा को छोड़े बिना ही अन्य भाषा तक आसानी से पहुंच सके। इस प्रकार सभी भाषाओं को एक दूसरे का पूरक बनाया जा

टिप्पणी

सकता है। यूनेस्को के शैक्षणिक आधार पत्र (2003) के अनुसार आरंभिक शिक्षण के लिए मातृभाषा अत्यंत आवश्यक है और जहां तक बरकरार रखा जा सके, रखा जाना चाहिए। भारतीय भाषाओं का शिक्षण राष्ट्रीय फोकस समूह (2005) के अनुसार "मातृभाषा में शिक्षा कक्षा में पढ़ाई को समृद्ध करने में सुविधा होगी, शिक्षार्थियों की अधिकाधिक प्रतिभागिता होगी और बेहतर परिणाम निकलेंगे। इस उद्देश्य के लिए पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध करवाई जाएं। सभी में मातृभाषा में शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण सुनिश्चित किया जाए ताकि शिक्षार्थी वह माध्यम अपनाने में संकोच न करे जिसमें वह आसानी से समझ सके।"

त्रिभाषा सूत्र को लागू करने की मुख्य समस्या मातृभाषा एवं क्षेत्रीय भाषा के अंतर को नजरअंदाज कर देना है। ऐसे में यदि क्षेत्रीय भाषा बच्चे की मातृभाषा नहीं है तो उसकी प्रथम दो वर्ष की शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो सकती है और तीसरी कक्षा के बाद से क्षेत्रीय भाषा को माध्यम के रूप में अपनाया जाएगा। (एनसीएफ 2000) राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी यह माना गया है कि मातृभाषा एवं स्थानीय भाषा अलग हो सकती है। इसलिए जहां तक संभव हो, कम से कम कक्षा पांच तक लेकिन बेहतर होगा यदि कक्षा आठ तक शिक्षा का माध्यम बच्चे के घर की भाषा/मातृभाषा/स्थानीय भाषा/क्षेत्रीय भाषा में हो।

बहुभाषिकता की चुनौतियां

बहुभाषिकता की निम्न चुनौतियां हैं–

- भाषा को भाषा के रूप में पढ़ाने में एवं भाषा को माध्यम के रूप में पढ़ाने में अंतर होता है। अन्य विषय भी भाषा पढ़ाने का एक माध्यम हो सकता है।
- बहुभाषिकता की दूसरी समस्या लिपि की आती है। उदाहरण के लिए जेमी भाषा के लिए रोमन लिपि को चुना गया है। इस प्रक्रिया में बच्चे 'ए' से 'जेड' तक सिखाएंगे जबकि जेमी में ये सारे अक्षर इस्तेमाल में नहीं आते।
- विद्यालयों में भाषा के पढ़ने–लिखने पर जितना जोर दिया जाता है उतना बोलने एवं सुनने पर नहीं दिया जाता। इससे भाषाओं को सीखने की चुनौतियां बढ़ जाती हैं।
- बहुभाषिकता में एक मुख्य समस्या शिक्षण–अधिगम सामग्री के चुनाव की है। कई बार पाठ्यपुस्तकों में दिए गए उदाहरण बहु–सांस्कृतिक संदर्भों में नहीं होते जिससे भिन्न संस्कृति के बच्चों की समझ विकसित करने में मुश्किलों का सामना करना पड़ता है।
- भाषा शिक्षकों की नियुक्ति ध्यानपूर्वक करनी चाहिए। शोध यह बताते हैं कि भाषा पढ़ाने के लिए किसी भी विषय के अध्यापक को दे दी जाती है। ऐसे में बच्चों के भाषा ज्ञान पर क्या प्रभाव पड़ेगा यह आप सोच सकते हैं।
- शहरों में तो प्राथमिक शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी हो, इस बात पर पूरा ध्यान दिया जाता है। ऐसे में बच्चे अपनी मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाते। इस बात के प्रयास किए जाएं कि मातृभाषा में शिक्षा प्रदान की जाए और बच्चे के शैक्षिक आधार को मजबूत किया जाए।

- कक्षा में एक भाषा को पढ़ाते हुए उसको दूसरी भाषा से अवश्य जोड़ा जाए जिससे बच्चे बहुभाषी बन सके। आज हम देखते हैं कि बहुत सारे शब्द कक्षा से विलुप्त होते जा रहे हैं जैसे–खेत–खलिहान, चिट्ठी इत्यादि।

1.3.2 मौखिक भाषा पद्धति के लिए रणनीतियां

टिप्पणी

भाषा के मौखिक और लिखित रूप दोनों ही महत्वपूर्ण हैं। परंतु भाषा के मौखिक रूप को ही उसका सहज रूप माना जाता है। सभी व्यक्ति सर्वप्रथम बोलचाल की भाषा सीखते हैं उसके बाद ही लिखित रूप को सीखते हैं। यही कारण है कि अनेक विद्वान बोलचाल की भाषा को भाषा का प्रथम रूप मानते हैं और लिखित भाषा को द्वितीय रूप मानते हैं।

विद्यालयों में मौखिक भाषा का स्वरूप

हमारे विद्यालयों में अक्सर 'बात करना' गलत समझा जाता है। जब कोई शिक्षक कक्षा में पढ़ा रहा होता है तो वह यह उम्मीद करता है कि उसके विद्यार्थी चुपचाप बैठे। यदि कक्षा में विद्यार्थी बात करते हैं तो यह समझा जाता है कि वे ठीक से पढ़ाई नहीं कर रहे हैं। ऐसे में प्रश्न यह उठता है कि क्या बातचीत करना इतना खराब है? क्या बात करने को कक्षा में किसी संसाधन के रूप में उपयोग नहीं किया जा सकता? कृष्ण कुमार (1996) शिक्षा में बातचीत के महत्व को रेखांकित करते हुए लिखते हैं–"नर्सरी व प्राइमरी स्कूल के बच्चों के लिए बातचीत करना सीखने और सीखी हुई चीज को सुदृढ़ बनाने का एक बुनियादी माध्यम है। सच तो यह है कि ऐसे अध्यापक, जो बच्चों को बात नहीं करने नहीं देते, किताबों व अन्य सामाग्री के लिए पैसे की कमी की शिकायत करने के हकदार नहीं हैं। वे पहले ही एक ऐसा मूल्यवान साधन बेकार जाने दे रहे हैं जिसके लिए कोई पैसा खर्च नहीं करना पड़ता।"

बच्चों के कक्षा में संवादों के बीच अपार संभावनाएं छिपी रहती हैं। अधिकतर यह माना जाता है कि शिक्षक का काम बच्चों को निर्देश देना है न कि उनकी बातों को सुनना। इसलिए अधिकांश शिक्षक बच्चों के बात करने को संसाधन के रूप में नहीं अपितु अड़चन के रूप में देखते हैं। बच्चे जब बात करते हैं तो वे निम्नलिखित क्रियाएं करते हुए दिखते हैं–

- किसी ऐसी चीज पर ध्यान देना जो किसी की नजर में नहीं आई हो।
- उस वस्तु का बारीकी से निरीक्षण करना।
- अपने निरीक्षण को किसी अन्य के साथ बांटना।
- दूसरे के निरीक्षण को सुनना और उस पर अपनी राय व्यक्त करना।
- अपने साथियों से किसी मुद्दे पर तर्क–वितर्क करना।
- किसी की बात सुनकर अपने किसी पिछले अनुभव को याद करना।
- दूसरों की बातों को सुनकर कल्पना करना।
- स्वयं की भावनाओं की कल्पना करना।

इस प्रकार की अनेक संभावनाएं बच्चों की बातचीत के भीतर छिपी होती हैं। उपरोक्त लिखित सभी बातें बच्चों की कल्पनाशक्ति एवं तर्क क्षमता के विकास से जुड़ी हुई हैं।

टिप्पणी

मौखिक भाषा के विकास के लिए रणनीतियां

किसी भी भाषा को अच्छे से सीखने के लिए भाषा के चारों कौशलों में दक्ष होना आवश्यक माना जाता है। विद्यालयों में सामान्यतः भाषा के पढ़ने एवं लिखने पर अधिक जोर दिया जाता है परंतु बोलने एवं सुनने पर नहीं। आमतौर पर बच्चे घर से ही मौखिक भाषा सीखते हैं परंतु विद्यालय में मौखिक भाषा सीखने के बहुत से अवसर होते हैं जिनको प्रायः नजरअंदाज कर दिया जाता है। ऐसे में कुछ बातों का ध्यान रखकर बच्चों में मौखिक क्षमता के विकास को सुनिश्चित किया जा सकता है।

- कक्षा में बच्चों को जितना संभव हो सके अपने बारे में बात करने का अवसर दिया जाना चाहिए। बच्चे अपने बारे में बताने, अपने अनुभव बताने एवं अपने साथ घटी घटनाओं को रुचिपूर्वक बताते हैं। इसके लिए उनको प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। बच्चों की पढ़ाई एवं उनकी व्यक्तिगत जिंदगी गहराई से एक–दूसरे से जुड़ी होती है। अधिकांश विद्यालयों में केवल पाठ्यपुस्तकों के पठन–पाठन पर जोर दिया जाता है। बच्चों के लिए ये काफी बोझिल सा प्रतीत होता है। बच्चे अपनी जिंदगी और विद्यालय में पढ़ी गई चीजों को बहुत अलग पाते हैं इसलिए वे धीरे–धीरे नीरस महसूस करने लगते हैं। इसलिए बच्चों को कक्षा में पढ़ाते हुए उनके अनुभव बताने का मौका दिया जाए जिससे वह उत्साहित महसूस कर सकेंगे।
- बच्चों के उनके व्यक्तिगत अनुभव के साथ–साथ उनको उनके विद्यालयी अनुभव भी सांझा करने का मौका देना चाहिए। बच्चे विद्यालय एवं आस–पास की चीजें देखकर उन पर अपना मत प्रकट कर सकते हैं, उनकी आलोचना कर सकते हैं, उनके बारे में तर्क कर सकते हैं। कृष्ण कुमार (1996) के अनुसार, "स्कूल का परिवेश खोजबीन और निरीक्षण का एक शानदार माध्यम है। स्कूल कहीं भी हो, उसके इर्द–गिर्द ऐसी कई छोटी–छोटी चीजें होती हैं जिनसे विस्तृत जांच और बहस की सामग्री मिलती है।"
- मौखिक भाषा को बढ़ावा देने के लिए एक अन्य गतिविधि किसी तस्वीर या चित्र को दिखा कर उस पर चर्चा करवाना हो सकता है। बच्चों को किसी भी अखबार या पत्रिका में से, किसी पुस्तक में से, किसी कैलेंडर आदि में से कोई भी चित्र दिखाकर इस पर चर्चा करवाई जा सकती है। बच्चे इस चित्र में से कुछ ढूंढ़ कर बता सकते हैं, किसी बात पर तर्क कर सकते हैं, किसी बात से चित्र का संबंध स्थापित कर सकते हैं। ऐसा करते हुए ध्यान रखा जाए कि ये चर्चा जितनी अनौपचारिक रूप से करवाई जाएगी उसके परिणाम उतने ही संतोषजनक होंगे।
- बच्चों से अभिनय करवाकर भी उनकी मौखिक भाषा का विकास किया जा सकता है। बच्चे जब कोई भूमिका निर्वाह करते हैं तो वह बातचीत एवं हाव–भाव के जरिए प्रस्तुति करते हैं। बच्चों को निश्चित भूमिकाएं देकर उन्हें संवाद याद करने को दिया जाता है। अभिनय के माध्यम से बच्चों में विभिन्न प्रकार के कौशलों का विकास किया जा सकता है।

1.3.3 कहानी सुनाना

टिप्पणी

कहानी सुनना एवं सुनाना हमारी परंपरा का अभिन्न हिस्सा रहा है। जब हम कहानी सुनते हैं तो हमारा ध्यान उसमें घटी घटनाओं और चरित्रों की तरफ भागने लगता है। कई कहानियों का संबंध हमारी काल्पनिकता से होता है। कहानी हमें एक अपरिचित दुनिया में ले जाती है। कहानी सुनते हुए हम उसके घटनाक्रम एवं हर चरित्र के व्यवहार की कल्पना करते हैं। रमाकांत अग्निहोत्री (2008) के अनुसार, "कहानी का संसार ऐसा है जहां न तो व्याकरण के नियम हैं, न गणित का भय, न विज्ञान का डर और न सामाजिक विज्ञान की बोरियत। बच्चे अपनी कल्पना शक्ति से कहानी के कई वैकल्पिक जाल बुनते हैं तथा उसके अधिक से अधिक रोमांचकारी अंत तलाश करते हैं।" कक्षा में कहानी सुनाकर चर्चा करवाना भाषा के विकास से एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। अक्सर कक्षा में कहानी सुनाकर उससे मिलने वाली शिक्षा की चर्चा करवाई जाती है। ऐसे में ऐसी बहुत सारी बातें जो कहानी सुनाने के बाद चर्चा का अहम हिस्सा बन सकती हैं बच्चे उनसे वंचित हो जाते हैं। कहानी में छुपे नैतिक मूल्य का बच्चों के लिए कोई विशेष मूल्य नहीं रह जाता। उनके लिए तो कहानी ही महत्वपूर्ण है। कई बार अध्यापक बच्चों से कहानी स्मरण करने को कह देते हैं। यह बिल्कुल फिजूल की बात है। बच्चे कहानी याद करने का दबाव महसूस करने लगते हैं।

कहानी सुनाते हुए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए–

- कहानी का चयन, विद्यार्थियों के कक्षा स्तर को ध्यान में रखकर करना चाहिए। कहानी का चयन करते हुए उसकी विषय–वस्तु, उसकी भाषा आदि उनके कक्षा स्तर के अनुसार होना चाहिए।
- कक्षा में कहानी को सुनाया जाना चाहिए। कहानी को पढ़ कर सुनाने से उसमें बच्चों की रुचि नहीं रहती, इसलिए कहानी को सुनाया जाना चाहिए।
- शिक्षक को कहानी का अच्छे से ज्ञान होना चाहिए। कहानी को अपने शब्दों में सुनाना चाहिए इससे कहानी और अधिक प्रभावशाली लगती है।
- कहानी सुनाते हुए शिक्षक को स्वयं उसका आनंद लेना चाहिए। कहानी की रोचकता, शिक्षक के कहानी कहने के ढंग पर ही निर्भर करती है।
- कहानी में कुछ प्रसंग मार्मिक होते हैं। ऐसे प्रसंगों को ज्यों का त्यों ही प्रस्तुत करना चाहिए जिससे विद्यार्थी उस कहानी के मर्म को महसूस कर सकें।
- कहानी में मुख्य घटनाक्रमों को जहां तक संभव हो, स्पष्ट रूप से चित्रित किया जाना चाहिए। भाषा सरल होनी चाहिए।
- कहानी सुनाते समय भाषा के प्रवाह एवं आरोह–अवरोह का ध्यान रखना चाहिए।
- कहानी का वर्णन स्वाभाविक होना चाहिए। इसमें बेमतलब की नाटकीयता नहीं होनी चाहिए।
- कहानी उद्देश्यपूर्ण होनी चाहिए। शिक्षक को यह स्पष्ट होना चाहिए कि वह यह कहानी क्यों सुना रहा/रही हैं। कहानी सुनाते हुए इस उद्देश्य को ध्यान में रखना चाहिए।

टिप्पणी

- कहानी कक्षा के स्तर के अनुरूप निरूपित की जानी चाहिए। एक ही कहानी को अलग–अलग स्तरों पर कई बातों को ध्यान में रखकर पढ़ाया जा सकता है।
- कहानी अधिक लंबी नहीं होनी चाहिए। अधिक लंबी कहानी विद्यार्थियों को नीरस प्रतीत होने लगती है। यदि कोई कहानी अधिक लंबी है तो उसको 2–3 भागों में बांटकर पढ़ाया जा सकता है।
- कहानी सुनाते हुए बीच–बीच में कुछ प्रश्न पूछे जा सकते हैं। ये प्रश्न सुनाई गई कहानी के बारे में जांचने के लिए या फिर कहानी के घटनाक्रम को आगे बढ़ाने के लिए पूछे जा सकते हैं।
- कहानी इस प्रकार सुनाई जाए कि कहानी सुनते हुए बच्चे कहानी से अपने आप को जोड़ सकें।

1.3.4 भाषायी कौशल

भाषा कौशलों से अभिप्राय है किसी भी भाषा में काम करने की समर्थता हासिल करना। इनमें चार भाषायी कौशल शामिल हैं– सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना। किसी भी भाषा को सीखने के लिए इन चारों कौशलों में दक्ष होना पड़ता है। किसी व्यक्ति का भाषा ज्ञान इस बात से पता चलता है कि वह किसी भाषा के इन चार कौशलों में कितना समर्थ है। इन कौशलों को हम दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। पहले दो प्रकार के कौशलों (सुनना एवं पढ़ना) को संग्राहक कौशल कह सकते हैं क्योंकि इन कौशलों से भाषा प्रयोक्ता जानकारी को ग्रहण करने का कार्य करता है जबकि अन्य दो कौशल (बोलना एवं लिखना) अभिव्यक्ति से संबंधित हैं इसलिए इनको व्युत्पादक कौशल कहा जाता है। इनके द्वारा भाषा प्रयोक्ता अपनी बात प्रस्तुत करता है।

कहीं–कहीं इन कौशलों को 'प्रधान कौशल' या 'गौण कौशल' या फिर 'सक्रिय कौशल' एवं 'निष्क्रिय कौशल' में विभाजित किया जाता है। यह सही नहीं है। भाषा का हर एक कौशल समान रूप से महत्वपूर्ण है। सुनने एवं पढ़ने का कौशल भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि लिखने एवं पढ़ने का। वर्तमान समय में किसी भी भाषा का लिखने एवं पढ़ने का कौशल भी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है इसलिए इनको गौण मानना सही नहीं है। इसी प्रकार सुनने–पढ़ने के कौशल को क्रियाशील नहीं माना जाता। जबकि यह भी उतने ही क्रियाशील हैं जितने बोलना और लिखना। हालांकि सुनने एवं पढ़ने में क्रियाशीलता को हम प्रत्यक्ष रूप से नहीं देख सकते। यह आंतरिक रूप से होती है।

आइए इन पर विस्तार से चर्चा करते हैं–

सुनना (श्रवण कौशल)

सुनना भाषा के चार कौशलों में से एक प्रमुख कौशल है। बच्चों में सुनने के कौशल का विकास बच्चे के जन्म से ही हो जाता है। महाभारत के अनुसार तो जन्म से पहले ही अभिमन्यु ने अपनी मां के गर्भ में होते हुए भी चक्रव्यूह भंग करने की विधि सुन ली थी। जन्म के बाद बच्चे की प्रारम्भिक शिक्षा उसकी श्रवण शक्ति पर ही निर्भर करती है। अपने माता–पिता एवं आस–पास के लोगों द्वारा उच्चरित ध्वनि सुन–सुनकर वह समझ बनाने की कोशिश करता है। विद्यालयों में तो विद्यार्थी अपना आधा समय सुनने में ही

लगाते हैं। परंतु सुनना केवल शारीरिक क्रिया नहीं है बल्कि इसमें एकाग्रता एवं इंद्रियों का संयम होना अत्यंत आवश्यक है। यदि कोई व्यक्ति भाषा सुनते हुए तत्पर एवं सतर्क रहता है तो वह दूसरे व्यक्ति के भावों को बेहतर रूप से समझ सकता है। डॉ. आनंद प्रकाश व्यास (2002) के अनुसार, "श्रवण में किसी कथन को सुनकर, सुनी हुई विषयवस्तु में निहित तथ्य, विचार, भाव के सूत्र को पकड़कर, उस पर चिंतन–मनन करना और तत्पश्चात अपना मंतव्य स्थिर करने के बाद तदनुसार आचरण या व्यवहार करना जैसी क्रमबद्ध प्रक्रियाएं सम्मिलित हैं। संक्षेप में, एक उत्तम श्रोता सुनने के साथ–साथ प्रस्तुत सामग्री के सूत्र को, विचार के विकास को, तथ्य या तर्क बिंदुओं के आशय को समझते हुए अपने पूर्वानुभव के संदर्भ में श्रुत वस्तु का बोधन, विवेचन, विश्लेषण करता है।"

टिप्पणी

शिक्षण की दृष्टि से श्रवण कौशल का विकास विद्यार्थियों में ऐसी क्षमता का विकास करना है जिससे वह किसी बात को ध्यान से सुन सके, उसमें निहित अर्थ को समझ सके, और सुनकर किसी बात का विश्लेषण कर सके। जो विद्यार्थी भाषा को सुनकर ठीक से समझ नहीं पाता उसको बोलने एवं लिखने में भी परेशानी होती है। सुनने के कौशल का विकास करने के लिए कुछ विधियों के उदाहरण दिए गए हैं–

मौखिक अभिव्यक्ति : विद्यार्थी भाषा को जितना अधिक ध्यान से सुनेंगे उतना ही उनका सुनने के कौशल का विकास होगा। मौखिक अभिव्यक्ति के लिए शिक्षक को कक्षा में विद्यार्थियों को बातचीत के पूरे अवसर प्रदान करने चाहिए। ऐसी गतिविधियां करवाई जाएं जिनसे बच्चों को एक दूसरे से बात करने का मौका मिले। इसके अतिरिक्त अपना परिचय देना, अपने परिवार, समाज एवं संस्कृति के बारे में बताना, विद्यालय के बारे में चर्चा करना, किसी समसामयिक विषय को सुनकर उस पर अपने विचार रखना, तर्क–वितर्क करना आदि के माध्यम से विद्यार्थियों के श्रवण कौशल का विकास किया जा सकता है।

- **विभिन्न विधाओं के माध्यम से** : शिक्षक विद्यार्थियों को विभिन्न साहित्यिक विधाओं में से सामग्री का चयन करके सुना सकता है। इनमें कहानी सुनाना, कविता पाठ, संस्मरण या किसी रोचक घटना का वर्णन आदि शामिल हो सकता है। वह किसी कहानी या घटना का थोड़ा वर्णन करते हुए बच्चों से पूरा करने के लिए कह सकता है जिससे बच्चे प्रस्तुत की गई कहानी या घटना वर्णन को ध्यान से सुनेंगे।
- **तकनीकी माध्यम के द्वारा** : श्रवण कौशल को विकसित करने के लिए वर्तमान में तकनीक का सहारा लिया जाता है। इनमें रेडियो, टेलिविजन, कम्प्यूटर जैसे संसाधनों का प्रयोग शामिल है जिनके द्वारा बच्चा तरह–तरह की चीजें सुन कर समझ सकता है। टेलिविजन एवं कम्प्यूटर पर तो वह सुनने के साथ–साथ देख भी सकता है।
- **निर्देशों का पालन करना** : बच्चों को कई बार ऐसी गतिविधियां भी करवाई जा सकती हैं जिनमें उनको दिए गए निर्देशों का पालन करना हो। इससे बच्चे निर्देशों को ध्यान से सुनेंगे और सुनकर दिए गए कार्य को करने का प्रयास करेंगे। इसमें बच्चे ध्यान से सुनने का प्रयत्न करेंगे क्योंकि उनका कार्य करना, उनके ध्यान से सुनने पर ही निर्भर करेगा।

टिप्पणी

इस प्रकार की अनेक गतिविधियों के माध्यम से हम किसी बच्चे के सुनने के कौशल का विकास कर सकते हैं। इसके द्वारा ही बच्चा ध्वनियों में अंतर करना सीखता है। उसकी वाचन क्षमता का विकास भी उसकी सुनने की क्षमता पर निर्भर करता है। किसी की भावाभिव्यक्ति को श्रवण कौशल के माध्यम से ही बेहतर समझा जा सकता है। सुनकर ही कोई व्यक्ति अपनी मूल्यांकन क्षमता का विकास कर सकता है। वह दूसरे के विचारों, भावों एवं तर्कों के आधार पर अपनी राय व्यक्त कर सकता है।

बोलना : बोलना भाषा कौशलों में से एक प्रमुख कौशल है। लगभग हर भाषा में भाषा के लिए प्रयुक्त शब्द के मूल में बोलना ही है जैसे– भाष, वाक, जुबान, lingua आदि। कोई शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ बच्चा अपनी सुनने की क्षमता के कारण अपनी भाषा में बोलना सहज ही सीख लेता है। तीन वर्ष का होते–होते वह अपनी बात दूसरों को समझाने लगता है। डॉ. आनंद प्रकाश व्यास (2002) के अनुसार, "बोलने की कुशलता मनुष्य को एक सामाजिक प्राणी ही नहीं बनाती, अपितु उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा का आधार भी होती है। बोलना व्यक्ति के व्यक्तित्व को उजागर करता है।" यही कारण है कि विद्यालय में बोलने के विकास के लिए हर संभव प्रयत्न किए जाते हैं। वैसे तो बोलना बच्चा घर से ही सीखता है परंतु बौद्धिक स्तर के विकास के लिए विद्यार्थी स्कूल में योजनाबद्ध तरीके से शिक्षा ग्रहण करता है।

बोलने के कौशल का विकास करने के लिए कुछ गतिविधियां इस प्रकार हैं–

सस्वर वाचन : बच्चे से सही उच्चारण करवाना सस्वर वाचन कहलता है। विद्यार्थियों से कक्षा में कविता, कहानी, नाटक एवं उपन्यास का कोई अंश पढ़ने के लिए कहा जा सकता है।

बातचीत : बातचीत बोलने एवं सुनने का अच्छा माध्यम है। इससे न केवल भाषा का विकास होता है बल्कि एक–दूसरे को समझने का मौका भी मिलता है। जब बच्चा विद्यालय जाना प्रारम्भ करता है तो वह एकदम से अपने आप को अभिव्यक्त नहीं कर पाता। ऐसे में शिक्षक को चाहिए कि वह बच्चों को अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करे जिससे बच्चे बात करने में स्वतंत्र महसूस कर सकें।

कहानी सुनाना : कहानी सुनना एवं सुनाना दोनों ही भाषा की मौखिक अभिव्यक्ति के लिए सहायक हैं। बच्चे बड़े चाव से स्वयं कहानी गढ़ते एवं सुनाते हैं। कक्षा में बच्चों को कहानी सुनाने के अवसर दिए जाएं। हो सकता है कि बच्चे अपनी प्रथम भाषा या मातृभाषा में कहानी सुनाए ऐसे में शिक्षक को उनको हतोत्साहित नहीं करना चाहिए। बच्चे के कहानी सुनाते समय शिक्षक को बच्चे के उच्चारण पर विशेष ध्यान देना चाहिए। बोलते समय उसकी त्रुटियों का सुधार करना चाहिए।

चित्र वर्णन : ये गतिविधि कक्षा में बहुत रुचिपूर्ण ढंग से करवाई जा सकती है। किसी भी चित्र को दिखाकर बच्चों से उसका वर्णन करने को कहा जा सकता है। इसमें बच्चे का भाषिक विकास के साथ–साथ बौद्धिक विकास भी होगा।

घटना वर्णन : इसमें बच्चों से आस–पास घटी किसी घटना का वर्णन करने को कहा जा सकता है। इसके साथ ही बच्चे अपने किसी अनुभव, किसी विशेष घटना, कोई त्योहार, कहीं घूमने का अनुभव आदि का वर्णन भी कक्षा में कर सकते हैं। इन सबके लिए शिक्षक को कक्षा में अवसर देने की आवश्यकता है।

वाद–विवाद : वाद–विवाद मौखिक भाषा के विकास के लिए सबसे अच्छा माध्यम माना जाता है। इससे न केवल बोलने की क्षमता अपितु तर्क शक्ति, हाजिरजवाबी एवं विचारों को संक्षिप्त रूप में प्रकट करने का गुण भी विकसित होता है।

किसी भी व्यक्ति की वाणी में स्पष्टता, मधुरता एवं प्रभावशीलता लाने के लिए बोलने के कौशल का विकास करना आवश्यक है। भाषा की इस मौखिक अभिव्यक्ति को भाषा का सहज माध्यम भी कहा जाता है। भावी जीवन यात्रा में सशक्त वाणी मनुष्य को संबल प्रदान करती है। प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री बैलार्ड की मान्यता है कि "मौखिक अभिव्यक्ति की शिक्षा का स्वतंत्र अस्तित्व है.....बालक के लिए उसकी शिक्षा की तैयारी आवश्यक है और ऊंची कक्षाओं में भी इसकी शिक्षा को स्थान मिलना चाहिए।"

टिप्पणी

पढ़ना (वाचन कौशल) : वाचन शब्द 'वच' धातु से बना है जिसका अर्थ है पढ़ना, पाठ करना आदि। संस्कृत भाषा में वाचन के लिए 'पठ' शब्द का प्रयोग भी किया जाता है। अंग्रेजी भाषा में 'रीडिंग' शब्द का प्रयोग किया जाता है। सामान्यतः पढ़ने के कौशल का अर्थ भाषा की लिपि को पहचानकर उसको उच्चरित करने एवं अर्थ ग्रहण करने से लिया जाता है। डॉ. आनंद प्रकाश व्यास (2002) के अनुसार, "पढ़ना एक संश्लिष्ट विकासशील मनोभाषिक क्रिया है जो लिपि–प्रतीकों को पहचान कर उन्हें शब्द और अर्थ में परिवर्तन करने से आरंभ होकर अर्थग्रहण के दौर से गुजरती हुई पाठक को विश्लेषण, चिंतन–मनन के स्तर तक ले जाती है।"

डॉ. व्यास किसी भी पठित सामग्री पर अपनी समझ बनाने के लिए कुछ आवश्यक तत्त्वों की भी बात करते हैं। ये तत्त्व मुख्यतः ऐसे कौशल हैं जो कोई भी पाठक पढ़ते हुए प्रयोग करता है। किसी भी पाठ्य सामग्री को पढ़ने से पहले पाठक पहले से ही अनुमान लगा लेता है कि प्रस्तुत सामग्री में क्या कहा जाएगा। वह इस संदर्भ में पूर्वानुमान लगाता है। उसके बाद जब वह किसी सामग्री को पढ़ना प्रारम्भ करता है तो यह आवश्यक नहीं कि वह उसे पूरे बोध के लिए पढ़े, बल्कि वह अपनी रुचि अनुसार कुछ भाग पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित करता है। वह उन बातों पर ध्यान नहीं देता जिसमें उसकी दिलचस्पी नहीं है। इसके साथ ही वह उस सामग्री में प्रस्तुत मुख्य बात या उसके केन्द्रीय भाव को ग्रहण कर लेता है। सामग्री को पढ़ते हुए पाठक कई बार लेखक के मत एवं दृष्टिकोण को भी समझने का प्रयास करता है। एक कुशल पाठक, लेखक के दृष्टिकोण को सामग्री में दिए गए संकेतों के माध्यम से जान लेता है। इसके अतिरिक्त कई बार पढ़ते हुए कुछ ऐसे शब्द आ जाते हैं जिनका अर्थ हमको नहीं पता होता। लेकिन दी हुई सामग्री के संदर्भ से हम उस शब्द के अर्थ को समझ सकते हैं। संदर्भ अथवा प्रसंग से अर्थ निकालना एक महत्वपूर्ण कौशल है। जब कभी शब्दों के अर्थ नहीं पता होते तो यही कौशल काम आता है। और अंत में एक सजग पाठक लेखक द्वारा प्रयोग की गई प्रोक्तियों का आशय समझने में सक्षम होता है। जैसे लेखक कहता है 'उदाहरण के तौर पर' तब हम समझ जाते हैं कि वह अपनी बात को पुष्ट करने के लिए उदाहरण का सहारा ले रहा है। भाषा शिक्षाविदों ने पठन में प्रयुक्त इन तत्त्वों के चार महत्वपूर्ण प्रकार माने हैं–

- विहंगावलोकन (Skimming)
- सूक्ष्मवीक्षण (Scanning)

टिप्पणी

- द्रुत पठन (Rapid Reading)
- गहन अध्ययन (Study)

विहंगावलोकन : जब किसी सामग्री पर सरसरी दृष्टि से शीघ्रता से यह पता लगा लिया जाता है कि यह सामग्री किस बारे में है तो वह विहंगावलोकन कहलाता है। उदाहरण के लिए जब हम बाजार में किसी पुस्तक को खरीदने जाते हैं तो हम खरीदने से पूर्व उसके पन्ने पलटकर देखते हैं कि वह किस बारे में है। क्या वह हमारे लिए उपयोगी है या नहीं। हम रोज सुबह समाचारपत्र पढ़ने से पहले उसकी मुख्य खबरों को पढ़ने के लिए सरसरी दृष्टि डालते हैं और उसके बाद अपनी रुचि के अनुसार समाचार पढ़ना प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकार विद्यार्थियों को इससे संबंधित कोई कार्य दिया जा सकता है जैसे कोई पाठ्य सामग्री पढ़ने के बाद उसके संबंध में तीन–चार ऐसे कथन दिए जाएं जिनमें उस सामग्री का सार निहित हो। फिर उनसे पाठ्य सामग्री के सार को व्यक्त करता कथन चुनने को कहा जा सकता है। इसमें उनको पूरी सामग्री को सरसरी तौर पर ही पढ़ना पड़ेगा।

सूक्ष्मवीक्षण : सूक्ष्मवीक्षण पाठ्य सामग्री में से किसी विशेष बिन्दु को ढूंढ़ने की प्रक्रिया है। जब हमें किसी विशिष्ट प्रश्न का उत्तर ढूंढ़ना होता है तब हम इस प्रक्रिया से करते हैं। उदाहरण के लिए जब समाचारपत्र में से किसी व्यापारिक समाचार को ढूंढ़कर पढ़ना होता है तब हम इसका प्रयोग करेंगे। इस स्थिति में हमारा सरोकार सम्पूर्ण पाठ्य सामग्री से नहीं होता, हमारा सरोकार केवल सूचना विशेष से होता है।

द्रुत पठन : भाषा शिक्षक का यह दायित्व बनता है कि वह अपने विद्यार्थियों में द्रुत पठन की क्षमता का विकास करे। पठन–शिक्षण के पीछे केवल पढ़ने के कौशल का विकास ही नहीं बल्कि द्रुत पठन का विकास भी लक्ष्य होना चाहिए। पढ़ना केवल विद्यालयी उद्देश्यों की पूर्ति के लिए नहीं होना चाहिए बल्कि पढ़ना विद्यार्थियों की आदत बन जानी चाहिए। वे सीखने और ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील बने रहें। द्रुत पठन सीखने के बाद पढ़ना एक आनंददायी प्रक्रिया बन जाता है।

द्रुत पठन की विशेषताएं

- मौन पठन उद्देश्य के साथ होना चाहिए।
- विद्यार्थी एकाग्र होकर पढ़ना सीख जाते हैं।
- अध्यापक, विद्यार्थियों से प्रश्न पूछ कर निरीक्षण कर सकता है।
- विद्यार्थियों में पढ़ने की आदत विकसित होती है।
- वह समाचार–पत्र पत्रिकाएं एवं ई–शिक्षण के माध्यम से किसी भी स्थान पर पढ़ सकते हैं।

गहन अध्ययन : मानक हिन्दी कोश के अनुसार, अध्ययन से आशय है "किसी विषय के सब अंगों या गूढ़ तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उसे देखना, पढ़ना और समझना।" किसी विषयवस्तु की गहन जानकारी के लिए किया गया पठन ही अध्ययन कहलाता है। गहन अध्ययन में पठन सामग्री में निहित एक–एक विचार का बारीकी से अवलोकन किया जाता है। डॉ. व्यास के अनुसार, "इसमें एक–एक भाव की गहराई में उतरते हैं और उनका बोधन, विश्लेषण, विवेचन, समीक्षण, सराहना, मूल्यांकन करते हैं

और फिर उन्हें समग्रता के स्तर पर समेटते हुए, संश्लेषित करते हुए अपना निष्कर्ष निकालते हैं।"

वाचन कौशल बढ़ाने के लिए कहानी सुनना–सुनाना, कविता सुनना–सुनाना, चित्र वर्णन करना, अनुभवों पर बातचीत करने देना, अभिनय करना जैसी गतिविधियां प्रयोग की जा सकती हैं। वाचन कौशल के माध्यम से विद्यार्थियों में आत्मविश्वास की भावना जागृत होती है। वह न केवल पढ़ना सीखता है बल्कि भाषा का शुद्ध रूप पढ़ना सीखता है। वाचन कौशल के माध्यम से ही वह अपने साथियों से जुड़ना सीखता है। एक दूसरे से बातचीत करके विद्यार्थी नवीन जानकारियां प्राप्त करते हैं।

टिप्पणी

लिखना

मौखिक भाषा की ध्वनियों को विशिष्ट चिह्नों द्वारा लिखित रूप में लिपि के द्वारा व्यक्त किया जाता है। अपने विचारों को लिपिबद्ध करके प्रस्तुत करना ही लेखन कहलता है। लेखन एक कौशल है जिसमें निपुण होने के लिए निरंतर अभ्यास की आवश्यकता होती है। लेखन कौशल के बिना किसी भी भाषा का पूर्ण विकास नहीं हो सकता। डॉ. व्यास के अनुसार, "लेखन कौशल के विकास के लिए दो स्तरों पर शिक्षण–अधिगम की अपेक्षा की जाती है–लेखन कौशल का यांत्रिक पक्ष तथा लेखन कौशल का संप्रेषणात्मक वैचारिक तथा कलात्मक पक्ष। विद्यार्थी प्राथमिक स्तर तक लेखन के यांत्रिक पक्ष में अपेक्षित कुशलता प्राप्त कर लेते हैं, और माध्यमिक स्तर की समाप्ति तक यह अपेक्षित होता है कि विद्यार्थियों ने विराम चिह्नों के उपयोग, प्रयोग, सामग्री की अनुच्छेदों में प्रस्तुति, विभिन्न प्रकार के पत्र लेखन आदि तथा अन्य विषयों की प्रकृति के अनुसार वर्णनात्मक, विचारात्मक अथवा भावात्मक निबंध लेखन तथा गदयांश तथा काव्यांश की व्याख्या करने की योग्यता प्राप्त कर ली होगी।"

लेखन कौशल का विकास

बच्चा सर्वप्रथम मौखिक भाषा सीखता है। सबसे पहले वह ध्वनियों का उच्चारण करना सीखता है। फिर वह शब्दों को बोलना सीखता है और बातचीत करना प्रारम्भ कर देता है। वह बोली गई भाषा को लिपिबद्ध करना नहीं जानता इसके लिए उसे विद्यालय जाना पड़ता है। शिक्षक विद्यालय में योजनाबद्ध तरीके से बच्चे को लिखना सिखाते हैं। लेखन कौशल के विकास के लिए एक शिक्षक को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए–

- लिखते समय बच्चे को सीधा बैठना चाहिए।
- सर्वप्रथम वर्णमाला का अभ्यास करवाना चाहिए।
- शिक्षक को पहले स्वयं लिखकर बच्चे को दिखाना चाहिए और फिर बच्चे को अनुकरण करने के लिए कहना चाहिए।
- बच्चे के लिखने के बाद शिक्षक को उसके लेखन की जांच करनी चाहिए।
- बालक को कलम पकड़ने का तरीका ठीक से बताना चाहिए।
- बच्चे को सुलेख या श्रुतलेख के माध्यम से लिखने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।
- बालक के लेखन कौशल को खेल के माध्यम से भी विकसित किया जा सकता है।

टिप्पणी

- बच्चे के लेखन कौशल के लिए शुद्ध उच्चारण आवश्यक है। अशुद्ध उच्चारण के कारण भी बच्चे के लेखन में त्रुटि उत्पन्न हो सकती है।
- लेखन के लिए व्याकरण का ठीक से ज्ञान होना आवश्यक है। अक्सर व्याकरण ज्ञान ठीक से न होने के कारण विद्यार्थी लिंग, वचन आदि में त्रुटि कर देता है।
- अक्षरों को ठीक न लिख पाने से भी लेखन कौशल का विकास अवरुद्ध होता है।

लेखन कौशल को विकसित करने के लिए शिक्षक निम्नलिखित विधियां अपना सकते हैं–

माण्टेसरी विधि : इस विधि में बच्चा खेल–खेल में ही लिखना सीख जाता है। इसमें गत्ते, लकड़ी या प्लास्टिक आदि के वर्णों का प्रयोग किया जाता है। बालक वर्ण को देखकर उसकी पहचान बनाता है और खेल खेल में ही लिखना सीख जाता है।

स्वतंत्र लेखन विधि : इस विधि में बिना किसी वर्ण को देखे या बिना उसकी नकल किए उसकी अपने मस्तिष्क में बनाई गई छाया के आधार पर ही वर्ण लिखता है। कक्षा में अध्यापक द्वारा दी जाने वाली श्रुतलेख इसी विधि का उदाहरण है।

विश्लेषण विधि : इस विधि में बच्चे को पहले चित्र दिखाया जाता है फिर चित्र के नीचे उस वस्तु का नाम लिख दिया जाता है। उसके बाद बच्चे का ध्यान चित्र के पहले वर्ण की ओर दिलाया जाता है और फिर लिखना सिखाया जाता है।

संश्लेषण विधि : इस विधि में बच्चे को पहले वर्ण लिखना सिखाया जाता है। वर्ण लिखना सिखाने के बाद उससे शब्द निर्माण और फिर उसके बाद वाक्य लिखना सिखाया जाता है।

इस प्रकार की अनेक विधियां जैसे सृजनात्मक लेखन, पुस्तक समीक्षा, नोट लेना, निबंध एवं पत्र लेखन, संक्षिप्तीकरण आदि माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी के लेखन कौशल को विकसित करने के लिए अपनाई जा सकती हैं।

1.3.5 अनुवाद उपागम

अनुवाद की परंपरा लंबे समय से चली आ रही है। अनुवाद शब्द हमारे लिए कोई नया नहीं है। विभिन्न साहित्यिक पत्रिकाओं में, समाचारपत्रों में, भाषा संगोष्ठियों में हम अनुवाद एवं इसके स्वरूप पर विचार विमर्श को देख सकते हैं और अनुवादित साहित्य को भी देख–पढ़ सकते हैं। अनुवाद के संदर्भ में दो बातों पर चर्चा की जा सकती है– पहला अनुवाद के सिद्धांतों पर बात करना और दूसरा व्यावहारिक अनुवाद की बात करना। किसी भी भाषा के साहित्य और ज्ञान–विज्ञान में जितना महत्व मूल लेखन का है, अनुवाद का महत्त्व भी उससे कम नहीं है। परंतु सहज और संप्रेषणीय अनुवाद करना, मूल लेखन से भी कठिन कार्य है। भारत जैसे बहुभाषी देश के लिए अनुवाद की समस्या और भी जटिल है। इसकी जटिलता को समझना अपने आप में महत्वपूर्ण है।

अनुवाद शब्द संस्कृत का यौगिक शब्द है जो अनु उपसर्ग और वाद के संयोग से मिलकर बना है। वाद का अर्थ है कहने की प्रक्रिया। इस प्रकार अनुवाद शब्द का अर्थ है 'प्राप्त कथन को पुनः कहना'। अंग्रेजी में अनुवाद को Translation कहा जाता है जो लेटिन भाषा के दो शब्दों trans एवं lation से मिलकर बना है जिसका अर्थ है 'पार ले जाना'। अर्थात एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाना। यहां एक स्थान 'स्रोत

भाषा' है और दूसरा स्थान 'लक्ष्य भाषा' है। अनुवाद केवल किसी बात को अन्य भाषा में पुनः दोहराना ही नहीं है, वह इससे कहीं ज्यादा है। वर्तमान में अनुवाद शब्द का अर्थ विस्तार होकर एक भाषा–पाठ (स्रोत भाषा) के निहितार्थ, संदेशों, उसके सामाजिक–सांस्कृतिक तत्त्वों को यथावत दूसरी भाषा (लक्ष्य भाषा) में अंतरण करने का पर्याय बन चुका है। चूंकि दो भाषाओं की प्रकृति भिन्न होती है। उनकी संरचना, किसी स्थान विशेष की संस्कृति, समाज एवं रीति–रिवाज से प्रभावित होती है, इसलिए अनुवाद का कार्य बेहद चुनौतीपूर्ण बन जाता है। एक भाषा में कही गई बात के लिए दूसरी भाषा में उसके समतुल्य शब्दों को खोजना एक मुश्किल कार्य है।

टिप्पणी

अनुवाद के उद्देश्य

अनुवाद विधि का प्रयोग मुख्यतः विद्यालयों में द्वितीय भाषा शिक्षण में किया जाता है। उदाहरण के लिए विद्यालयों में अंग्रेजी भाषा सीखने के लिए मातृभाषा का प्रयोग किया जाता है। इस संदर्भ में अनुवाद शिक्षण के कुछ उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

- द्वितीय भाषा की लिपि एवं वर्तनी का बोध कराना।
- द्वितीय भाषा के व्याकरण के नियमों से परिचय कराना।
- द्वितीय भाषा की वाक्य संरचना, ध्वनि एवं उच्चारण का बोध कराना।
- द्वितीय भाषा के भाषाई कौशलों का विकास कराना।
- मातृभाषा की अभिव्यक्ति को द्वितीय भाषा में अभिव्यक्त करना।
- द्वितीय भाषा में लिखे गए साहित्य का अनुवाद करके मातृभाषा में लिखने के लिए प्रेरणा देना।
- अन्य भाषाओं के सीखने की रुचि एवं अभिवृत्ति का विकास करना।
- अन्य स्थानों की संस्कृति, रीति–रिवाज, आर्थिक विकास, विज्ञान एवं तकनीकी विकास के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना आदि।

अनुवाद के प्रकार

साधारणतः अनुवाद तीन प्रकार से किया जाता है– (1) शब्दानुसार (2) भावानुसार (3) भाव व शैली के अनुसार

(1) शब्दानुसार अनुवाद

शब्दानुसार अनुवाद में एक भाषा के शब्दों को दूसरी भाषा में लिखा जाता है। परंतु वाक्य की रचना के कारण अनुवाद का रूप बदल जाता है क्योंकि हर भाषा में वाक्य संरचना भिन्न–भिन्न होती है। उदाहरण के लिए हिन्दी की वाक्य रचना, अंग्रेजी की वाक्य रचना से भिन्न होती है। हिन्दी में कर्ता, कर्म और क्रिया वाक्य में एक क्रम से होते हैं जबकि अंग्रेजी भाषा में यह क्रम कर्ता, क्रिया और कर्म है। इसमें बिलकुल शब्दशः अनुवाद नहीं किया जाता बल्कि परिस्थिति के अनुसार वाक्य में दूसरी भाषा का संगत शब्द प्रयुक्त किया जाता है।

(2) भावानुसार अनुवाद

एक भाषा में जिन भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति की गई है दूसरी भाषा में उन्हीं भावों एक विचारों की अभिव्यक्ति करना भावानुसार अनुवाद कहलाता है। इसके अंतर्गत रचना

के मूल भावों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। भाषा के अन्य तत्त्वों जैसे वाक्य रचना, शैली, शब्दावली आदि पर उतना ध्यान नहीं दिया जाता।

(3) भाव व शैली के अनुसार

टिप्पणी

इस प्रकार के अनुवाद में भावों के साथ–साथ, भाषिक तत्त्वों पर भी ध्यान दिया जाता है। इसमें इस बात का ध्यान रखा जाता है कि भावों को शुद्ध रूप से व्यक्त किया जा सके। यह अनुवाद की सर्वोत्तम विधि है।

अनुवाद करते समय ध्यान देने योग्य बातें–

- अनुवाद करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि अनुवाद शब्दशः न किया जाए। जिस भाषा में अनुवाद किया जाए उस भाषा की वाक्य संरचना का ध्यान रखना चाहिए। किसी भी अनुवाद को करते समय तीन चीजों का ध्यान रखना आवश्यक है– भाव, शैली एवं सरलता। अर्थात अनुवाद करते समय यह ध्यान में रखना चाहिए कि जिस सामग्री का अनुवाद किया जा रहा है उसका भाव स्पष्ट हो। जिस भाषा में अनुवाद किया जा रहा है उसकी शैली प्रयोग की जाए। और अंत में अनुवाद इतना सहज एवं सरल होना चाहिए कि पढ़ते ही उसका भाव स्पष्ट हो जाए।
- यदि वाक्य अधिक जटिल हो तो उनका ज्यों का त्यों अनुवाद करने की आवश्यकता नहीं है। उन वाक्यों को तोड़कर उनका अनुवाद किया जा सकता है पर उपरोक्त लिखे तीनों नियमों का उल्लंघन नहीं होना चाहिए।
- जहां तक संभव हो अनुवाद का अनुवाद करने से बचना चाहिए। इसका कारण यह है कि जब किसी रचना का अनुवाद किया जाता है तो पूरी सावधानी से अनुवाद करने पर भी उसमें मूल रचना से थोड़ी भिन्नता आ ही जाती है। जब इस अनुवादित रचना का भी अनुवाद किया जाता है तो यह रचना मूल रचना से काफी भिन्न हो जाती है। ऐसे में मूल रचना के भावों का लोप होने का डर रहता है।
- मातृभाषा के साथ जब अन्य भाषा का शिक्षण होता है तभी अनुवाद सिखाना प्रारम्भ कर देना चाहिए।
- अनुवाद करने से पहले दोनों भाषाओं का ज्ञान होना आवश्यक है।
- विद्यार्थियों को अनुवाद सिखाते हुए पहले उस भाषा में अनुवाद करवाना चाहिए जिसका उनको अच्छा ज्ञान हो, उसके बाद अन्य भाषा में अनुवाद करवाना चाहिए।

1.3.6 त्रुटि विश्लेषण

भाषा सीखते समय त्रुटियां होना स्वाभाविक ही है। डॉ. व्यास के अनुसार, "विद्यार्थियों द्वारा अपनी लिखित अभिव्यक्तियों में त्रुटियों को पहचानने और उनमें संशोधन करने की दृष्टि से त्रुटि–संशोधन की योग्यता का विकास एवं आदत का निर्माण भाषा शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण अंग है।" भाषा सीखने में विभिन्न प्रकार की त्रुटियां होती हैं। जब कोई विद्यार्थी अन्य भाषा सीखने का प्रयास करता है तब त्रुटियां होना स्वाभाविक

है। परंतु यह भी सत्य है कि त्रुटियां भाषा सीखने में रुकावट नहीं बनतीं। डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव त्रुटियों का उल्लेख विशेषतः किसी अन्य भाषा को सीखने के संदर्भ में करते हैं। उनके अनुसार, जब हम किसी अन्य भाषा को सीखने का प्रयास करते हैं तो एक 'लक्ष्य भाषा' को सीखने का प्रयास करते हैं। परंतु हम इसको पूरी तरह से सीख नहीं पाते क्योंकि जितनी सार्थकता से हम मातृभाषा का प्रयोग अपने दैनिक जीवन में करते हैं उतनी सार्थकता से 'लक्ष्य भाषा' का प्रयोग नहीं कर पाते। तो हमारी 'लक्ष्य भाषा' सीखने के दौरान हम वास्तव में जिस प्रकार की भाषा को सीख पाते हैं उसको सेलिंकर ने 'अंतर भाषा' का नाम दिया है। डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव (1992) के अनुसार, "वे ही प्रयोग त्रुटिपूर्ण कहे जा सकते हैं जो एक तरफ 'अंतर भाषा' के प्रयोग क्षेत्र के भीतर आते हैं और दूसरी तरफ जिनका प्रयोग लक्ष्य भाषा की मानक व्यवस्था से विचलित हो।" वे त्रुटियों के निम्नलिखित प्रकार बताते हैं–

टिप्पणी

त्रुटियों के प्रकार

त्रुटियों के निम्न प्रकार हैं–

• **व्यवहार संदर्भित त्रुटियां** : ये त्रुटियां व्यवहार में प्रयोग की जाने वाली भाषा में प्रयुक्त व्याकरण से संबंधित त्रुटियां हैं। प्रयोक्ता को उसकी गलती बताए जाने पर वह अपनी गलती को मान लेता है।

• **अज्ञान संदर्भित त्रुटियां** : इस प्रकार की त्रुटियां लक्ष्य भाषा के नियमों की सही जानकारी के अभाव में होती हैं। उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति अन्य भाषा के रूप में हिन्दी सीख रहा है तो उसे आदरार्थ प्रयोग के नियम अवश्य पता होने चाहिए नहीं तो वह बोलते हुए यह नहीं समझ पाएगा कि हिन्दीभाषी किसे आदरार्थ दृष्टि से देखता है। जैसे वह यह बोल सकता है कि 'पिताजी आए थे' यह सही है परंतु 'चाचा आया था' यह त्रुटिपूर्ण होगा।

• **अंतर भाषा संदर्भित त्रुटियां** : इस प्रकार की त्रुटियों का मूल कारण अंतर भाषा की अपनी संरचना का होना है। ये त्रुटियां एक निश्चित व्यवस्था को उद्घाटित करती हैं इसलिए इनको व्यवस्था संबंधी त्रुटियां भी कहा जाता है। ये त्रुटियां विद्यार्थी भाषा–अधिगम प्रक्रिया के दौरान ही करता है। इसके अंतर्गत कई प्रकार की त्रुटियां आती हैं

नीचे भाषा की कुछ त्रुटियों के उदाहरण दिए गए हैं–

अति सामान्यीकरण : अति सामान्यीकरण की प्रक्रिया भाषा को अति सरल करने की प्रक्रिया है। इसका संबंध लक्ष्य भाषा की तथ्य सामग्री और भाषा व्यवस्था के आधारभूत नियमों का सादृश विधान के आधार पर प्रयोग–प्रसार है। कुछ उदाहरण देखिए–

वह पढ़ता है– उसने पढ़ा

वह खाता है– उसने खाया

वह देखता है– उसने देखा

वह करता है– उसने किया

वह सोता है– उसने सोया

वह बोलता है– उसने बोला

टिप्पणी

उपनियमों की अज्ञानता : हर भाषा के कुछ ऐसे नियम होते हैं जिनका संबंध उपनियमों एवं उपव्यवस्था से होता है। इनकी अनदेखी करके विद्यार्थी त्रुटियां करता है। उदाहरण–

आप आएं – आप आइए

आप जाएं – आप जाइए

आप पीएं – आप पीजिए

अंग्रेजी के प्रयोग की त्रुटियां

He said/'asked' to me.
Go/'follow' with him,

नियमों का अपूर्ण प्रयोग : भाषा में नियम एक–दूसरे के साथ जुड़े रहते हैं। जब एक नियम को लागू किया जाता है तो उससे संबंधित अन्य नियमों को भी लागू करना पड़ता है। ऐसे में अन्य नियमों को लागू करने में हुई भूल के कारण भी त्रुटियां होती हैं। उदाहरण–

मैंने रोटी खाया है।
विक्रांत जी बैठा है।

अंग्रेजी के प्रयोग की त्रुटियां

They did not like itm 'nor' I liked it,

भ्रांतिपूर्ण धारणा : कभी–कभी भाषा सीखते हुए कुछ धारणाएं मन में बैठ जाती हैं और उन धारणाओं का प्रयोग करते हुए अक्सर त्रुटियां हो जाती हैं। जैसे अंग्रेजी में यह कह दिया जाता है कि वर्तमान काल में 'is' का प्रयोग किया जाता है और भूतकाल में 'was' का। इसके प्रयोग से कुछ ऐसी त्रुटियां देखने को मिलती हैं–

One day it 'was' happened.
He 'is' speaks English.

हिन्दी भाषा की त्रुटियां

तुमने किताब को पढ़ी।

लड़का ने कहा।

सोहन ने मोहन को किताब खरीद ली।

त्रुटियों को भाषा–अभिगम के लिए स्वाभाविक प्रक्रिया माना जाता है इसलिए इनके निराकरण के लिए सुधारात्मक पाठ बनाए जाने चाहिए। विद्यार्थियों को त्रुटि संशोधन के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। प्रभावी त्रुटि–संशोधन के लिए विद्यार्थियों को प्रभावी शिक्षण एवं निरंतर निर्देशन मिलना चाहिए। वह सीखे गए त्रुटि संशोधन कौशलों का प्रयोग करके अपनी भाषा दक्षता में वृद्धि करे। इसके लिए विद्यार्थी के समक्ष विभिन्न प्रकार के त्रुटि–संशोधन के उदाहरण प्रस्तुत किए जाए। त्रुटि सुधार के लिए निम्नलिखित तरीके अपनाए जा सकते हैं–

1. **छोटे समूहों में शिक्षा** : कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या कम होने पर शिक्षक विद्यार्थियों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान दे सकेगा। इसलिए जहां तक संभव हो कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या कम रखी जाए।

2. **व्यक्तिगत ध्यान देना** : अक्सर यह देखा गया है कि जो विद्यार्थी लेखन में अधिक त्रुटियां करते हैं वह शिक्षक के पास जाने में, कक्षा में खुलकर कुछ पूछने में झिझकते हैं। ऐसे में शिक्षक को चाहिए कि वह व्यक्तिगत तौर पर ऐसे विद्यार्थियों पर ध्यान दे और उनकी सहायता करे।
3. **उपर्युक्त विधियों का चयन** : कक्षा में पढ़ाते हुए शिक्षक को यह ध्यान रखना चाहिए कि वह भिन्न–भिन्न विधियों का चुनाव करे जिससे विद्यार्थी रुचि के साथ पढ़ना–लिखना सीख सके। विद्यार्थी यदि अपनी रुचि अनुसार पढ़ते हैं तो त्रुटियों की संभावना कम हो जाती है।
4. **अच्छे शिक्षकों की नियुक्ति** : विद्यार्थियों की शिक्षा में अच्छे शिक्षकों का महत्वपूर्ण योगदान है। अच्छे शिक्षक रुचिपूर्ण ढंग से पढ़ाने, विद्यार्थियों की आवश्यकताओं को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रशिक्षित शिक्षक निदानात्मक परीक्षाओं का प्रयोग करके त्रुटि–संशोधन में मदद करते हैं।
5. **उचित पाठ्यक्रम** : कई बार उचित पाठ्यक्रम के अभाव में भी बच्चे बार–बार फेल होते हैं। यदि पाठ्यक्रम उबाऊ और बोझिल हो तो बच्चे ठीक से नहीं पढ़ पाते। इसके लिए पाठ्यक्रम बनाने पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

5. जब कोई सीखी गई भाषा बेहद सीमित संदर्भों में प्रयोग की जाए तो वह कौन–सी भाषा कहलाती है?

   (क) समतुल्य भाषा (ख) संपूरक भाषा

   (ग) परिपूरक भाषा (घ) सहायक भाषा

6. डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव ने द्विभाषिकता के संदर्भ में मातृभाषा के अतिरिक्त सीखी जाने वाली अन्य भाषा के कितने प्रकार बताए हैं?

   (क) दो (ख) तीन

   (ग) चार (घ) पांच

7. राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने संवैधानिक प्रावधानों, बहुभाषावाद एवं राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने की जरूरत को ध्यान में रखते हुए त्रिभाषा सूत्र को जारी रखने की सिफारिश कब की?

   (क) 1964 (ख) 1986

   (ग) 2005 (घ) 2020

8. जिस विधि में बच्चे को पहले वर्ण लिखना सिखाया जाता है, उसे कौन–सी विधि कहते हैं?

   (क) माण्टेसरी विधि (ख) संश्लेषण विधि

   (ग) विश्लेषण विधि (घ) स्वतंत्र लेखन विधि

1.4 समेकित उपागम के माध्यम से भाषा प्रयोग एवं शिक्षण

टिप्पणी

समेकित उपागम उस शिक्षा से संबंधित है जिसमें विभिन्न विषय क्षेत्रों की एक जैसी अवधारणों को समग्र रूप से एक साथ देखा जाता है और उसका शिक्षण भी समग्र रूप से करने का प्रयास किया जाता है।

आइए इसे एक उदाहरण की मदद से समझते हैं–

पैसा : आज पैसे के बगैर जीना मुश्किल है। मगर जब पैसा नहीं था तब दुनिया कैसे चलती थी? कहा जाता है कि सबसे पहले आपसी लेन–देन से काम चलता था। कभी बैल के बदले गेहूं या फिर कभी गहने दिए जाते थे। मगर जैसे–जैसे चीजें बढ़ती गईं इस तरह के व्यापार में दिक्कतें आने लगीं। मेरे पास बकरियां हैं लेकिन मुझे कपड़ा खरीदना है। तब मुझे ऐसा व्यक्ति ढूंढ़ना पड़ेगा जिसके पास बेचने के लिए कपड़ा है। साथ ही यह भी जरूरी है कि वह व्यक्ति बकरियां को लेना चाहे। यह हमेशा मुमकिन नहीं था। यह फैसला करना भी मुश्किल था कि जितना माल बेचा उसके बदले में कितना मिलना चाहिए। एक समय ऐसा आया कि जब कहीं–कहीं कीमती चीजें लेन–देन का माध्यम बनीं। हमारे देश में गाय व्यापार का आधार मानी जाती थी। कहीं–कहीं पर तम्बाकू ने भी वैसा ही दर्जा पाया जैसा गाय का था। मगर हर बार तम्बाकू या गाय उठा कर ले जाना भारी–भरकम काम था।

(स्रोत : बोलती है भाषा, निरंतर)

ऊपर दिए गए लेख को पढ़कर बताइए कि–

- यह लेख किस विषय से संबंधित है? (भाषा, सामाजिक–विज्ञान आदि)
- मान लीजिए यह लेख भाषा की कक्षा में पढ़ाया जा रहा है तो भाषा के दृष्टिकोण के अलावा वे कौन से बिन्दु होंगे जिनके बारे में एक शिक्षक इस लेख को पढ़ाते हुए कक्षा में चर्चा कर सकता है।

आपको यह अजीब लग सकता है कि भाषा की कक्षा में पैसे के इतिहास की चर्चा या व्यापार के इतिहास की चर्चा की जाए। इस प्रक्रिया को समेकित शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया कहा जाता है। समेकित उपागम के बारे में विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाएं देखते हैं।

1.4.1 समेकन : परिभाषा, विशेषताएं, प्रकार एवं क्षेत्र

शूमेकर (1989) के अनुसार– "समेकित अधिगम से अभिप्राय ऐसी शिक्षा से है जो इस प्रकार से संगठित हो कि उसमें विषयों की सीमा रेखा न हो, अध्ययन के मुख्य क्षेत्रों को केन्द्रित कर, पाठ्यक्रम के विभिन्न भागों/क्षेत्रों को सार्थक रूप से संगठित किया गया हो। इसमें अधिगम तथा शिक्षण को एक रूप में देखा जाता है और यह अंतःक्रिया वाले वास्तविक जगत का प्रदर्शन करता है।"

जैकोब्स (1989) समेकित उपागम को इस प्रकार परिभाषित करते हैं– "ज्ञान तथा पाठ्यक्रम का ऐसा उपागम है जो एक से अधिक विषयों से सीखने की विधि और भाषा का प्रयोग किसी एक मुख्य पाठ, अनुभव समस्या या मुद्दे की जांच हेतु जानबूझकर प्रयोग में लाया जाता है।"

अतः हम यह कह सकते हैं कि समेकित शिक्षण में विषयों के बीच के अवरोधों को तोड़ने का प्रयास किया जाता है जिससे विद्यार्थी बेहतर ढंग से सीख पाए और उनके ज्ञान का विस्तार हो।

समेकित पाठ्यक्रम की विशेषताएं

टिप्पणी

इन सब परिभाषाओं के आधार पर हम समेकित पाठ्यक्रम की निम्नलिखित विशेषताएं देख सकते हैं–

(क) **विभिन्न विषयों का मेल** : समेकित पाठ्यक्रम में एक से अधिक पाठ्य विषयों को मिलाकर नई विषयवस्तु एवं उससे जुड़ी गतिविधियां तैयार की जाती हैं जो विद्यार्थियों के अनुभवों को उनके जीवन से जोड़ती हैं।

(ख) **पाठ्यपुस्तक से इतर शिक्षण** : समेकित शिक्षण के अंतर्गत विद्यार्थियों के कक्षायी ज्ञान को उनके वास्तविक जगत के अनुभव से जोड़ा जाता है। इसलिए समेकित शिक्षण में केवल पाठ्यपुस्तकों से शिक्षण संभव नहीं है। इसके लिए पाठ्यपुस्तकों से इतर अन्य सहायक सामग्री, विभिन्न गतिविधियों, उपलब्ध संसाधनों का उपयोग किया जाता है।

(ग) **अवधारणाओं के बीच सामंजस्य** : समेकित शिक्षण के अंतर्गत बच्चे के पूर्ण सार्थक ज्ञान को प्राप्त करने पर जोर दिया जाता है। इसमें विभिन्न विषयों की कुछ अवधारणाओं का चयन करके समेकित पाठ योजना बनाई जाती है। इन अवधारणाओं का चयन करते हुए यह ध्यान रखना चाहिए कि ये एक–दूसरे से जुड़ी हुई हों।

(घ) **गतिविधियों पर अधिक जोर** : समेकित शिक्षण में गतिविधियों के माध्यम से शिक्षण पर बहुत ध्यान दिया जाता है। ये गतिविधियां व्यक्तिगत तौर पर भी करवाई जा सकती हैं और सामूहिक रूप से भी।

(ङ) **लचीलापन** : समेकित शिक्षण पूर्णतः तभी सफल होगा जब उसमें लचीलापन हो और अन्य विषयों की अवधारणाओं के समावेशन की गुंजाइश हो। इसको केवल कक्षा की समय–सारणी में रखे गए निश्चित कालांश तक सीमित नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार सामूहिक गतिविधियों में भी लचीलापन होना चाहिए।

समेकन के प्रकार

हम समझ चुके हैं कि विभिन्न पाठ्यक्रमों का आपस में संयोजन एवं शिक्षण ही समेकित शिक्षण कहलाता है। समेकित शिक्षण को हम तीन भागों में विभाजित करके समझ सकते हैं–

1. विषय क्षेत्र के अंदर
2. विषय क्षेत्रों के बीच
3. विषय क्षेत्रों के बाहर

1. विषय क्षेत्र के अंदर समेकन

एक ही विषय क्षेत्र के अंदर समेकन की प्रक्रिया में एक ही विषय के ज्ञान एवं कौशलों को एक साथ जोड़कर शिक्षण किया जाता है। दूसरे शब्दों में यह एक ही विषय के

टिप्पणी

विभिन्न पाठों की भिन्न–भिन्न अवधारणाओं को कक्षा शिक्षण के दौरान एक साथ जोड़ना है। आइए इसके कुछ उदाहरण देखते हैं–

- भाषा शिक्षण में 'कहानी सुनाने' के दौरान हम पढ़ना, लिखना और मौखिक संचार जैसे कौशलों को सम्मिलित कर सकते हैं।
- प्राथमिक कक्षाओं में पर्यावरण अध्ययन के विभिन्न पाठ जैसे– परिवार, पास–पड़ोस, त्योहार, व्यवसाय आदि को एक साथ 'हमारे गांव में जीवन' पाठ की चर्चा करते हुए जोड़ा जा सकता है।
- भाषा की कक्षा 7 की एनसीईआरटी की पुस्तक में 'खान–पान की बदलती तस्वीर' को पुस्तक में दिए पाठ 'मिठाईवाला' और 'रक्त और हमारा शरीर' से जोड़ कर पढ़ाया जा सकता है।
- गणित शिक्षण में प्रतिशत, दशमलव, ब्याज की गणना जैसे विषयों को 'लाभ व हानि' सीखने के साथ जोड़ा जा सकता है।

2. विषय क्षेत्रों के बीच समेकन

विषय क्षेत्रों के बीच समेकन दो या दो से अधिक विषय क्षेत्रों के ज्ञान एवं कौशलों को जोड़ने से होता है। इसके अंतर्गत एक ही कक्षा की शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया के दौरान एक ही कक्षा के विभिन्न विषयों के बीच सामंजस्य बनाने एवं जोड़ने का काम किया जाता है। विषय क्षेत्रों के बीच समेकन दो प्रकार से हो सकता है– (1) बहुविषयी समेकन (2) अंतरविषयी समेकन।

(1) बहुविषयी समेकन : बहुविषयी समेकन में कोई एक मुख्य थीम होती है जो बहुत से विषयों से जुड़ी रहती है। इसमें विषय क्षेत्र के परिणाम स्पष्ट रहते हैं, परंतु कुछ सार्थक संबंधों के कारण शिक्षण प्रक्रिया के दौरान वे आपस में सम्मिलित रहते हैं। इसको एक उदाहरण द्वारा समझने का प्रयास करते हैं–

एक शिक्षक कक्षा में पौधों के बारे में पढ़ाना चाहता है। तो बहुविषयी समेकन के

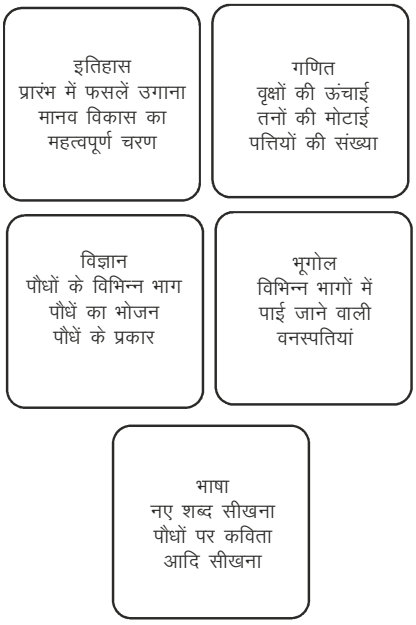

अनुसार विभिन्न विषयों में निम्नलिखित संभावनाएं हो सकती हैं–

(2) अंतरविषयी समेकन : जब शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में एक विषय की बेहतर समझ के लिए किसी दूसरे विषय के ज्ञान व कौशल को सम्मिलित किया जाता है तो उसे अंतर विषयी समेकन कहा जाता है। उदाहरण के लिए यदि हम भूगोल के विषय 'ग्रह' को कक्षा में पढ़ा रहे हैं तो हम चित्रकारी आदि का प्रयोग करके सूर्य एवं ग्रहों का सुंदर चित्र बनवा सकते हैं। हम कोई मॉडल बनवा सकते हैं। इसी प्रकार भाषा का कोई पाठ पढ़ाने के लिए नाटक, संगीत व नृत्य आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

टिप्पणी

इस प्रकार के समेकन में विद्यार्थियों की बाहरी दुनिया के अनुभवों को कक्षा में स्थान दिया जाता है और विभिन्न विषयों के शिक्षण में उनके ज्ञान, भाषा एवं अन्य कौशलों का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए कक्षा 7 की एनसीईआरटी की पुस्तक में एक पाठ है 'लोकगीत'। इसके शिक्षण के लिए विद्यार्थियों से उनके घरों में गाए जाने वाले लोकगीतों को गाने के लिए कहा जा सकता है। यह संभव है कि विद्यार्थी विभिन्न भाषाओं में लोकगीत प्रस्तुत करें। ऐसे में बहुभाषा को भी कक्षा में एक संसाधन के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। विभिन्न भाषाओं के नए शब्दों से विद्यार्थियों का परिचय करवाया जा सकता है।

समेकित उपागम के माध्यम से भाषा प्रयोग एवं शिक्षण हेतु योजना बनाना

हम अब यह समझ चुके हैं कि अपनी कक्षा में कोई भी विषय पढ़ाते हुए हम उससे संबंधित विभिन्न अवधारणाओं पर विचार करते हुए उसको अपनी शिक्षण प्रक्रिया में शामिल कर सकते हैं। सामान्यतः विद्यालयों में शिक्षण करते हुए समेकन की प्रक्रिया पर विचार नहीं किया जाता और पारंपरिक तरीके से शिक्षण चलता रहता है। शिक्षक अक्सर समय के अभाव की शिकायत करते हैं जिसके चलते पाठ योजना बनाते हुए गहराई से समेकित उपागम के बारे में विचार करना लगभग असंभव सा हो जाता है। मान लीजिए कि कक्षा 6 में विज्ञान विषय में 'सजीव एवं निर्जीव' पाठ पढ़ाना है। अब हमको उन अवधारणाओं पर विचार करना होगा जो इस पाठ से जुड़ी हो सकती हैं जैसे– प्रजनन, गति, भोजन, पाचन आदि। हम इन अवधारणाओं के द्वारा सजीव एवं निर्जीव में अंतर बता सकते हैं साथ ही विभिन्न प्रकार के सजीवों में पारिस्थितिक संतुलन, प्राकृतिक संसाधनों की कमी जो कि जनसंख्या से संबंधित है इन पर भी चर्चा कर सकते हैं। यहां पर ध्यान देने योग्य बात यह है कि एक पाठ के अधिगम उद्देश्य का कुछ संबंध उसी विषय के दूसरे पाठ के अधिगम के उद्देश्यों से है। यदि इन सभी पर एक साथ चर्चा करवाई जाए तो शिक्षार्थियों के लिए पूर्ण एवं सार्थक अधिगम होगा।

यदि हम भाषा के संदर्भ में समेकन की बात करें तो हम यह देखते हैं कि भाषा केवल सम्प्रेषण का माध्यम ही नहीं है बल्कि यह अन्य विषयों को सिखाने का भी माध्यम है। विभिन्न विषय–क्षेत्रों जैसे गणित, इतिहास,विज्ञान आदि को समझने के लिए भी हमें भाषा की आवश्यकता होती है। इसलिए अन्य विषयों का शिक्षण अवश्य ही भाषा शिक्षण के लिए लाभकारी होगा।

हम पढ़ चुके हैं कि समेकित शिक्षण क्या है और यह कितने प्रकार का होता है। अब हम कुछ उदाहरणों के माध्यम से विभिन्न विषयों के साथ भाषा शिक्षण की प्रक्रिया को समझने का प्रयास करेंगे।

टिप्पणी

पत्ते

क्या सभी पत्तों का रंग, आकार और किनारे एक जैसे हैं?

दयाराम ने कहा – मुझे तो पता ही नहीं था कि पत्ते इतनी तरह के होते हैं। देखो, कोई गोल है, कोई लंबा और कोई तिकोना!

अम्मू बोली – इन सबके रंग भी कितने अलग–अलग हैं। कोई हलका हरा तो कोई गाढ़ा हरा। कोई तो पीला, लाल, बैंगनी है। एक पत्ता है तो हरा, पर उसमें सफेद धब्बे हैं।

शबनम बोली – देखो, पत्तों के किनारे भी तो कितने अलग–अलग हैं। किसी पत्ती का किनारा सीधा है, तो किसी का कटा–फटा। कुछ के किनारे तो आरी की तरह हैं। अब मैं बनूंगी 'पौधों की परी' अम्मू और शबनम इकट्ठे बोलीं।

कुछ पत्ते इकट्ठे करो जैसे– नींबू, आम, नीम, तुलसी, पुदीना, हरा धनिया। इन पत्तों को मसलो और इनकी महक सूंघो। क्या सभी पत्तों की महक एक–सी है? क्या तुम सिर्फ महक से इन पत्तों को पहचान पओगे?

देखो, कितने सुंदर चित्र बने हैं। हां, यह सूखे पत्तों से ही बने हैं। तुम भी अब सूखे पत्तों से अलग–अलग जानवरों के चित्र अपनी कॉपी में बनाओ।

स्रोत– आस–पास, पर्यावरण अध्ययन, कक्षा 3

यह पाठ पर्यावरण अध्ययन से संबंधित है। यहां हम देख सकते हैं कि पाठ में समेकित अधिगम की ढेरों संभावनाएं हैं। भाषा के दृष्टिकोण से देखें तो यह पाठ पर्यावरण की सहज शब्दावली में प्रस्तुत किया गया है। साथ ही शिक्षार्थी पत्तों की विभिन्न विशेषताओं से परिचित हो रहे हैं जिससे वे विशेषण का ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं। इस पाठ को पढ़वाते हुए हम यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि शिक्षार्थी इसको शुद्ध उच्चारण के साथ पढ़ें। गणितीय दृष्टिकोण से देखा जाए तो पत्तियों के आकार, लंबाई एवं संख्या पर चर्चा की जा सकती है। अंतिम पंक्तियों में सृजनात्मकता को बढ़ावा देने के लिए पत्तियों के रंग द्वारा चित्र बनाने को कहा गया है। बच्चे इन सारी प्रक्रियाओं को आसानी से बिना रटे समझ सकेंगे।

एक ही विषय के भीतर समेकन हेतु पाठ–योजना बनाने के लिए निम्न बिन्दु ध्यान में रखे जा सकते हैं–

- हर विषय क्षेत्र में अधिगम की विशिष्ट प्रकृति को निश्चित करना।
- विशेष विषय क्षेत्र में प्रत्येक पाठ संबंधी दक्षताओं का निर्धारण करना।
- जो पाठ पढ़ाया जाना है उससे संबंधित ज्ञान एवं कौशलों की पहचान करना।
- जहां तक संभव हो, पाठ पढ़ते हुए यह प्रयास करना चाहिए कि उसकी सामग्री को शिक्षार्थियों के वास्तविक अनुभवों से जोड़ा जा सके।

इन सब विशेषताओं को किसी पाठ योजना में कैसे शामिल किया जाए इसके लिए नीचे दी गई पाठ योजना के कुछ बिन्दुओं पर नजर डालिए। समेकन के उद्देश्यों को बनाए रखते हुए कैसे पाठ योजना बनाई जाए इस संदर्भ में यह योजना समेकित उपागम का एक अच्छा उदाहरण है।

पाठ	उद्देश्य	उद्देश्यों के समेकन की प्रक्रिया
'गांव के त्योहार' (मेरा परिवार तथा पास–पड़ोस का समेकन)	• परिवार के विभिन्न सदस्यों के कार्य • परिवार की मदद हेतु शिक्षार्थियों की गतिविधियां • पास–पड़ोस के महत्त्व की पहचान • विभिन्न सामाजिक संस्थानों को पहचानना	• गांव में कौन–कौन से त्योहार मनाए जाते हैं? • कार्य का संगठन कैसे होता है? • परिवार में कौन–कौन सदस्य हैं और वे सब क्या करते हैं? • आप घर पर क्या करते हो? • आपके कार्य में कौन आपकी मदद करता है? आप अपने परिवार में किस–किस की मदद करते हैं? • आपके परिवार को कभी बाहरी सदस्यों से मदद मिली है? कैसे? • उन व्यक्तियों, स्थानों एवं संस्थाओं के नाम बताइए जहां से आपको सहायता मिलती है। • इन स्थानों एवं संस्थाओं के कार्यों की चर्चा कीजिए।

टिप्पणी

विभिन्न विषय क्षेत्रों में समेकन

प्रत्येक कक्षा में हर विषय एक विशेष एवं भिन्न विधि से पढ़ाया जाता है जो उस विषय की प्रकृति के अनुरूप हो। उदाहरण के लिए गणित शिक्षण के लिए मुख्यतः आगमन विधि का प्रयोग किया जाता है। इतिहास में कथा वाचन का प्रयोग किया जाता है। किसी विषय के लिए निरीक्षण विधि और कहीं किसी विषय के लिए प्रश्नोत्तर विधि का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार विभिन्न स्तरों पर विभिन्न शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए प्राथमिक स्तर पर वाचन विधि का प्रयोग करना उचित नहीं होगा। प्राथमिक स्तर पर शिक्षण को अधिक से अधिक रुचिकर बनाने का प्रयास करना चाहिए।

वास्तव में विभिन्न विधियों को लचीलेपन के साथ प्रयोग करने से आपको पाठ रुचिकर बनाने में ही मदद नहीं मिलती, बल्कि विभिन्न विषयों के सार्थक समेकन में भी सहायता मिलती है।

विभिन्न विषयों में उनके उद्देश्यों तथा अधिगम प्रतिफल के आधार पर कुछ संबंध होता है। विभिन्न विषय क्षेत्रों में समेकन के लिए विभिन्न विषयों के पाठों को जोड़ने की आवश्यकता है ताकि अधिगम प्रभावशाली हो और विषय–वस्तु की पुनरावृत्ति न हो। एक अच्छी समेकित पाठ योजना बनाने हेतु हमें निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए–

- प्रत्येक विषय–क्षेत्र में अधिगम की प्रभावी विधि तथा भिन्न प्रकृति को सुनिश्चित करें।
- विषय विशेष के अधिगम प्रतिफलों को ध्यान में रखकर एक से अधिक विषयों के पाठों, थीम, मुद्दे, मुख्य विचार तथा अधिगम प्रतिफलों को एक साथ जोड़ें।
- ज्ञान तथा कौशलों को एक विषय–क्षेत्रों द्वारा सीखा जाता है परंतु ये विभिन्न पाठों के मध्य, थीम, मुद्दे तथा मुख्य विचारों से भी संबंध रखते हैं।
- अधिगम तथा शिक्षण को समेकित करते हुए विभिन्न विषय क्षेत्रों की अवधारणाओं को सम्मिलित करने की संभावनाओं की जांच करें।

टिप्पणी

- शिक्षार्थियों को विभिन्न विषय क्षेत्रों के बीच संबंधों को समझने हेतु मार्गदर्शन दें।

आइए इसको एक उदाहरण के द्वारा समझते हैं जिसमें कक्षा 6 की भाषा की पाठ्यपुस्तक से एक पाठ लिया गया है–

पाठ	उद्देश्य	विभिन्न विषयों के समेकन की प्रक्रिया
सांस–सांस बांस	**भाषा** पाठ को शुद्ध उच्चारण के साथ पढ़ना पाठ में आए शब्दों बुनावट, नुकीला, घिसाई जैसे शब्दों के माध्यम से प्रत्यय सीखना और नए शब्दों का निर्माण करना। बांस को लेकर अपने अनुभवों को लिखना।	विद्यार्थियों से बारी–बारी से पाठ का वाचन करवाया जाएगा। विद्यार्थियों से पाठ में आए ऐसे शब्दों को ढूंढ़ने को कहा जाएगा जिनमें प्रत्यय का प्रयोग हुआ हो। उन शब्दों के प्रत्यय से नए शब्द तैयार करके उनका वाक्यों में प्रयोग करने को कहा जाएगा। विद्यार्थियों से अपने किसी ऐसे अनुभाव का वर्णन करने को कहा जाएगा जिससे उन्होंने कभी बांस का प्रयोग किया हो या बांस को देखा हो या घर में कोई बांस की वस्तु का प्रयोग होता हो।
	समाजिक विज्ञान बांस के पाए जाने का स्थान बांस का आर्थिक पहलू बांस का सामाजिक पहलू बांस का प्रयोग	बांस की बुनाई इतिहास में कब आरंभ हुई होगी बांस किन–किन स्थानों पर पाया जाता है। एटलस पर उन स्थानों को चित्रित करवाना। बांस के प्रयोग पर चर्चा करना
	कला बांस से टोकरी बनाने की प्रक्रिया	विद्यार्थियों से कागज से टोकरी बनवाई जा सकती है।
	पर्यावरण अध्ययन बांस के मौसम के बारे में चर्चा करना उस मौसम में उगने वाली अन्य फसलों की चर्चा करना फसल उगाने में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों के नाम बताना।	बांस के मौसम के बारे में पाठ के आधार पर चर्चा करना। इस मौसम में उगाई जाने वाली फसलों का वर्णन करने को कहें। फसल उगाने में प्रयोग होने वाली यंत्रों (पारंपरिक तथा आधुनिक) की सूची बनाएं।

यदि क्रिया–कलाप आधारित उपागम का प्रयोग कक्षा शिक्षण में किया जाए तो समेकित योजना अधिक प्रभावशाली हो सकती है।

अंतर विषयी समेकन (विभिन्न विषय–क्षेत्रों के बीच समेकन)

अंतर विषयी समेकन तथा बहुविषयी समेकन लगभग समान हैं। बहुविषयी समेकन में विभिन्न विषयों के बीच संबंधों को ढूंढ़ा जाता है तथा उसे समेकित योजना में जोड़ा जाता है। परंतु विभिन्न विषयों में निहित सामान्य ज्ञान तथा कौशलों को ढूंढ़कर समेकित योजना तथा शिक्षण हेतु प्रयोग किया जाता है। एक अच्छी अंतर विषयी समेकित पाठ योजना बनाने हेतु हमें निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए–

- पाठ, थीम, मुद्दे या मुख्य विचार तथा अधिगम प्रतिफलों को एक से अधिक विषय क्षेत्रों से ढूंढ़ना।
- सामान्य अधिगम प्रतिफलों की पहचान करना।

- तात्कालिक पाठों के बाहर तक के ज्ञान तथा कौशलों को सीखना।
- अधिगम के समेकित उपागम द्वारा विद्यार्थियों का पाठ्य–ज्ञान तथा कौशल अर्जित करने हेतु मार्गदर्शन करना।

इस प्रकार के समेकन में एक विशेष दक्षता को सुदृढ़ करने के लिए विभिन्न क्षेत्रों को जोड़ा जाता है। इस प्रकार के समेकन में अधिगम प्रतिफल कौशल/दक्षताएं केंद्र में होती हैं जिसके चारों तरफ विभिन्न विषय की संबंधित अवधारणाएं इस कौशल को मजबूती प्रदान करने में अपना सहयोग देती हैं। इसके साथ ही विद्यार्थियों के वास्तविक जीवन के अनुभवों का महत्व इनके समेकन को और अधिक मजबूत बनाता है। आइए एक उदाहरण देखते हैं–

टिप्पणी

केंद्र कौशल : बच्चों की मौखिक भाषा का विकास

उद्देश्य

- विद्यार्थी द्वारा अपनी भाषा का इस्तेमाल करते हुए बातचीत करना।
- जानकारी पाने के लिए प्रश्न पूछना।
- अपने अनुभवों को साझा करना।
- अपने तर्क देना आदि।

विभिन्न विषयों की गतिविधियां

- **भाषा** : बच्चे मिलकर कविता पाठ करेंगे।

  रोल प्ले करवाना।
- **कला** : बच्चे कुछ कलाकृति बनाकर उनके निर्माण, उपयोग, गुण आदि के बारे में बताएंगे।
- **विज्ञान** : बच्चों के पसंदीदा भोजन पर बात की जाए और उसके पोषक तत्त्वों के बारे में चर्चा की जाए।
- **सामाजिक–विज्ञान** : बच्चों से उनके पसंदीदा स्थान के बारे में प्रश्न पूछे जाएंगे और वे उसका जवाब देंगे।

3. विषय क्षेत्रों के बाहर समेकन

विद्यालय एवं कक्षा में लगभग सभी अनुभव पाठ्यपुस्तकों, पाठ्यक्रमों पर आधारित होते हैं। परंतु हम जानते हैं कि विद्यालय तथा विद्यालय के बाहर अधिगम के असीमित क्षेत्र उपलब्ध हैं। बच्चे का परिवार, जिस समाज में वह रहता है वह समाज अधिगम की असीमित संभावनाओं से भरा हुआ है। यदि हम अपने विद्यार्थियों को उन अनुभवों से रूबरू करवा सकते हैं तो उनका अधिगम सुदृढ़ एवं समृद्ध बन जाता है। बहिर्विषयी समेकन इस दिशा में बेहद महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह पाठ्य अधिगम प्रतिफलों के पुनर्बलन के दौरान अधिगम को अधिक अर्थ–पूर्ण बनाने के साथ–साथ नियोजित कौशलों एवं दक्षताओं को भी प्राप्त करने में सहायक है। कई बार तो तय किए गए कौशलों से भी ज्यादा अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं। इस प्रकार का समेकन अधिगम को अधिक संदर्भित बनाने एवं शिक्षण को वास्तविक जीवन के साथ जोड़ने में सहायक है। यह हमें समझने में मदद करता है कि प्रत्येक परिस्थिति, चाहे वह विद्यालय के भीतर हो या बाहर हो, वह अधिगम का महत्वपूर्ण स्रोत है। अधिगम एक निरंतर चलने वाली

प्रक्रिया है। यह केवल विद्यालय एवं पाठ्यक्रम तक ही सीमित नहीं है बल्कि बाहरी दुनिया भी ज्ञान का महत्वपूर्ण स्रोत है जिसको कक्षा में लाकर हम अधिगम प्रतिफलों की प्राप्ति तो कर ही सकते हैं। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों को भविष्य का सामना करने के लिए बेहतर रूप से तैयार कर सकते हैं।

टिप्पणी

विद्यालयी शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर विद्यार्थियों के अधिगम हेतु समग्र योजना बनाने में उन अनुभवों को समेकित करने हेतु असंख्य तरीके हैं। इसके लिए निम्नलिखित तरीके अपनाए जा सकते हैं–

- शिक्षक को प्रत्येक कक्षा के प्रत्येक विषय से संबंधित अधिगम प्रतिफलों की सूची अपने साथ रखनी चाहिए। ये प्रायः पाठ्यचर्या में उपलब्ध होती है।
- शिक्षक को नियमित अंतराल के बाद पाठ्य–सहगामी क्रियाकलापों की योजनाएं बनानी चाहिए। स्थानीय त्योहारों में सहभागिता, महत्वपूर्ण सामाजिक तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का अवलोकन, स्थानीय बाजार तथा अन्य महत्वपूर्ण स्थानों/संस्थानों का भ्रमण, विद्यालय में विभिन्न सांस्कृतिक गतिविधियों का संचालन, खेल–कूद तथा अन्य मनोरंजक आयोजनों में सम्मिलित होना आदि इनमें शामिल हैं।
- विद्यार्थियों द्वारा इन कार्यक्रमों में भाग लेने से पूर्व, इन कार्यक्रमों से अर्जित होने वाले कौशल एवं अधिगम प्रतिफलों की सूची बनाई जाए। इस बात का ध्यान रहे कि यह सूची एक से अधिक विषयों के अधिगम प्रतिफलों से युक्त हो तथा विद्यार्थियों की सहमति से इसको अंतिम रूप दिया जाए। यहां अधिगम प्रतिफल अधिक महत्वपूर्ण हैं।
- जब विद्यार्थी कार्यक्रमों में शामिल होकर वापस आ जाएं तो उनके साथ समूह में मिलकर उनके द्वारा प्राप्त नए ज्ञान, प्राप्त कौशलों, पूर्वनियोजित प्रतिफलों आदि पर चर्चा की जानी चाहिए। ऐसा देखा गया है कि अक्सर ऐसे अवसरों पर विद्यार्थी नियोजित प्रतिफलों से कहीं ज्यादा अर्जित करते हैं।
- चर्चा करने के बाद विद्यार्थियों से उनके द्वारा प्राप्त अनुभवों की एक संक्षिप्त रिपोर्ट लिखने को कहा जा सकता है। इससे उनकी रचनात्मक योग्यता का विकास होगा। साथ ही उन्हें अपनी उपलब्धियों पर विचारात्मक चिंतन करने तथा उनको बनाए रखने का भी मौका मिलेगा।

समेकित शिक्षण एवं पाठ्यपुस्तकें

अब तक हम पढ़ चुके हैं कि किस प्रकार विषय विशेष की अवधारणाओं एवं अनुभवों के वर्गीकरण की सीमा को तोड़ने में पाठ्यक्रम तथा शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया को समेकित किया जा सकता है। पर क्या इस प्रकार से पाठ्यपुस्तकों को भी समेकित किया जा सकता है?

आप विभिन्न स्तरों की विभिन्न पाठ्यपुस्तकों से परिचित होंगे। ये पुस्तकें शिक्षण की सुविधा हेतु क्रमानुसार संयोजित रहती हैं न कि अधिगम में सुविधा हेतु। एक अच्छी पाठ्यपुस्तक में निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक है–

- एक अच्छी पाठ्यपुस्तक में विषयवस्तु का प्रस्तुतीकरण विद्यार्थियों के मानसिक स्तर के अनुरूप होना चाहिए।

टिप्पणी

- पाठ्यपुस्तक के उद्देश्य स्पष्ट हों तथा पूरी पुस्तक में ठीक से लागू किए गए हों।
- पाठ्यपुस्तक में विषयवस्तु का चयन तार्किक एवं मनोवैज्ञानिक आधार पर किया जाना चाहिए।
- एक अच्छी पाठ्यपुस्तक में व्याख्या, स्पष्टीकरण, उदाहरणों आदि की सहायता से विषय को सरलीकृत करने का प्रयास किया जाता है।
- इसकी भाषा शैली में सरलता, स्पष्टता, मौलिकता एवं प्रवाहशीलता होती है।
- एक प्रभावशाली पाठ्यपुस्तक इस प्रकार से लिखी जाती है कि वह स्वयं ही विद्यार्थियों में पढ़ने के प्रति रुचि जागृत कर देती है।
- पाठ्यपुस्तकों में चित्रों का प्रयोग इस प्रकार किया जाता है कि वे सामग्री को समझने में सहायता करते हैं और साथ ही पुस्तक को आकर्षक रूप भी प्रदान करते हैं।
- पाठ्यपुस्तक के मुद्रण की गुणवत्ता अच्छी, स्वच्छ एवं स्पष्ट होनी चाहिए।
- पाठ्यपुस्तक का आकार सुविधाजनक होना चाहिए। छोटे बच्चों के लिए पाठ्यपुस्तकें आकार में छोटी एवं वजन में हल्की होनी चाहिए।
- अध्यायों के आकार बच्चों के स्तर के अनुरूप होने चाहिए।
- विषयवस्तु के अनुकूल चित्रों, मानचित्रों, रेखाचित्रों आदि का प्रस्तुतीकरण होना चाहिए।
- विषय–सूची, शब्दावली, संदर्भ–ग्रंथ सूची, निर्देश–नियमावली आदि का समावेश पाठ्यपुस्तकों में किया जाना चाहिए।
- विषयवस्तु ऐसी न हो जो किसी की भावनाओं को ठेस पहुंचाए।
- पाठ में दिए गए अन्य लेखकों के संदर्भ, स्पष्ट एवं विश्वसनीय होने चाहिए।
- अध्याय के अंत में विद्यार्थियों द्वारा स्वतरू मूल्यांकन हेतु अभ्यास–प्रश्नों का समावेश।
- पाठ्यपुस्तक में विभिन्न अधिगम शैलियों का प्रयोग होना चाहिए।

पाठ्यपुस्तकों का उपयोग क्यों किया जाना चाहिए? इसके पीछे पाठ्यपुस्तकों के प्रयोग से होने वाले लाभों का होना है। इनमें से कुछ लाभ निम्नलिखित हैं–

- एक पाठ्यपुस्तक को पाठ्यक्रम के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।
- कुछ विद्यार्थियों को विषय पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए पाठ्यपुस्तकों की आवश्यकता होती है।
- पाठ्यपुस्तकें समय–निर्देशक का कार्य करती हैं।
- पाठ्यपुस्तकों की अधिगम संरचना सीखने में बहुत सहायक होती है।
- पाठ्यपुस्तक की सहायता से विद्यार्थी समय से पूर्व पाठ को तैयार कर सकते हैं।
- अच्छी पाठ्यपुस्तकें शिक्षकों के लिए गुणवत्तापूर्ण पाठयोजना का आश्वासन हैं।

जब शिक्षण–अधिगम प्रक्रियाएं अधिक से अधिक विद्यार्थियों पर केन्द्रित होती हैं, तो कक्षा शिक्षण विशेषकर प्राथमिक कक्षाओं में पारम्परिक विषय आधारित पाठ्यपुस्तकों द्वारा संगठित हो जाता है।

टिप्पणी

वास्तव में अधिगम क्रियाएं वास्तविक जीवन की परिस्थितियों एवं समस्याओं से जुड़ी होती हैं। विद्यालयी शिक्षा की प्रारम्भिक अवस्था में अधिगम क्रियाओं में उन गतिविधियों का दोहराव होता है, जिनसे बच्चा अपने वातावरण से परिचित होता है। बच्चा जब पहली बार विद्यालय आता है तो उनके पास अपने बहुत सारे अनुभव होते हैं जैसे मुक्त रूप से बात करना, उचित भाषा के प्रयोग द्वारा अपने विचारों को अभिव्यक्त करना आदि। वह बहुत सारी बातें अपने घर से ही सीख कर आता है जैसे दूसरों का सम्मान करना, स्वच्छता संबंधी आदतें आदि।

यह ज्ञान और अनुभव अलग–अलग विषयों के माध्यम से नहीं सीखे गए होते। यदि हम किसी बच्चे की किसी भी गतिविधि का विश्लेषण करें तो पाएंगे कि उसमें से प्रत्येक कई अवधारणाओं/अनुभवों की विभिन्न इकाइयों को जोड़ते हैं। इन विश्लेषणों से हमें यह पता चलता है कि समेकित अधिगम बच्चों में एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। इसलिए समेकित पाठ्यपुस्तकें तथा सामग्री, अधिगम को सुगम बनाने की परिस्थिति प्रदान करती हैं।

समेकित पाठ्यपुस्तकें, अंतरविषयी एवं बहुविषयी समेकन शिक्षण के अलावा अधिगम को सुगम बनाने का प्रयास करती हैं। इस प्रकार की पाठ्यपुस्तकों की विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

- इस प्रकार की पाठ्यपुस्तकों में विभिन्न क्षेत्रों की अवधारणाएं एक थीम के चारों ओर व्यवस्थित रहती हैं जो विद्यार्थियों के वास्तविक जीवन में उनसे परिचित होती हैं एवं उनके लिए आनंददायक होती हैं। थीम भिन्न–भिन्न प्रकार की हो सकती हैं जैसे– पानी, आग, बाजार, कोई त्योहार, सर्कस, कहानी, कार्टून, पहेली आदि।
- थीम वास्तविक जीवन की परिस्थितियों/संदर्भों से संबंधित होती है और यह विद्यार्थियों को सार्थक जीवन के पर्याप्त अवसर देती है।
- प्रत्येक पाठ चित्रों, डायग्राम तथा उदाहरणों से परिपूर्ण होता है। प्रत्येक उदाहरण पाठ के लिए उपयुक्त होता है और इन उदाहरणों को अधिगम क्रियाओं में प्रयोग करने के हेतु अवसर दिए जाते हैं।
- प्रत्येक पाठ में अधिगम क्रियाओं हेतु अनेक अवसर अंतर्निहित होते हैं। ये क्रियाएं विद्यार्थी को पाठ पढ़ाते समय करनी होती हैं। ये क्रियाएं स्वभाव से बहुमुखी होती हैं, जैसे– चित्रकला, पेंटिंग, रचनात्मक गद्यांश लिखना, मॉडल बनाना, सामग्री तथा सूचना एकत्रित करना, अंकों, शब्दों तथा घटनाओं का मिलान करना आदि। बिना क्रियाकलाप के समेकन व्यर्थ है।
- पाठ में विभिन्न तत्व अंतर्क्रिया हेतु अंतर्निहित रहते हैं जो एक विद्यार्थी को दूसरों के साथ तथा स्वयं के साथ क्रिया करने योग्य बनाते हैं। पाठ में ऐसे अवसरों के उदाहरण हैं– 'प्रश्न बनाकर पूछें', 'शिक्षक के साथ वार्तालाप करें', 'अपने संगी साथियों के साथ समूह में कार्य करें', 'थोड़ी देर के लिए सोचे' आदि।
- विभिन्न प्रकार के अभ्यास–कार्य पूरी पाठ्यवस्तु में बिखरे रहते हैं (न कि सदैव पाठ के अंत में रखे जाते हैं) जो विद्यार्थी को पाठ में निहित अवधारणाओं को समझने में रुचि बनाए रखने में मदद करते हैं। इससे तात्पर्य है कि पाठ्यपुस्तक में कार्य पुस्तक अंतर्निहित है।

- समेकित पाठ्यपुस्तकें देश के कई राज्यों में प्राथमिक विद्यालयों में निचली कक्षाओं में प्रयुक्त हो रही हैं। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद द्वारा पर्यावरण अध्ययन कक्षा के 1 व 2 के पाठ्यक्रम को भाषा और गणित की पुस्तकों में समेकित किया गया है। कक्षा 4 व 5 की पर्यावरण अध्ययन पाठ्यपुस्तकों में विज्ञान तथा सामाजिक विज्ञान को समेकित किया गया है।

टिप्पणी

शिक्षण एवं अधिगम हेतु समेकित उपागम सबसे अधिक कारगर है। तार्किक, सार्थक तथा समग्र अधिगम को प्राप्त कराने में सर्वप्रमुख है। इसका कारण यह है कि हमारे सभी वास्तविक जीवन अनुभव विभिन्न विषयों में अलग–अलग विभाजित नहीं होते। समेकित पाठ्यपुस्तक उपलब्ध हो या न हो, विद्यालय के भीतर या बाहर शिक्षण तथा अधिगम का समेकित उपागम ही अधिगम की गुणवत्ता में अंतर करता है।

1.4.2 चयनित विषयों पर समेकित दृष्टिकोण के लिए भाषा के घटकों का प्रयोग एवं शिक्षण

भाषा एक ऐसी व्यवस्था है जो बहुत हद तक हमारे आस–पास की वास्तविकताओं और घटनाओं को हमारे मस्तिष्क में व्यवस्थित करती है। हमें विभिन्न विषयों जैसे इतिहास, भौतिक विज्ञान, गणित आदि सीखने एवं समझने के लिए भाषा की आवश्यकता होती है। हम किसी भी विषय को अपनी भाषा की संरचना के माध्यम से ही देखते हैं। इसलिए जो बच्चे भाषा के साथ तालमेल नहीं बिठा पाते वे धीरे–धीरे हाशिए की ओर बढ़ने लगते हैं।

आइए अब हम कुछ विषयों में समेकित दृष्टिकोण के माध्यम से भाषा प्रयोग एवं भाषा शिक्षण को समझने का प्रयास करते हैं। इन विषयों के शिक्षण के समय कुछ बातें ध्यान देने योग्य हैं– ये विषय किस स्तर पर पढ़ाये जा रहे हैं इसका ध्यान रखने की आवश्यकता है क्योंकि विभिन्न स्तरों पर एक ही पाठ्य सामग्री को पढ़ाने का उद्देश्य अलग–अलग होता है। यह बात भाषा शिक्षण के संदर्भ में विशेष रूप से लागू होती है।

- **घर/परिवार एवं संबंध, समुदाय/समाज, विद्यालय**

सामान्यतः ये सभी विषय एक दूसरे से काफी हद तक जुड़े हुए हैं और कक्षा में किसी एक की चर्चा होने पर अन्य विषयों की चर्चा भी होगी। समाज एक वृहद इकाई है और समुदाय, घर, परिवार एवं विद्यालय इसी समाज का हिस्सा हैं। कक्षा में इनकी चर्चा करते हुए अलग–अलग समाजों की भाषा, अलग–अलग घर–परिवारों में बोली जाने वाली भाषा पर चर्चा करवाई जा सकती है। इसकी शुरुआत बच्चे के पूर्वज्ञान से की जा सकती है। बच्चों से अपने परिवार के सांस्कृतिक तत्वों जैसे– भाषा, भोजन, त्योहार, पहनावा आदि के बारे में चर्चा करने को कहा जा सकता है। इस पर उनसे एक लेख भी लिखवाया जा सकता है। इसी प्रकार से अलग–अलग भाषा माध्यमों के विद्यालय, विद्यालयों में पढ़ाई जाने वाले भाषाओं, अलग–अलग स्थान पर बने हुए अलग–अलग विद्यालयों की भाषाओं को भी चर्चा का विषय बनाया जा सकता है। उनसे अपने विद्यालय पर भी लेख लिखने को कहा जा सकता है। इससे विद्यार्थी नई–नई भाषाओं से तो परिचित होंगे ही, इसके साथ–साथ नए स्थानों, नए समुदायों, परिवारों के भिन्न–भिन्न रीति–रिवाजों के साथ भी उनका परिचय होगा और उनकी शब्दावली में भी वृद्धि होगी। कक्षा में चर्चा से उनके सुनने एवं बोलने के कौशलों का विकास होगा।

टिप्पणी

जब इन विषयों से संबंधित पाठ कक्षा में पढ़वाया जाएगा तो उनके पठन कौशल का विकास होगा। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों को इन विषयों से संबंधित अन्य पठन सामग्री ढूंढ़कर पढ़ने को कहा जा सकता है। वे अन्य समुदायों के बारे में जानकारी इकट्ठा कर सकते हैं। लेख आदि जैसी गतिविधि करवाने से उनकी लेखन क्षमता का विकास होगा जिसके अंतर्गत विद्यार्थी न केवल नई शब्दावली का प्रयोग करेंगे अपितु नए वाक्यों का निर्माण भी सीखेंगे।

- **मौसम, पर्यावरण, स्वास्थ्य एवं स्वच्छता, शरीर के अंग**

इन पाठों को पढ़ाते हुए कक्षा में एक–दूसरे की चर्चा करवाई जा सकती है। उदाहरण के लिए मौसम के बारे में पढ़ाते हुए वर्तमान समय में पर्यावरण की स्थिति पर चर्चा करवाई जा सकती है। मौसम में परिवर्तन क्यों होता है? और विभिन्न स्थानों का मौसम एक सा क्यों नहीं होता? ऐसे प्रश्नों पर चर्चा करवाई जा सकती है। यदि कक्षा में ऐसे बच्चे हो जो अलग–अलग स्थानों से संबंधित हों, तो उनसे कक्षा में उनका अनुभव बताने को कहा जा सकता है। बदलते मौसम और पर्यावरण में परिवर्तन में क्या आपसी संबंध है। पर्यावरण कैसे प्रदूषित हो रहा है? इसको कैसे बचाया जा सकता है? आप पर्यावरण बचाने के लिए कैसे योगदान दे सकते हैं? पर्यावरण के मुद्दे पर विद्यार्थियों से सृजनात्मक लेख लिखवाया जा सकता है। विद्यार्थी पर्यावरण से संबंधित नई जानकारी भी वह इकट्ठा कर सकते हैं। पर्यावरण की बात करते हुए स्वास्थ्य एवं स्वच्छता की चर्चा करवाई जा सकती है। पर्यावरण का हमारे स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है? हम पर्यावरण की स्वच्छता में कैसे योगदान दे सकते हैं? स्वच्छता पर बात करते हुए हम अपनी व्यक्तिगत स्वच्छता की बात कर सकते हैं। हमारे विभिन्न शारीरिक अंग पर्यावरण के प्रदूषित होने से कैसे प्रभावित होते हैं इस प्रकार की चर्चा कक्षा में करवा सकते हैं। इसके अतिरिक्त नाटक आदि करवाए जा सकते हैं जिससे बच्चों में भाषा कौशलों के विकास के साथ–साथ पर्यावरण के प्रति जागरूकता भी पैदा होगी और बच्चा एक नई विधा से भी परिचित होगा। इन सारी चर्चाओं में बच्चा ढ़ेर सारी नई शब्दावली सीखेगा। पर्यावरण से संबंधित नई जानकारी के लिए वह विभिन्न अधिगम संसाधनों जैसे अखबार, जर्नल, पत्रिका आदि का प्रयोग करेगा।

- **जानवर, यातायात के साधन**

यदि जानवरों की चर्चा प्रारम्भिक स्तर पर करवाई जा रही है तो विभिन्न जानवरों के नाम, उनकी विशेषताएं, उनका भोजन आदि पर चर्चा करवाई जा सकती है। बच्चों से जानवरों की नकल करने को कहा जा सकता है। हर बच्चा अपनी पसंद का जानवर बनकर उसके जैसे कपड़े पहनकर, अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त कर सकता है जैसे– वह पिंजरे में रहना पसंद करता है या नहीं? उसको मनुष्यों के बीच रहना कैसा लगता है? क्या हो यदि मनुष्य पिंजरे में हों और वह बाहर आजाद होकर घूम रहा हो। इस प्रकार से उनमें मौखिक कौशलों के विकास के साथ–साथ सृजनात्मक चिंतन का विकास भी होगा। बड़ी कक्षाओं में कौन से जानवर कहां पाए जाते हैं? उनका प्राकृतिक महत्त्व आदि पर चर्चा करवाई जा सकती है। पर्यावरण में परिवर्तन का जानवरों पर क्या प्रभाव पड़ा है। आप जानवरों को बचाने के लिए क्या कर सकते हैं? ऐसे गहन विषयों पर लेख लिखवाए जा सकते हैं। मनुष्य एवं जानवरों के साथ पर वाद–विवाद प्रतियोगिता करवाई जा सकती है जिसमें एक पक्ष बताएगा कि मनुष्य ने जानवरों के

लिए बहुत कुछ किया है और दूसरा पक्ष मनुष्य के जानवरों पर नकारात्मक प्रभावों की चर्चा करेगा। इसके लिए पूरी कक्षा को दो भागों में विभाजित किया जाएगा और ये प्रयास किया जाएगा कि हर विद्यार्थी को सहभागिता का अवसर मिले। इससे उनकी मौखिक क्षमताओं के विकास के साथ–साथ तर्कशक्ति का भी विकास होगा। उनमें अपने आप को अभिव्यक्त करने का विश्वास भी जाग्रत होगा।

टिप्पणी

यातायात के साधन पढ़ाते हुए शुरुआत प्राचीन काल में यातायात के साधन के रूप में जानवरों के प्रयोग के साथ की जा सकती है। उसके बाद यातायात के विभिन्न साधनों का विकास, उससे मानव विकास, उससे परिवारों के स्वरूप में परिवर्तन, उसका प्रकृति पर प्रभाव इन सबसे जोड़ते हुए चर्चा करवाई जा सकती है। विद्यार्थियों से उनके स्वयं के अलग–अलग यातायात के साधनों के प्रयोग के बारे में पूछा जा सकता है और अपना अनुभव बताने को कहा जा सकता है। यातायात के साधनों के बिना आज जीवन कैसा होगा इस पर चर्चा करवाई जा सकती है या ऐसे अन्य विषयों पर लेख लिखवाए जा सकते हैं जिनसे सृजनात्मकता को बढ़ावा मिलें।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि समेकित दृष्टिकोण से पढ़ाते हुए हम चारों भाषा कौशलों– बोलना, सुनना, पढ़ना एवं लिखना इनका विकास कर सकते हैं। हम बच्चे के शब्दभंडार में वृद्धि करवा सकते हैं। अन्य विषयों में लेखन का प्रयोग न केवल लेखन कौशल के विकास में सहायक है अपितु यह वाक्य संरचना, शब्द भंडार का प्रयोग, क्रमबद्ध लेखन जैसे कौशल सीखने में भी सहायक है।

अपनी प्रगति जांचिए

9. समेकित पाठ्यक्रम की निम्न में से कौन–सी विशेषता है?

   (क) विभिन्न विषयों का मेल (ख) पाठ्यपुस्तक से इतर शिक्षण

   (ग) गतिविधियों पर अधिक जोर (घ) ये सभी

10. विभिन्न पाठ्यक्रमों का आपस में संयोजन एवं शिक्षण कहलाता है–

   (क) समेकित शिक्षण (ख) अनुवाद उपागम शिक्षण

   (ग) क व ख दोनों (घ) इनमें से कोई नहीं

11. जब शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में एक विषय की बेहतर समझ के लिए किसी दूसरे विषय के ज्ञान व कौशल को सम्मिलित किया जाता है, उसे कहा जाता है–

   (क) बहुविषयी समेकन (ख) अंतरविषयी समेकन

   (ग) विषय क्षेत्र के बाहर समेकन (घ) इनमें से कोई नहीं

12. समेकित दृष्टिकोण से हम किस भाषा कौशल का विकास कर सकते हैं?

   (क) बोलना (ख) सुनना

   (ग) पढ़ना एवं लिखना (घ) ये सभी

1.5 भाषा में अधिगम संसाधनों का प्रयोग

भाषा मनुष्य को उसके अस्तित्व का एहसास दिलाती है। मनुष्य जिस समाज में रहता है उसी समाज की भाषा सीखता है। हालांकि वह अपने परिवार, अपने आस–पास के परिवेश से भाषा सीख लेता है, परंतु फिर भी भाषा सिखाने की आवश्यकता पड़ती है। मनुष्य का विकास उसकी भाषा के विकास के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ है। केवल एक समाज की भाषा सीख कर उसका काम नहीं चल सकता। साथ ही अपनी मातृभाषा में भी उसको चारों कौशलों में दक्षता प्राप्त करनी है। इसलिए भाषा सीखना एक चुनौतीपूर्ण कार्य भी कहा जा सकता है।

टिप्पणी

1.5.1 शब्दकोश, विश्वकोश, समाचारपत्र एवं पत्रिकाओं का प्रयोग

भाषा अधिगम के लिए हमारे पास बहुत से ऐसे संसाधन हैं जो हमें न केवल भाषा अधिगम में मदद करते हैं बल्कि हमारे आस–पास की दुनिया को भी बेहतर समझने में हमारी सहायता करते हैं। ऐसे ही कुछ संसाधन हैं– शब्दकोश, विश्वकोश, समाचारपत्र एवं पत्रिकाएं जिनके बारे में हम यहां पढ़ेंगे। हम इनके महत्व एवं भाषा शिक्षण में इनके प्रयोग को जानने का प्रयास करेंगे। इसके साथ ही कक्षागत अंतःक्रियाओं को भी भाषा अधिगम संसाधन के रूप में देखते हुए इसके विभिन्न घटकों पर भी चर्चा करेंगे।

शब्दकोश

जिस ग्रंथ में शब्दों को अर्थ सहित किसी विशेष क्रम में सुनियोजित कर दिया जाता है उस ग्रंथ को शब्दकोश कहा जाता है।

वेबस्टर्स न्यू इंटरनेशनल डिक्शनरी के अनुसार, "यह एक संदर्भ ग्रंथ है जिसमें साधारणतया शब्द वर्णक्रमानुसार संयोजित रहते हैं और उसमें उनके रूप, उच्चारण, कार्य, व्युत्पत्ति, अर्थ तथा अर्थपरक मुहावरेदार प्रयोग संकलित रहते हैं।"

लुईस शोर्स के अनुसार, "भाषागत शब्दों की संग्रहात्मक पुस्तक को कोश कहते हैं। इसमें शब्द वर्णक्रमानुसार या अन्य किसी निश्चित क्रम से संयोजित रहते हैं और उनकी अर्थपरक व्याख्या तथा अन्य सूचनाएं उसी भाषा या अन्य भाषा में दी हुई रहती हैं।"

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार, "कोश वह पुस्तक है, जिसमें सामान्यतः वर्णानुक्रम से किसी भाषा के शब्दों अथवा विशेष या फिर लेखक आदि के संबंध में अध्ययन होता है।"

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार, "कोश ऐसे संदर्भ ग्रंथ को कहते हैं जिसमें भाषा विशेष के शब्दादि का संग्रह हो या संग्रह के साथ उनके उसी या दूसरी या दोनों भाषाओं के अर्थ, पर्याय, प्रयोग या विलोम हों या विशिष्ट अथवा विभिन्न विषयों की प्रविष्टियों की व्याख्या, नामों (स्थान, व्यक्ति आदि) का परिचय या कथनों आदि का संकलन क्रमबद्ध रूप में हो।"

शब्दकोश के लिए प्रायः 'शब्द संग्रह', 'पर्याय कोश', 'डिक्शनरी', 'पारिभाषिक शब्दावली' जैसे शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है। ये पुस्तकालय के संदर्भ विभाग में रखे जाते हैं।

सामान्यतः शब्दकोश का निर्माण तीन आधारों पर किया जा सकता है–

(1) वर्णनात्मक पद्धति

(2) ऐतिहासिक पद्धति

(3) तुलनात्मक पद्धति

टिप्पणी

(1) **वर्णनात्मक पद्धति** : इस पद्धति में किसी भाषा के एक काल में प्रयुक्त सम्पूर्ण शब्दों का संकलन कर उन्हें अकारादिक्रम से रखकर उसके सामने कई अर्थ दे दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए रामचन्द्र वर्मा द्वारा संपादित 'मानक–हिन्दी शब्दकोश' इसी पद्धति पर बने हुए शब्दकोश का उदाहरण है।

(2) **ऐतिहासिक पद्धति** : इस पद्धति के अंतर्गत सभी कालों में प्रचलित शब्दों को अकारादिक्रम से संकलित किया जाता है। शब्दों के अर्थ भी कालक्रम के अनुसार लिखे जाते हैं, प्रचलन के अनुसार नहीं।

(3) **तुलनात्मक विधि** : इसमें किसी भी भाषा के शब्दों को कालक्रमानुसार अकारादिक्रम में रखकर, उनके अर्थ लिखे जाते हैं और साथ ही उसी अर्थ में प्रचलित अन्य सगोत्र भाषाओं के शब्दरूप भी दे दिए जाते हैं। गोविंददास कृत 'मराठी व्युत्पत्ति कोश' इसी पद्धति पर तैयार किया गया है।

शब्दकोश के प्रकार

1. **सामान्य शब्दकोश** : सामान्य शब्दकोश में एक–एक भाषा में प्रयुक्त सामान्य शब्दों की जानकारी उपलब्ध होती है। इनका प्रयोग सामान्य पाठकों द्वारा सबसे अधिक किया जाता है। सामान्य शब्दकोशों को उद्देश्य, आकार, खंड और पाठक के स्तर के आधार पर निम्नलिखित श्रेणियों में बांटा जा सकता है।
   - **निर्धारणात्मक शब्दकोश** : निर्धारणात्मक शब्दकोश में एक भाषा के प्रयुक्त शब्दों की वर्तनी (spelling), उच्चारण (Pronunciation) तथा प्रयोग (usage) के प्रामाणिक मानदंडों को स्थापित करते हैं। इन शब्दों में अनुमोदित तथा प्रामाणिक शब्दों की सूचना ही उपलब्ध होती है।
   - **विवरणात्मक शब्दकोश** : सामान्य भाषा शब्दकोश का दूसरा उद्देश्य एक भाषा के सभी शब्दों को सूचीबद्ध करना होता है और इस कार्य को करने के लिए प्रचलित एवं नए सभी शब्दों को एकत्रित करने के लिए समसामयिक साहित्यिक पत्रिकाओं और समाचारपत्रों का नियमित अवलोकन किया जाता है ताकि सभी शब्दों की जानकारी शब्दकोश में उपलब्ध कारवाई जा सके। इस प्रकार के शब्दकोश को विवरणात्मक शब्दकोश कहा जाता है।

     उदाहरण–

     Dictionary of the English language, comp. by Samuel Jonson, 1755

     Oxford English Dictionary, 1844

2. **विशिष्ट शब्दकोश** : विशिष्ट शब्दकोश कई प्रकार के होते हैं–
   - **उच्चारण शब्दकोश** : उच्चारण शब्दकोश का संबंध केवल शब्दों के उच्चारण से होता है। ये शब्दों का सही उच्चारण बताते हैं जिनकी सहायता से प्रयोक्ता शब्दों, व्यक्तियों के नाम या भौगौलिक स्थानों के नामों

टिप्पणी

का सही उच्चारण कर सकते हैं। उदाहरण– English pronouncing dictionary by Daniel Jones, rev. and ed. By A C Gimson, London, 1977.

NBC Handbook of pronunciation, comp. by James F Bender and rev by Thomas Lee Crowell, Jr., New York, Croell 1964.

- **वर्तनी शब्दकोश** : ये शब्दकोश शब्दों को परिभाषित नहीं करते, अपितु ये कुछ चयनित शब्दों की सूचना देते हैं जिनके हिस्से करना कठिन होता है। इनमें अधिकतर वे शब्द शामिल किए जाते हैं जिनके हिस्से उच्चारण के आधार पर नहीं किए जाते हैं।

  उदाहरण– Cassell's spelling dictionary, comp. By Marry Waddington 1959.

- **पर्याय एवं विलोम कोश** : ये कोश समानार्थ एवं विलोम शब्दों की जानकारी देते हैं। इनमें शब्दों के साथ उनके पर्यायवाची और विलोम दोनों प्रकार के शब्दों की व्याख्या, प्रयोग किए हुए होते हैं।

  उदाहरण– Webster's New Dictionary of synonyms: A D dictionary of Discriminated synonyms and analogous and contrasted words, G & C Mettiam Co, 1980.

- **व्युत्पत्ति एवं ऐतिहासिक शब्दकोश** : इन शब्दकोशों में शब्दों का ऐतिहासिक विवरण दिया हुआ होता है। यह विवरण उदाहरणों के द्वारा दर्शाया जाता है, अर्थात लेखक का नाम तथा कृति का नाम जिसमें लेखक ने शब्द का प्रयोग किया हो यह विवरण कृति के प्रकाशन के वर्ष से व्यवस्थित होता है। इसमें शब्द की विस्तृत सूचना जैसे व्युत्पत्ति, इतिहास, प्रयोग, उच्चारण आदि की जानकारी दी हुई होती है।

  उदाहरण– Oxford English dictionary on historical principles, Oxford clarendon press, 1933, 10 vols supplements.

- **बोली का शब्दकोश** : कुछ शब्द ऐसे होते हैं जो कि भिन्न उच्चारण, वाक्यांश, वर्तनी के साथ एक भौगौलिक क्षेत्र की बोली से बोले जाते हैं तथा इनकी जानकारी भाषा के सामान्य शब्दकोश में उपलब्ध नहीं होती है। इसलिए इनके लिए प्रथक शब्दकोश का निर्माण किया जाता है।

  उदाहरण– English dialect dictionary; being the complete vocabulary of all dialect works still in use, or known to have been in use during the last 200 years by joseph wright, London, frowde, 18980905,-6 vols.

3. **अनुवाद करने में सहायक शब्दकोश** : इस प्रकार का शब्दकोश अनुवाद कार्य करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। द्विभाषी या बहुभाषी होते हैं। इनमें सीमित शब्दावली होती है। इनमें शब्दों की परिभाषा नहीं होती बल्कि दूसरी भाषा में प्रयुक्त समान शब्द दिए होते हैं।

   उदाहरण– Twenty one language dictionary by H. L. ouseg – owen, 1962.

   - Harrap's new standard French and English dictionary, ed by J. E. Mansion, completely revised and enlarged edition by R P L ledesert

and Margaret ledersel, London, harrap, new york scribner, 1972, 1982.

- French English Science and technology Dictionary by Louis devries, revised and enlarged by S. Hochman, 4th ed., New York, McGraw Hill, 1976.
- A dictionary of English and Sanskrit, by Sir Monitor Williams, लखनऊ, अखिल भारतीय संस्कृत परिषद, 1956.
- भारतीय व्यवहार कोश, विश्वनाथ दिनकर नवायो, सं., बम्बई, त्रिवेणी संगम, 1961.

टिप्पणी

4. **विषय शब्दकोश** : विषय शब्दकोश में एक विषय या विषय समूह के प्रमुख पदों की वर्ण क्रमानुसार व्यवस्थित सूची होती है। इनमें पदों के अर्थ, परिभाषा एवं व्याख्या दी जाती है। विषय के अध्ययन को सरल करने के उद्देश्य से इनका निर्माण किया जाता है।

   उदाहरण– McGraw Hill Dictionary of modern economics, new york, mc graw hill.

5. **इलेक्ट्रोनिक शब्दकोश** : आजकल ऐसे कम्प्यूटर प्रोग्राम उपलब्ध हैं जो शब्दकोश के सारे काम करते हैं। वे कागज पर मुद्रित नहीं हैं। वे उपयोग की दृष्टि से बहुत ही सुविधाजनक होते हैं और ऐसे बहुत से काम कर सकते हैं जो परंपरागत शब्दकोश नहीं कर सकते जैसे शब्द का उच्चारण ध्वनि के माध्यम से देना आदि।

शब्दकोश की उपयोगिता

शब्दकोशों की उपयोगिता उनके उद्देश्य एवं शब्दकोश में दी गई सूचना पर निर्भर करती है। प्रयोक्ता विभिन्न प्रकार के शब्दकोशों का उपयोग करते हैं। भाषा को समझने में जो भी कठिनाई सामने आती है उसका निराकरण शिक्षकों के अलावा शब्दकोश से ही होता है। इसकी उपयोगिता को निम्नलिखित बिंदुओं से समझा जा सकता है–

- शब्दों का अर्थ, उच्चारण, वर्तनी को जानने के लिए शब्दकोश का प्रयोग किया जाता है।
- इनमें शब्द का व्युत्पत्ति शब्द के प्रयोग आदि की सूचना मिलती है।
- कई शब्दकोश संकेताक्षर, बाट, माप तोल, विभिन्न देशों की मुद्रा, प्रमुख व्यक्तियों एवं स्थानों के बारे में सूचना देते हैं।
- सामान्य शब्दकोश में शब्दों का इतिहास का पता चलता है, तथा यह भी पता चलता है कब इसके अर्थ के प्रयोग में परिवर्तन हुआ।
- शब्दकोश के निरंतर उपयोग से पाठक अपनी शब्दावली को बढ़ा सकता है, तथा अपनी भाषा में सुधार कर सकता है।
- विशिष्ट शब्दकोशों के निरंतर उपयोग से शब्दों के पर्यायवाची, समानार्थी एवं विलोम शब्दों को खोजने तथा अर्थ जानने तथा उनका सही प्रयोग एवं उच्चारण करने में मदद मिलती है।

- कहावतों, मुहावरों का अर्थ भी शब्दकोशों से सहजता से पता लगाए जाते हैं।
- विदेशी भाषा के शब्दों के अर्थ जिनका समावेश अन्य भाषा में हो गया है उनका पता भी शब्दकोशों से लग जाता है।
- द्विभाषीय या बहुभाषी शब्दकोश की आवश्यकता अनुवाद का कार्य करने में पड़ती है।

टिप्पणी

शब्दकोश

- शब्दकोश को शब्दों का खजाना कहा जाता है। इसमें किसी एक भाषा के समुदाय में प्रयुक्त होने वाले शब्दों का संचयन किया जाता है।
- शब्दकोश में शब्दों को योजनाबद्ध तरीके से दर्ज किया जाता है और साथ में शब्दों की व्युत्पत्ति, स्रोत, लिंग एवं शब्दरूप आदि के बारे में जानकारी दी जाती है।

विश्वकोश

विश्वकोश का अर्थ है विश्व के समस्त ज्ञान का भंडार। यह एक ऐसी पुस्तक या पुस्तकों का समुच्चय है जिसमें ज्ञान की विभिन्न शाखाओं या कुछ अन्य व्यापक क्षेत्रों के साथ सूचनात्मक लेखों को वर्णानुक्रम में व्यवस्थित किया जाता है। इसमें सामान्यतः लोगों, स्थानों, घटनाओं तथा वस्तुओं के बारे में जानकारी रहती है। यह जानकारी ज्ञान के सभी क्षेत्रों के साथ या किसी एक विशेष क्षेत्र के साथ संबंधित हो सकती है। सामान्य विश्वकोश में ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र की सूचना शामिल होती है जबकि विशिष्ट विश्वकोश ज्ञान के किसी विशिष्ट क्षेत्र पर ज्यादा विस्तारपूर्वक एवं तकनीकी सूचना प्रदान करते हैं जैसे कला, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी या सामाजिक विज्ञान। विशिष्ट विश्वकोश को हम विषय विश्वकोश के नाम से भी जानते हैं। अधिकांश विश्वकोश वर्णक्रमानुसार व्यवस्थित होते हैं जबकि कुछ विश्वकोश को विषयानुसार व्यवस्थित किया जाता है। उदाहरण के लिए किसी विश्वकोश में एक खंड में 'जानवर' दूसरे में 'पौधे', फिर पृथ्वी, ब्रह्मांड आदि विषय व्यवस्थित किए जा सकते हैं।

एक विश्वकोश वस्तुओं के कौन, क्या, कहां, कब, कैसे को समझाता है। सामान्य विश्वकोश सामान्य ज्ञान में वृद्धि करने, ज्ञात प्रकरणों पर सूचना प्रदान करने एवं लेखों के अंत में ग्रंथसूची प्रदान करते हैं, जिससे प्रकरण पर ज्यादा सूचना ढूंढ़ने में सहायता मिलती है। किसी भी विश्वकोश में विभिन्न आलेखों का आकार एक अनुच्छेद से लेकर सौ से अधिक पृष्ठों का भी हो सकता है। उदाहरण के लिए 'मोबाइल' पर लेख यह बताता है कि मोबाइल क्या है साथ ही इसे किसने, कब एवं कहां विकसित किया है और यह कैसे कार्य करता है तथा लोगों के लिए यह क्यों महत्वपूर्ण है।

विश्वकोश का निर्माण विशेषज्ञों के समूह द्वारा किया जाता है। मानक विश्वकोश में आलेख विषय विशेषज्ञों द्वारा लिखे जाते हैं और बाद में विश्वकोश संपादकों द्वारा विषय के पदों, शैली एवं विराम चिह्नों में विश्वकोश की नीतियों के अनुरूप इनका सम्पादन किया जाता है। संपादकीय मंडल ही यह सुनिश्चित करता है कि प्रत्येक आलेख लिखने की शैली समान हो और ये ही शीर्षक एवं उपशीर्षक का भी निर्धारण करते हैं।

विश्वकोश के प्रकार

विश्वकोश को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं–

(1) **सामान्य विश्वकोश** : यह ज्ञान के सभी क्षेत्रों से संबंधित होता है। जैसे एनसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटानिका।

सामान्य विश्वकोश के उदाहरण–

- **एनसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटानिका** : यह अंग्रेजी भाषा का एक सामान्य विश्वकोश है, जिसमें 32640 (मुद्रित) पृष्ठ हैं। इसके 32 वॉल्यूम प्रकाशित हो चुके हैं। इसमें प्रकाशित लेखों का मुख्य उद्देश्य वयस्कों को शिक्षित करना है।
- **ब्रिटानिका स्टूडेंट्स एनसाइक्लोपीडिया** : यह 16 खंडों में प्रकाशित है जिसमें 2300 से भी ज्यादा लेखों के साथ 3300 चित्र, रेखाचित्र, चार्ट्स एवं सारणियां हैं जो इसे छात्रों के लिए रुचिकर एवं उपयोगी बनाती हैं। विश्वकोश में विश्व के विभिन्न देशों के 1000 मानचित्र एवं झंडे हैं।
- **एनसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटानिका ऑनलाइन** : 32 खंडीय ब्रिटानिका विश्वकोश में पाठ्य के अतिरिक्त कई लेख एवं चित्र शामिल होते हैं जो ऑनलाइन उपलब्ध होते हैं। इसमें 1,20,000 से अधिक लेख हैं। यह साइट प्राकृतिक भाषा में खोजने तथा ए से जेड तक अवलोकन की सुविधा प्रदान करती है। सामयिक सूचना प्रदान करने के लिए इसको अधिकतर निरंतर अद्यतन बनाए रखते हैं। इसमें दि न्यूयार्क टाइम्स तथा बीबीसी से समाचार प्रतिवेदनों के लिए लिंक्स भी हैं जो कुछ शुल्क देकर देखे जा सकते हैं। इसके लिए विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा पुस्तकालयों को विशेष शुल्क योजनाएं प्रस्तुत की जाती हैं।

(2) **विषयगत विश्वकोश** : विषयगत विश्वकोश में एक विषय या विषयों के समूह से संबंधित जानकारी होती है, जैसे एनसाइक्लोपीडिया ऑफ फिजिक्स, एनसाइक्लोपीडिया ऑफ साइन्स एंड टेक्नालजी। ये ज्ञान के विशिष्ट क्षेत्र में विस्तारपूर्ण सूचना प्रदान करते हैं, जैसे कलाएं एवं मानविकी, विज्ञान व प्रौद्योगिकी, सामाजिक विज्ञान इत्यादि। ऐसे बहुत सारे विषयगत विश्वकोश हजारों हैं जो विस्तृत विषय क्षेत्र से लेकर संकीर्ण विषय क्षेत्र तक सीमित हैं।

विषयगत विश्वकोश के उदाहरण–

- **मैक्ग्रो–हिल्स एनसाइक्लोपीडिया ऑफ साइन्स एंड टेक्नालजी** : इसके बहुत से संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं जो अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित हैं। यह 20 खंडीय, विशेष तौर पर वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों पर केंद्रित विश्वकोश है। इसमें जीव विज्ञान, शारीरिक विज्ञान के साथ ही इंजीनियरिंग व प्रौद्योगिकी पर प्रकरण सम्मिलित हैं।
- **एनसाइक्लोपीडिया ऑफ लाइब्रेरी एंड इन्फॉर्मेशन साइन्स** : एलेन केण्ट द्वारा संपादित विश्वकोश 35 खंडों का समुच्चय है। यह ग्रंथालयाध्यक्षों, सूचना/कम्प्यूटर वैज्ञानिकों व ग्रंथालय एवं सूचना विज्ञान के छात्रों, पुस्तकालय व सूचना विज्ञान के साधनों तथा विधियों को सुविधापूर्वक

टिप्पणी

अधिगम प्रदान करता है। इसमें 1300 से अधिक विषय विशेषज्ञों द्वारा लिखित लेख हैं।

इसके अतिरिक्त कुछ महत्वपूर्ण विश्वकोशों की सूची यहां दी गई हैं–

टिप्पणी

Walter, S. Monroe, ed. (1968). Encyclopaedia of Educational Research, American Education Research Association, Revised ed., The Macmillan Co., New York.

Henry, D. Rivlin and Schueller, H. (1943). Encyclopaedia of Modern Education, Philosophical Library, New York.

Paul Monroe, ed. (1911). Encyclopaedia of Education, The Macmillan Co., New York.

Ralph, B. winn. Ed., (1943). Encyclopaedia of Child Guidance, Philosophical Library, New York.

Rajput, J.S. (2004). Encyclopedia of Indian Education. Volume I (A-K), N.C.E.R.T.] New Delhi.

Rajput, J.S. (2004). Encyclopedia of Indian Education Volume II. (L-Z), NCERT, New Delhi-

Monroe, P. (2006). Encyclopedia of Teaching Methods, Cosmo Publications, New Delhi.

समाचारपत्र एवं पत्रिकाएं

समाचारपत्र अथवा अखबार समाज और देश में हो रही घटनाओं पर आधारित एक प्रकाशन है। इसमें मुख्यतः ताजी घटनाएं, खेल–कूद, व्यक्तित्व, राजनीति, विज्ञापन की जानकारियां छपी होती हैं। समाचारपत्र संचार के साधनों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। ये कागज पर शब्दों से बने वाक्यों को लिखकर या छापकर तैयार होते हैं। अधिकांश समाचारपत्र दैनिक होते हैं लेकिन कुछ समाचारपत्र साप्ताहिक, मासिक एवं छमाही भी होते हैं। अब तो समाचारपत्र विशिष्ट उदेश्यों के साथ भी निकाले जाते हैं जैसे एम्प्लायमेंट न्यूज, इकोनोमिक टाइम्स इत्यादि। स्थानीय स्तर के समाचारपत्र स्थानीय भाषाओं में और स्थानीय विषयों पर केन्द्रित होते हैं जबकि राष्ट्रीय स्तर के समाचारपत्रों में खबरों का केंद्र बिन्दु राष्ट्रीय स्तर की खबरें होती हैं।

भारत में ब्रिटिश शासन के एक पूर्व अधिकारी के द्वारा अखबारों की शुरुआत मानी जाती है, लेकिन उसका स्वरूप सामान्य अखबारों की तरह नहीं था। वह केवल एक पन्ने का सूचनात्मक पर्चा था। पूर्णरूपेण अखबार बंगाल से 'बंगाल गजट' के नाम से वायसराय हिक्की द्वारा निकाला गया था। आरंभ में अंग्रेजों ने अपने फायदे के लिए अखबारों का इस्तेमाल किया, चूंकि सारे अखबार अंग्रेजी में ही निकल रहे थे, इसलिए बहुसंख्यक लोगों तक खबरें और सूचनाएं पहुंच नहीं पाती थीं। जो खबरें बाहर निकलकर आती थीं उन्हें काफी तोड़–मरोड़कर प्रस्तुत किया जाता था, ताकि अंग्रेजी सरकार के अत्याचारों की खबरें दबी रह जाएं। इस दौरान भारत में 'द हिंदुस्तान टाइम्स', 'नेशनल हेराल्ड', 'पायनियर', 'मुंबई–मिरर' जैसे अखबार अंग्रेजी में निकलते थे, जिनमें उन अत्याचारों का दूर–दूर तक उल्लेख नहीं रहता था। इन अंग्रेजी पत्रों के अतिरिक्त बंगला, उर्दू आदि में पत्रों का प्रकाशन तो होता रहा, लेकिन उनका दायरा

सीमित था। उन्हें कोई बंगाली पढ़ने वाला या उर्दू जानने वाला ही समझ सकता था। ऐसे में पहली बार 30 मई, 1826 को हिन्दी का प्रथम पत्र 'उदंत मार्तंड' का पहला अंक प्रकाशित हुआ। भारत में समाचारपत्रों का इतिहास यूरोपीय लोगों के भारत में प्रवेश के साथ ही प्रारम्भ होता है। सर्वप्रथम भारत में प्रिंटिग प्रेस लाने का श्रेय पुर्तगालियों को दिया जाता है। 1557 ई. में गोवा के कुछ पादरी लोगों ने भारत की पहली पुस्तक छापी। 1684 ई. में ही ईस्ट इंडिया कम्पनी ने भारत में प्रथम प्रिंटिग प्रेस (मुद्रणालय) की स्थापना की।

टिप्पणी

पहला भारतीय अंग्रेजी समाचारपत्र 1816 ई. में कलकत्ता में गंगाधर भट्टाचार्य द्वारा 'बंगाल गजट' नाम से निकाला गया। यह साप्ताहिक समाचारपत्र था। 1818 ई. में मार्शमैन के नेतृत्व में बंगाली भाषा में 'दिग्दर्शन' मासिक पत्र प्रकाशित हुआ, लेकिन यह पत्र अल्पकालिक सिद्ध हुआ। इसी समय मार्शमैन के संपादन में एक और साप्ताहिक समाचारपत्र 'समाचार दर्पण' प्रकाशित किया गया। 1821 ई. में बंगाली भाषा में साप्ताहिक समाचारपत्र 'संवाद कौमुदी' का प्रकाशन हुआ। इस समाचारपत्र का प्रबन्ध राजा राममोहन राय के हाथों में था। राजा राममोहन राय ने सामाजिक तथा धार्मिक विचारों के विरोधस्वरूप 'समाचार चंद्रिका' का प्रकाशन मार्च 1822 ई. में किया। इसके अतिरिक्त राय ने 1822 में फारसी भाषा में 'मिरातुल' अखबार एवं अंग्रेजी भाषा में 'ब्राह्मनिकल मैगजीन' का प्रकाशन किया।

समाचारपत्रों के लाभ

- समाचारपत्रों के द्वारा ही हमें देश–विदेश में घट रही प्रत्येक घटना की जानकारी मिलती है।
- समाचारपत्र हमारे लिए न केवल जानकारी का स्रोत हैं बल्कि ये हमारे लिए मनोरंजन का साधन भी हैं। इनमें कहानियां, कविताएं, कार्टून, फिल्म समीक्षा आदि शामिल रहते हैं। इसके अतिरिक्त आज के समय में कई अच्छे और बड़े अखबार मुख्य अखबार के साथ–साथ छोटी प्रतियां भी देते हैं, जो मनोरंजन का साधन बनती हैं।
- समाचारपत्र बच्चों के लिए भी काफी उपयोगी हैं। ये भाषा कौशलों के विकास में सहायक होते हैं। इनसे बच्चों में पढ़ने की आदत का विकास किया जा सकता है।
- समाचारपत्रों में प्रकाशित विज्ञापनों के जरिए हमें काफी जानकारियां प्राप्त होती हैं।
- समाचारपत्रों से हमें विभिन्न सरकारी नीतियों एवं योजनाओं की जानकारी भी प्राप्त होती है।
- समाचारपत्रों से हमें विभिन्न खेलों की भी जानकारी मिलती है अतः ये खेलों के महत्व को बढ़ाने में भी सहयोग देते हैं।

वर्तमान समय में समाचारपत्रों की उपयोगिता बढ़ गई है परंतु इनकी कुछ खामियां भी हैं जैसे विज्ञापनों का बहुत अधिक होना, समाचारपत्रों पर किसी प्रभावशाली व्यक्ति का प्रभाव होना, कुछ विशेष खबरों पर ही फोकस करना और कुछ को प्रकाशित न करना, समाचारपत्रों की अशुद्ध भाषा आदि। इन सब कमियों के बावजूद समाचारपत्रों

टिप्पणी

का अपना महत्व है। हालांकि वर्तमान समय में इंटरनेट के आने से इनके स्वरूप में भी काफी परिवर्तन आ गया है। एक वक्त था जब कोई भी खबर हमारे पास एक दिन बाद पहुंचती थी, परंतु आज इंटरनेट के युग में हम समाचारपत्रों को भी ऑनलाइन पढ़ सकते हैं और हमें खबर तुरंत मिल जाती है। वर्तमान समय के कुछ मुख्य समाचारपत्र हैं– जनसत्ता (कोलकाता, दिल्ली, मुंबई), नवभारत टाइम्स (मुंबई, दिल्ली), हिंदुस्तान (दिल्ली, पटना, लखनऊ, वाराणसी), पंजाब केसरी (दिल्ली, जालंधर), राष्ट्रीय सहारा (दिल्ली, लखनऊ, गोरखपुर), अमर उजाला (आगरा, बरेली, मेरठ), राजस्थान पत्रिका (जयपुर, बंगलोर), नई दुनिया (दिल्ली, इंदौर, भोपाल, ग्वालियर, जबलपुर, रायपुर, बिलासपुर), हिंदुस्तान टाइम्स (दिल्ली, पटना), टाइम्स ऑफ इंडिया (दिल्ली, पटना, मुंबई, अहमदाबाद), इंडियन एक्सप्रेस (दिल्ली, मुंबई, लखनऊ), इक्नोमिक्स टाइम्स (मुंबई), स्टेट्समैन (नई दिल्ली, कोलकाता), ट्रिब्यून (अंबाला, चंडीगढ़) आदि।

पत्रिकाएं

पत्रिकाएं खास विषयों पर लिखी जाती हैं। इनका प्रकाशन साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक, छमाही एवं वार्षिक भी हो सकता है। पत्रिकाएं भिन्न–भिन्न प्रकार की होती हैं। ये सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि विषयों पर लिखी जा सकती हैं।

कुछ पत्रिकाएं मुख्य रूप से बच्चों के लिए होती हैं। इनको बाल–पत्रिकाएं कहा जाता है। इनका प्रमुख उद्देश्य बच्चों का मनोरंजन करना एवं उनको जानकारी प्रदान करना होता है। कुछ पत्रिकाएं सामाजिक विकास के लिए होती हैं जिनमें समाज से जुड़ी जानकारी, समाज के कल्याण के लिए योजनाएं, समाज की समस्याओं पर विमर्श आदि शामिल होता है। धार्मिक पत्रिकाएं, धार्मिक सौहार्द को बढ़ावा देने के लिए प्रकाशित की जाती हैं। इसके अतिरिक्त पत्रिकाओं के और भी बहुत सारे प्रकार हैं जैसे विद्यालयी पत्रिका, साहित्यिक पत्रिका, फैशन पत्रिका, व्यंजन पत्रिका, शैक्षिक पत्रिका, प्रतियोगिता की तैयारी के लिए पत्रिकाएं इत्यादि।

शिक्षा के क्षेत्र में पत्रिकाओं का बहुत महत्व है। शैक्षिक एवं साहित्यिक पत्रिकाओं में विद्यार्थियों एवं शोधकर्ताओं द्वारा लिखे गए लेख, शोध–पत्र आदि प्रकाशित होते हैं। ज्ञानवर्धन के अतिरिक्त ये पत्रिकाएं उनके भाषिक कौशलों के विकास में सहायक होती हैं। शिक्षा की दृष्टि से कुछ महत्वपूर्ण पत्रिकाओं के नाम हैं–

Journal of All India Association for Educational Research

Journal of Educational Planning and Administration

Journal of Indian Education

Indian Education Review

Anveshika: Journal of Teacher Education

Indian Educational Abstract

School Science

भारतीय आधुनिक शिक्षा

प्राथमिक शिक्षा

भाषा शिक्षण में कैसे अनुमान लगाएं

टिप्पणी

भाषा की कक्षा में बच्चा अपने साथ बहुत कुछ साथ लेकर आता है। इनमें उसकी अपनी भाषा, उसके अनुभव, दुनिया को देखने का उसका अपना नजरिया शामिल है। बच्चे अपने घर–परिवेश से जो भी अनुभव साथ लेकर आते हैं वे बहुत ही समृद्ध होते हैं और कक्षा में उनका प्रयोग संसाधनों के रूप में किया जा सकता है। भाषा सीखने–सिखाने की प्रक्रिया के मूल में यह अवधारणा है कि बच्चे दुनिया के बारे में अपनी समझ और ज्ञान का निर्माण स्वयं करते हैं। यह निर्माण किसी के सिखाए जाने या जोर जबरदस्ती से नहीं बल्कि बच्चों के स्वयं के अनुभवों एवं आवश्यकताओं से होता है। इसलिए बच्चों को ऐसा वातावरण मिलना जरूरी है जहां वे बिना रोक–टोक के अपनी उत्सुकता के अनुसार अपने परिवेश की खोज–बीन कर सकें।

बच्चों के लिए विद्यालयों में इस प्रकार का वातावरण बनाने की आवश्यकता है जहां उनके अनुमानों द्वारा उनके सीखने की प्रक्रिया को बेहतर बनाया जा सके। इसका एक तरीका है बच्चों को समुचित पठन सामग्री उपलब्ध करवाना। पढ़ और लिख सकने के बारे में पूर्व–कल्पना शुरू में पैदा नहीं हो सकती। इसके लिए बच्चों को व्यापक स्तर पर विविध प्रकार की लिखित भाषा–सामग्री की जरूरत होती है। शोध बताते हैं कि यदि बच्चों को ऐसे माहौल में रहने का मौका मिले जहां उनके इर्द–गिर्द किताबें हो तो वे लिखित भाषा के बारे में अधिक सक्रियता से अनुमान लगा कर सीखते हैं। दूसरा, बच्चे को सहायक वातावरण देना आवश्यक है। पूर्व–कल्पनाओं/पूर्व अनुमानों की कोशिश और उनकी उत्पत्ति निर्भय और खुले वातावरण में ही संभव है। तीसरा, बच्चा बहुत हद तक मौखिक भाषा बड़ों के व्यवहार से सीखता हैं। बहुत सारे शब्द जो वह बोल नहीं पाता, उनका अनुमान लगाने का प्रयास करता है। वर्तमान समय में हमारी प्रारम्भिक कक्षाओं में वर्तनियों, उच्चारण की शुद्धता और सटीक पठन पर हद से ज्यादा जोर दिया जाता है। ऐसे में बच्चे के अनुमान लगाने की कोशिश पर ध्यान नहीं दिया जाता। चौथा, बच्चे के पठन कौशल के विकास में अनुमान लगाना बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। "पढ़ने की कुंजी अनुमान लगाने का कौशल है। इसमें अनुमान करना, छपे हुए शब्द को अर्थ से जोड़ना और अपने अनुमान का परीक्षण करना शामिल है अतः जरूरत है ऐसी ही सामग्री के स्रोत को ढूंढ़ने की फिर उचित सामग्री को सही जगह पर रखने की।" इसके लिए केवल पाठ्यपुस्तकों का प्रयोग ही नहीं बल्कि अन्य सामग्री का प्रयोग भरपूर किया जाए। इस प्रकार यदि देखा जाए तो अनुमान लगाना स्वयं में एक महत्त्वपूर्ण कौशल है जिसका उपयोग भाषा शिक्षण में एक संसाधन के रूप में किया जा सकता है।

1.5.2 भाषा शिक्षण में अधिगम स्रोतों का प्रयोग

शिक्षण में अधिगम स्रोतों का प्रयोग, शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया को अधिक रुचिपूर्ण एवं अर्थपूर्ण बना सकता है। यदि हम भाषा में कोई विषय पढ़ा रहे हैं तो कुछ वस्तुओं या सामग्रियों के उपयोग की सहायता से अधिगम को अधिक रुचिपूर्ण और अवधारणा की समझ को बेहतर बनाया जा सकता है। कहा गया है– 'एक चित्र हजारों शब्द बोलता है।'

पहले के समय में कक्षा में शिक्षण के लिए शिक्षण–अधिगम स्रोतों का प्रयोग बहुत ही कम हुआ करता था। परंतु वर्तमान में विद्यार्थी केन्द्रित उपागम से शिक्षण प्रक्रिया

टिप्पणी

में काफी बदलाव हुआ है। प्रत्येक बच्चे को व्यक्तिगत तौर पर या सामूहिक तौर पर सीखने की क्षमता बढ़ाने के लिए अधिक से अधिक सामग्री की आवश्यकता होती है। इसलिए शिक्षण सहायक के रूप में अधिगम स्रोतों का होना बहुत ही आवश्यक है। इनका उपयोग या तो बच्चों के द्वारा सीखने के लिए या फिर शिक्षकों के द्वारा शिक्षण सहायक के रूप में किया जाता है। इन स्रोतों को शिक्षक–अधिगम सहायक सामग्री (Teaching-learning material) कहा गया है। इन स्रोतों की सहायता से सीखना मजेदार बन जाता है और नई अवधारणाओं को भी आसानी से सीखा जा सकता है। आइए एक उदाहरण देखते हैं–

एक दिन कक्षा–1 की शिक्षिका मिस रेणु कक्षा में कई प्रकार के फल एवं सब्जियां लेकर आईं और बच्चों से उन्हें पहचानने के लिए कहा। बच्चों ने फलों को इस प्रकार पहचाना जैसे– सेब, संतरा, अमरूद और आम तथा सब्जियों को इस प्रकार पहचाना जैसे– हरा केला, बैंगन, लाल टमाटर और हरा पपीता। एक चीज को वे नहीं पहचान सकें जिससे आगे उस पर चर्चा होने लगी–

जीनत– "यह हरे टमाटर के जैसा दिखता है लेकिन इसकी त्वचा न तो चिकनी है और न ही चमकदार।

कृति– "शायद यह बैंगन की कोई किस्म हो, लेकिन यह आकार में बड़ा है, अपेक्षाकृत एक बड़े टमाटर के।"

जाहन्वी– "यह बैंगन या टमाटर की तरह मुलायम नहीं है।"

हितैषी– "शायद यह अमरूद हो? क्या मैं इसे बिना पकाये कच्चा खा सकती हूं?"

(शिक्षिका की अनुमति से हितैषी ने उसका एक टुकड़ा चख कर देखा)

जैसमीन– "क्या यह एक फल है या एक सब्जी है।"

हितैषी– "नहीं, यह फल नहीं हो सकता क्योंकि यह स्वादिष्ट नहीं है।"

तब शिक्षिका बीच में आई और स्पष्ट किया कि "हां, यह फल नहीं है, यह एक ग्रोमटो नाम की सब्जी है जिसको अभी हाल ही में बैंगन एवं टमाटर के बीजों के संकर नस्ल से विकसित किया गया है। इसलिए आप इन दो सब्जियों की इतनी समानता को इसमें देख सके।

यहां स्पष्ट है कि बच्चों ने सभी फलों एवं सब्जियों को देखकर एवं छूकर उनके बारे में अनुमान लगाया, उन पर चर्चा की, नई चीजों को पहचानने की कोशिश की और अपने तर्क भी दिए। नई वस्तु को पहचानने के लिए उस वस्तु एवं उसकी प्रकृति को जानने के लिए ज्ञात वस्तुओं के गुणों से मिलाकर उसकी तुलना करते हैं। यदि बच्चे अधिक वस्तुओं से परिचित हैं तो उनके लिए तुलनात्मक रूप से किसी विशेष गुण को पहचानना आसान होगा जो अन्य वस्तुओं के समान है।

पियाजे की संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाओं के अनुसार, 11–12 वर्ष की आयु तक, ज्ञात एवं स्थूल वस्तुओं का ज्ञानेन्द्रिय हस्तकौशल संज्ञानात्मकता के विकास में सहायक होता है। विशेष रूप से, 7 से 12 वर्ष की आयु के बच्चे स्थूल एवं परिचित वस्तुओं के हस्तकौशल की सहायता से मानसिक क्रियाकलाप करते हैं। इस अवस्था में सोचने या संज्ञानात्मकता की दिशा में जबरदस्त विकास होता है।

अधिगम स्रोत प्रयोग करने के उद्देश्य

टिप्पणी

- किसी भी स्तर पर, किसी भी विषय के शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए अधिगम स्रोतों का प्रयोग किया जाता है।
- विद्यार्थियों की विषय–वस्तु में रुचि उत्पन्न करने में एवं विद्यार्थियों में एकाग्रता विकसित करने में अधिगम स्रोत एक शिक्षक की बहुत सहायता करते हैं।
- अधिगम स्रोत किसी भी अमूर्त अवधारणा को समझने में सहायता करते हैं। ये अमूर्त अवधारणा को मूर्त रूप में हमारे सामने साकार करके अधिगम प्रक्रिया को सरल बना देते हैं।
- कई बार पाठ्यपुस्तकों में दी गई सामग्री बोझिल प्रतीत होने लगती है ऐसे में अधिगम स्रोत पठन सामग्री को मनोरंजक बनाने का कार्य भी करते हैं।
- अधिगम स्रोत विद्यार्थियों में अध्ययन रुचियों का विकास करके उनके कौशलों के विकास में सहायता करते हैं। ये विद्यार्थियों को क्रियाशील बनाते हैं।
- अधिगम स्रोत अक्सर ऐसी सूचनाओं एवं जानकारियों को भी रोचक बनाते हैं जो केवल तथ्यात्मक होने के कारण नीरस प्रतीत होती हैं।
- अधिगम स्रोत विद्यार्थियों के अधिगम में सहायक होने के साथ–साथ उनमें सृजनात्मकता भी उत्पन्न करता है।

अधिगम स्रोतों के अनेक रूप हो सकते हैं जैसे–

- विषय सामग्री को प्रस्तुत करने वाली पाठ्यपुस्तकें।
- शिक्षण–अधिगम के लिए आवश्यक साधन– श्यामपट्ट।
- विषय सामग्री को स्पष्ट करने के लिए शाब्दिक/मौखिक उदाहरण।
- दृश्य–श्रव्य साधन

पाठ्यपुस्तकें भाषा शिक्षण में किस प्रकार महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, यह हम पढ़ चुके हैं। यहां हम अन्य स्रोतों के बारे में पढ़ेंगे–

श्यामपट्ट

शायद ही हमारी कोई भी शिक्षण प्रक्रिया श्यामपट्ट के बिना पूरी होती हो। केवल भाषा में ही नहीं, बल्कि कोई भी विषय श्यामपट्ट का प्रयोग किए बिना भलीभांति नहीं पढ़ाया जा सकता। भाषा के पाठों में शब्दार्थ, शब्द–रचना के उदाहरण, उच्चारण, वर्तनी आदि बताते समय श्यामपट्ट पर इनका उल्लेख करना आवश्यक हो जाता है। बिना श्यामपट्ट के कक्षा अधूरी है। कक्षा में श्यामपट्ट की आवश्यकताएं निम्नलिखित हैं–

- श्यामपट्ट पर पाठ के महत्वपूर्ण अंशों, तथ्यों, शब्दार्थों आदि के उल्लेख से छात्रों का ध्यान अपने–आप उसकी ओर आकृष्ट हो जाता है।
- कक्षा में मौखिक शिक्षण के साथ–साथ यदि श्यामपट्ट पर भी लिखा जाता है तो बच्चों की दृश्य इंद्रियां सक्रिय हो जाती हैं जिससे ज्ञान सुदृढ़ और स्थायी होता है।
- पाठ के कठिन स्थलों को चित्र, डायग्राम, रेखाचित्र आदि द्वारा अथवा शब्दार्थ, व्याख्या, उदाहरण आदि के उल्लेख द्वारा सरल एवं सुबोधपूर्ण बनाया जा सकता है।

टिप्पणी

विषय सामग्री को स्पष्ट करने के लिए शाब्दिक अथवा मौखिक उदाहरण

कई बार किसी कठिन विषय को पढ़ाते हुए या किसी अमूर्त अवधारणा को समझाते हुए हमें कुछ उदाहरणों की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए शिक्षक को पाठ योजना बनाते हुए यह तय कर लेना चाहिए कि वह पढ़ाते हुए किन उदाहरणों का प्रयोग कर सकता है। उदाहरण बच्चों की क्षमता के अनुकूल दिए जाने चाहिए। इसके अंतर्गत विभिन्न मुहावरे, सूक्तियां, जनश्रुतियां, प्रसिद्ध कथन, कहानी, चुट्कुले, यात्राओं के विवरण, प्रसिद्ध पद्य या कवितायें आदि भाषा के ऐसे ही मान्य रूप हैं जिनके द्वारा कठिन से कठिन भावों को सरल, स्पष्ट एवं मूर्त बनाया जा सकता है।

दृश्य–श्रव्य साधन

दृश्य उदाहरण– वास्तविक पदार्थ, मॉडल, चित्र, रेखाचित्र, मानचित्र, ग्लोब, पोस्टर, चार्ट आदि।

श्रव्य उदाहरण– रेडियो, ग्रामोफोन, टेपरिकोर्डर आदि।

दृश्य–श्रव्य उदाहरण– जो दृश्य एवं श्रव्य दोनों हैं जैसे चलचित्र, टेलिविजन, कम्प्यूटर आदि।

दृश्य–श्रव्य साधनों का चयन एवं उपयोग

- दृश्य–श्रव्य साधनों का चयन कक्षा की स्थिति एवं अवसर के अनुसार होना चाहिए। अनावश्यक सामग्री का प्रयोग अधिगम प्रक्रिया को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकता है। विषय–वस्तु की दृष्टि से उचित सामग्री का चयन करना चाहिए।
- सामग्री ऐसी होनी चाहिए जो सुगमतापूर्वक उपलब्ध हो, जिस पर अनावश्यक व्यय न करना पड़े।
- यदि विषय–वस्तु घटना प्रधान है तो दृश्य सामग्री अधिक उपयोगी होती है।
- दृश्य–श्रव्य साधनों का प्रयोग आवश्यकता पड़ने पर ही किया जाना चाहिए। भाषा शिक्षक का मुख्य कार्य भाषा एवं साहित्य पढ़ाना है इसलिए यह भी आवश्यक है कि इन साधनों का प्रयोग करते हुए भाषा एवं साहित्यिक ज्ञान को इससे जोड़ा जाए।
- कक्षा में सामग्री रखने की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। उनका प्रयोग करते हुए छात्रों का सहयोग लेना चाहिए। एक ही सामग्री का बार–बार प्रयोग करने से बचना चाहिए। सामग्री का प्रयोग करने के बाद उस पर विचार–विमर्श होना चाहिए और चर्चा के पर्याप्त अवसर दिए जाने चाहिए।
- इन सामग्री का प्रयोग पाठ के प्रारम्भ, मध्य और अंत तीनों अवस्थाओं में किया जा सकता है। आरंभ में जिज्ञासा उत्पन्न करने हेतु, मध्य में व्याख्या हेतु और अंत में पुनरावृत्ति हेतु उदाहरणों का प्रयोग किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त भी काफी अधिगम स्रोत हो सकते हैं जिनका प्रयोग शिक्षक पर निर्भर करता है। शिक्षक स्वयं भी अधिगम स्रोत विकसित कर सकते हैं। इनमें पूरक पुस्तकें, प्रश्न बैंक, कार्य–पत्रिकाएं, भित्ति पत्रिकाएं, पुस्तकालय जैसे अन्य स्रोत भी शामिल हैं।

1.5.3 कम्प्यूटर, इंटरनेट, इंटरनेट वेबसाइट, विकिपीडिया एवं ई–संसाधनों का प्रयोग

टिप्पणी

आधुनिक समय में लगभग सभी क्षेत्रों में कम्प्यूटर के महत्व और उपयोगिता से हम सभी भलीभांति परिचित हैं। शिक्षा से लेकर हमारा घूमना–फिरना, खान–पान, मनोरंजन, स्वास्थ्य, चिकित्सा, व्यापार और खेल–कूद आदि जिस किसी भी क्षेत्र पर दृष्टि डालें, कम्प्यूटर प्रत्येक जगह मौजूद मिलेगा। आज हम टी.वी. के सामने बैठकर जो भी कार्यक्रम देखते हैं, वे सभी कम्प्यूटर द्वारा नियंत्रित तथा संचालित होते हैं। कम्प्यूटर अंतरिक्ष यानों के माध्यम से पृथ्वी पर सूचनाओं का आदान–प्रदान करता है और विश्व भर में कहीं भी बैठे लोगों का आपस में संपर्क कराता है। कम्प्यूटर की इतनी व्यापक उपयोगिता को देखते हुए शिक्षा और अधिगम प्रक्रिया इससे दूर कैसे रह सकते हैं?

शिक्षक द्वारा दिया जाने वाला कम्प्यूटर–सह अधिगम

एक शिक्षक अपने शिक्षण–कार्य के दौरान कम्प्यूटर का एक सहायक सामग्री के रूप में प्रयोग करके अपने शिक्षण कार्य को अत्यधिक प्रभावशाली बना सकता है। कम्प्यूटर के शैक्षिक उपयोगों का क्षेत्र इतना अधिक विस्तृत और व्यापक है कि उसके द्वारा जीवन के सभी पहलुओं को समझा जा सकता है। कम्प्यूटर तकनीकी ने आज इतनी अधिक प्रगति कर ली है कि दुर्लभ एवं असंभव से दिखने वाले ऐसे कार्य जिनके बारे में मनुष्य सोच भी नहीं सकता है, कम्प्यूटर द्वारा शीघ्रतापूर्वक बड़ी सरलता से किए जा सकते हैं। आज अनेक ऐसे कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर विकसित हो चुके हैं जो वर्तमान के साथ भूत और भविष्य की घटनाओं को भी एनिमेशन तकनीकी के द्वारा हमारे सामने सजीव रूप में उपस्थित कर देते हैं।

सहायक सामग्री के रूप में शिक्षक द्वारा कम्प्यूटर के उपयोग को निम्न प्रकार से वर्णित किया जा सकता है–

1. कम्प्यूटर की सहायता से बच्चों की सृजनात्मक प्रतिभा को विकसित किया जाता है जिससे वे नई–नई आकृतियां, चित्र, कार्यक्रम आदि का स्वयं निर्माण कर सकते हैं।
2. कम्प्यूटर के सह–अनुदेशन द्वारा शिक्षकों तथा छात्रों के मध्य ऐसे वातावरण का निर्मान होता है, जिसमें रोचकता, जिज्ञासा और सक्रियता तीनों का समावेश रहता है।
3. कम्प्यूटर छात्रों की अधिगम प्रक्रिया को उत्तेजित करता है, जिससे उनके अधिगम–कौशल में वृद्धि होती है।
4. कम्प्यूटर के द्वारा शिक्षण–कार्य को अत्यधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है।
5. शिक्षक कक्षा में जो कुछ पढ़ाता है, उसे कम्प्यूटर द्वारा सजीव रूप में दिखाया जा सकता है, जिससे छात्र वास्तविक रूप में ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।
6. शिक्षक के द्वारा प्रयुक्त सहायक सामग्री जैसे– मॉडल, ग्राफ, चित्र, चार्ट आदि को कम्प्यूटर के द्वारा आसानी से दिखाया जा सकता है।
7. शिक्षक कम्प्यूटर पर डिस्क, फ्लॉपी, आदि का प्रयोग करके संसार और अन्तरिक्ष की किसी भी घटना को सजीव रूप में प्रस्तुत कर सकता है।

टिप्पणी

8. शिक्षक अपने व्याख्यान को कम्प्यूटर में फीड करके जब चाहे तब प्रस्तुत कर सकता है, जिससे छात्र छूटी हुई सामग्री को पुनः समझ सकते हैं।
9. शिक्षक द्वारा दिए गए शिक्षण की सी.डी. बनवा कर लाखों बाहरी छात्र उसमें निहित ज्ञान का अपने अध्ययन में उपयोग कर सकते हैं।
10. कम्प्यूटर के द्वारा कम समय में अधिक जानकारियां प्रदान की जा सकती हैं।
11. कम्प्यूटर सह–शिक्षण के माध्यम से शिक्षक छात्रों के प्रश्नों के संतोषजनक तथा प्रामाणिक उत्तर दे सकते हैं।
12. कम्प्यूटर सह अनुदेशन में ग्राफिक्स व एनिमेशन तकनीक से प्राकृतिक दृश्यों, घटनाओं, लुप्त जीव जन्तुओं आदि पर सजीव फिल्में निर्मित की जा सकती हैं, जो छात्रों के ज्ञान में वृद्धि करती हैं।
13. कम्प्यूटर द्वारा छात्रों को स्वाध्याय तथा स्व–अधिगम के पर्याप्त अवसर प्राप्त होते हैं।
14. एक शिक्षक के रूप में भी कम्प्यूटर का उपयोग किया जा सकता है।
15. कम्प्यूटर के माध्यम से छात्रों की परीक्षा, मूल्यांकन, प्रगति–पत्र आदि से संबंधित सभी कार्य आसानी से किए जा सकते हैं।

कम्प्यूटर : एक शिक्षक के रूप में

शैक्षिक तकनीकी के अंतर्गत वास्तविक कम्प्यूटर सह अनुदेशन वही माना जाता है, जिसमें कम्प्यूटर एक शिक्षक की भूमिका का निर्वाह करते हुए छात्रों को स्वयं प्रेरित अंतः क्रियाओं के द्वारा स्व–अधिगम के अवसर उपलब्ध कराता है। कम्प्यूटर सह–अधिगम में शिक्षण मशीन के स्थान पर कम्प्यूटर का प्रयोग होता है।

यहां पर शिक्षण मशीन और कम्प्यूटर के अंतर को जान लेना अत्यंत आवश्यक है। प्रोफेसर एस.एल. प्रेसी. (S.L. Pressey) द्वारा 1927 में आविष्कृत शिक्षण मशीन एक ऐसी विद्युत चालित यांत्रिक मशीन है जो शिक्षण हेतु निर्धारित किए गए किसी विषय को लघु–अंशों में विभाजित करके एक निश्चित क्रम में छात्रों के सामने प्रस्तुत करती है और उन्हें कुछ प्रश्नों के उत्तर देने के लिए प्रेरित करती है। यह मशीन उत्तरों का शीघ्र मूल्यांकन करके छात्रों को प्रतिपुष्टि प्रदान करती है जो आगे बढ़ने का मार्ग प्रशस्त करती है जबकि कम्प्यूटर, शिक्षण मशीन की तुलना में बहुत बारीकी से बनाई गई एक व्यापक तथा बहुउद्देशीय मशीन है जिसका बहु आयामी उपयोग किया जा सकता है।

सी.ए.आई. (Computer Assisted Instruction) कम्प्यूटर का एक ऐसा सॉफ्टवेयर है, जो कम्प्यूटर को एक शिक्षक के रूप में परिवर्तित कर देता है। उदाहरणस्वरूप जैसे माध्यमिक स्तर का कोई छात्र कम्प्यूटर में लगाए गए किसी सी.ए.आई (CAI) में रसायन विज्ञान विषय का अध्ययन करे तो सी.ए.आई. कम्प्यूटर के पर्दे (Monitor) पर रसायन विज्ञान का एक प्रश्न हल करने के लिए प्रस्तुत करेगा। यदि छात्र इस प्रश्न का सही उत्तर देता है तो, सी.ए.आई. उसे अगला प्रश्न हल करने के लिए देगा, किन्तु यदि छात्र का उत्तर गलत होगा तो सी.ए.आई. अभ्यास के लिए उससे मिलता–जुलता एक प्रश्न और हल करने के लिए देगा। इस प्रकार सी.ए.आई. एक शिक्षक के रूप में कार्य करता चला जायेगा और अंत में छात्र को प्रगति पत्र भी देगा।

इसी प्रकार से छात्र किसी भी विषय में स्व–अध्ययन कर सकता है। इस प्रकार के अध्ययन की प्रक्रिया को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कहा जा सकता है कि छात्र जब कम्प्यूटर के समक्ष बैठता है तो उसमें चल रहा सॉफ्टवेयर शैक्षिक सामग्री को टेलिटाइपराइटर पर टाइप करता है। छात्र इस सामग्री पर अपना उत्तर की–बोर्ड (Key Board) पर टाइप कर देता है और आगे की प्रक्रिया ऊपर बताई गई विधि से पूरी की जाती है। इस विधि के द्वारा कम्प्यूटर छात्रों के एक बड़े समूह को भी शिक्षा प्रदान करने में समर्थ होता है।

टिप्पणी

सी.एम.आई. (Computer Managed Instruction) भी कम्प्यूटर का एक सॉफ्टवेयर है जो छात्रों को लेखों, पुस्तकों तथा अन्य प्रकार की अध्ययन सामग्री को पढ़ने की सुविधा प्रदान करता है। यह शिक्षक की शिक्षण प्रक्रिया को प्रशासित करने में भी सहायता प्रदान करता है। इस प्रकार के अनुदेशन अथवा अधिगम को कम्प्यूटर प्रशासित अनुदेशन (CMI) कहते हैं। इसमें छात्र और शिक्षक अपने लेखों को परस्पर संबद्ध करके अन्य कम्प्यूटरों में भी भेज सकते हैं जिससे अधिगम सामग्री एक कम्प्यूटर में सीमित रहकर भी दूर–दूर तक भेजी जा सकती है। इस विधि के द्वारा शिक्षक पाठ्यक्रम तथा मापन एवं मूल्यांकन संबंधी कार्य भी सफलतापूर्वक कर सकते हैं।

कम्प्यूटर सह–अनुदेशन के शैक्षिक उपयोग

कम्प्यूटर सह अनुदेशन के शैक्षिक उपयोग निम्नलिखित हैं–

1. यह शिक्षकों और छात्रों के लिए सूचनाओं का एक विशाल भण्डार है।
2. यह कुशल शिक्षकों की कमी की समस्या को कुछ सीमा तक दूर करने के लिए बहुत अधिक उपयुक्त है।
3. इस विधि के द्वारा प्राकृतिक–दृश्यों, घटनाओं और क्रियाओं का सजीव फिल्मांकन करके इनका सम्यक रूप से अध्ययन किया जा सकता है।
4. यह छात्रों को स्वयं–अधिगम के अवसर प्रदान करता है।
5. इस विधि से अनेक जटिल एवं रहस्यमय गुत्थियों को सुलझाया जा सकता है।
6. इस विधि द्वारा किए गए शिक्षण को एक कुशल शिक्षक द्वारा प्रदान किए गए शिक्षण के समान माना जा सकता है।
7. इसके द्वारा लेख, सूचनाएं आदि बिना अधिक धन व्यय किए अविलम्ब से दूर तक भेजी जा सकती हैं।
8. इस विधि के द्वारा पुस्तकालयों की भांती पुस्तकें, लेख, शोध–पत्र तथा पत्रिकाएं आदि पढ़ने की सुविधा प्राप्त होती है।
9. कम्प्यूटर में वीडियो सी.डी. का उपयोग करके किसी भी विषय का अध्ययन किया जा सकता है।
10. कम्प्यूटर की ई–मेल, ई–कॉम, इण्टरनेट, मल्टीमीडिया आदि सुविधाओं का लाभ शिक्षण में लिया जा सकता है।
11. मल्टीमीडिया के प्रभाव से भाषा–शिक्षण को सुगम व सरल बनाया जा सकता है।
12. विद्यालय की समय सारणी बनाने में कम्प्यूटर का प्रयोग किया जा सकता है।
13. कम्प्यूटर के माध्यम से कठिन विषयों को खेल–खेल में सरलता से समझाया जा सकता है।

टिप्पणी

14. विश्व–भर के छात्र व शिक्षक कभी–भी, कहीं भी आसानी से विचारों का आदान–प्रदान कर सकते हैं।
15. कम्प्यूटर द्वारा चित्रों, फिल्मों, प्रतिमानों और वस्तुओं के प्रदर्शन में इच्छानुसार रंगों का प्रयोग किया जा सकता है।
16. कम्प्यूटर का उपयोग करने के बाद शिक्षण में आकृतियों के चित्रांकन के लिए श्यामपट का उपयोग आवश्यक नहीं रह जाता है।
17. विद्यालय के प्रशासनिक कार्यों में भी कम्प्यूटर बहुत अधिक उपयोगी है।
18. त्रि–आयामी प्रभाव (Three Dimensional Effect) के द्वारा मॉडल, चित्र, वस्तुएं तथा अन्य सामग्री की वास्तविक अनूभूति कराई जा सकती है।
19. कम्प्यूटर के साथ प्रोजेक्टर संबद्ध कर देने पर संपूर्ण शिक्षण कार्य को लिखित रूप में पर्दे पर प्रदर्शित किया जा सकता है।
20. कम्प्यूटर शैक्षिक निदान एवं उपचार में भी अत्यंत लाभदायक होता है।
21. कम्प्यूटर छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न करने के लिए भी बहुत उपयोगी हो सकता है।
22. शिक्षा में होने वाली नयी खोजों, नई तकनीकों तथा नवाचारों से अवगत कराते रहने के लिए भी कम्प्यूटर–सह–अनुदेशन बहुत उपयोगी है।
23. यह विधि छात्रों में सृजनात्मकता, गणितीय कल्पनाओं आदि में वृद्धि व प्रेरणा के लिए बहुत उपयोगी है।
24. यह विधि दूरस्थ शिक्षा के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होती है।
25. कम्प्यूटर द्वारा मूल्यांकन का कार्य अत्यधिक शीघ्रता एवं मितव्ययिता के साथ किया जा सकता है।
26. यह विधि मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित है।
27. यह विधि शिक्षण के क्षेत्र में खेल, संगीत, कला आदि के समावेश की महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है।

अतः हम यह कह सकते हैं कि केवल शिक्षा ही नहीं आज कम्प्यूटर जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों में हमारे लिए आवश्यक हो गया है।

कम्प्यूटर–सह–अनुदेशन की क्रिया विधि

कम्प्यूटर सह–अनुदेशन की क्रिया–विधि में मुख्य रूप से शिक्षक, छात्र और कम्प्यूटर की भागीदारी होती है। सर्वप्रथम शिक्षक छात्र के लिए पाठ्य–विषय पर विचार करके समुचित रूप से प्रोग्राम किया हुआ कम्प्यूटर छात्र को उपलब्ध कराता है। इसके बाद छात्र कम्प्यूटर में फीड किए गए प्रोग्राम के अनुसार विषय वस्तु का अध्ययन कम्प्यूटर के की–बोर्ड तथा मानीटर की सहायता से करता है। अध्ययन के उपरांत कम्प्यूटर छात्र को अर्जित अधिगम के परीक्षण के लिए टेस्ट देता है। यदि छात्र प्रश्नों के सही उत्तर दे देता है, तो कम्प्यूटर उसके सामने अगली विषय–वस्तु प्रस्तुत कर देता है। किन्तु यदि छात्र गलत उत्तर देता है, तो उसकी गलतियों में सुधार करने हेतु या तो कम्प्यूटर द्वारा समुचित सुझाव दिए जाते हैं या प्रश्नों को हल करके दिखाया जाता है। यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती है, जब तक छात्र विषय–वस्तु का सम्यक अधिगम

नहीं कर लेता। इस प्रकार कम्प्यूटर छात्र के लिए अध्यापक की भूमिका का निर्वाह करते हुए प्रतिपुष्टि प्रदान करता है।

इंटरनेट

टिप्पणी

प्राचीनकाल में शिक्षा मौखिक एवं कंठस्थ रूप में प्रचलित थी। समय के साथ–साथ शिक्षा के स्वरूप में बदलाव आया। इसके बाद धीरे–धीरे शिक्षा उपकरणों के रूप में लिखित शब्दों का उपयोग होने लगा जिसके फलस्वरूप स्कूलों में मौखिक शिक्षा के साथ लिखित शिक्षा ने भी स्थान ले लिया। कुछ समय बाद मुद्रण के अविष्कार के साथ पुस्तकें उपलब्ध होने लगी। कम्प्यूटर, लैपटॉप, टेबलेट, मोबाइल, स्मार्ट फोन एवं सीडी–डीवीडी आदि के आने से संचार के क्षेत्र में विकास हुआ जिससे कि ईमेल, डिजिटल वीडियो, ई–बुक्स, ई–शिक्षा, ऑनलाइन शिक्षा और इंटरनेट के माध्यम से उच्च शिक्षा के क्षेत्र में एक नई क्रान्ति का उदय हुआ। इन साधनों ने शिक्षा के क्षेत्र में पुरानी अवधारणाओं में आधुनिक सन्दर्भ के साथ अभूतपूर्व परिवर्तन करके उन्हें एक नया स्वरूप प्रदान किया है।

आज के विद्यार्थी कॉलेज और विश्वविद्यालयों में शिक्षकों से केवल एक तिहाई शिक्षा अपने सहपाठियों से और बाकी स्व–अध्ययन के द्वारा प्राप्त करते हैं। केवल विश्वविद्यालय ही सीखने के स्रोत नहीं रहे हैं, न ही वे सभी को आजीवन शिक्षा के आधार पर उच्च शिक्षा, तकनीकी दक्षता और व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने की जिम्मेदारी उठा सकते हैं। आज मल्टीमीडिया और इंटरनेट के प्रयोग ने एक नए युग की शुरुआत कर दी है, जिसने विद्यार्थियों और शिक्षकों में नई उम्मीदें जगाई हैं।

नई तकनीक इंटरनेट सीखने वालों को लचीलापन प्रदान करती है। चूँकि ये सीखने वालों की सभी इन्द्रियों को परस्पर संबद्ध करती है, इसलिए सीखना और भी दिलचस्प हो जाता है। इन मशीनी इकाइयों द्वारा शिक्षा को मनोरंजन के साथ प्रदान करना भी आसान हो जाता है। इस प्रकार सूचना के इस युग में शिक्षा और कुछ नया सीखने के लिए नई तकनीकों का अधिक दिलचस्प और उचित ढंग से प्रयोग करना संभव हो गया है।

इंटरनेट दैनिक जीवन में परिवर्तन का माध्यम बन गया है। यह सूचना का एक बहुत बड़ा भण्डार है जिसने संसार की जानकारियों को एक जगह उपलब्ध करा कर एक अदभुत कार्य किया है। यह सभी विषयों पर सूचना उपलब्ध कराता है और संसार भर में कहीं भी इसे एक्सेस (Access) किया जा सकता है। इंटरनेट ने आज विद्यार्थियों को अपनी इच्छा, अपने समय और स्थान के अनुसार अपने अध्ययन को आगे बढ़ाने का अवसर दिया है। विद्यार्थी पाठ्य–सामग्री तक सरलता से पहुंच जाते हैं। इसमें विद्यार्थियों की सीधी पहुंच होती है और वे अध्ययन तथा सीखने के बजाए खोज करने से सीखते हैं। इस प्रकार सीखने की प्रक्रिया अपेक्षाकृत अधिक विद्यार्थी केन्द्रित बन जाती है। खोज की यह प्रक्रिया विद्यार्थियों को नई–नई सूचनाओं को एकत्रित करने के लिए प्रेरित करती है।

आज इंटरनेट का उपयोग जीवन के सभी क्षेत्रों में बढ़ता ही जा रहा है, जिससे इंटरनेट का विस्तार पूरी दुनिया में तेजी से होता जा रहा है। सरकारी, गैर–सरकारी, स्वास्थ्य, बैकिंग, खेल, समाचार के साथ प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च शिक्षा में इंटरनेट अपनी एक महत्वपूर्ण भूमिका को निभा रहा है। आज न केवल उच्च शिक्षा संस्थानों

बल्कि माध्यमिक व प्राइमरी स्कूलों के विद्यार्थियों की भी इंटरनेट से पढ़ाई करने में विशेष रुचि है। इंटरनेट के प्रसार के बाद भारत में सूचना और संचार के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन हुए हैं। विकासशील देशों में भारत की गणना उन देशों में होती है, जहां इंटरनेट उपभोक्ताओं की संख्या सबसे अधिक है।

टिप्पणी

शिक्षा के क्षेत्र में इंटरनेट

शिक्षा के क्षेत्र में इंटरनेट का उपयोग बहुतायत से किया जा रहा है। इसके उपयोग से शैक्षिक क्षेत्र में बहुत अधिक उन्नति हुई है। आज दुनिया के किसी भी कोने में बैठा विद्यार्थी इसकी सहायता से उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकता है। ई–शिक्षा (ई–लर्निंग) को सभी प्रकार से इलेक्ट्रॉनिक समर्थित शिक्षा और अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जाता है, जो विद्यार्थियों के व्यक्तिगत अनुभव, अभ्यास और ज्ञान के संदर्भ में ज्ञान के निर्माण को प्रभावित करती है। ई–शिक्षा में वेब आधारित शिक्षा, कम्प्यूटर आधारित शिक्षा और डिजिटल सहयोग शामिल है। पाठ्य सामग्रियों का वितरण इंटरनेट, ऑडियो–वीडियो टेप और सीडी रोम के माध्यम से किया जाता है। आजकल इंटरनेट का प्रयोग न केवल ई–शिक्षा में किया जा रहा है, बल्कि ऑनलाइन फॉर्म भरने और पुस्तकें पढ़ने में भी किया जा रहा है। आज के समय में विद्यार्थी शिक्षा के सभी क्षेत्रों में इंटरनेट का उपयोग कर रहे हैं।

आज शिक्षा के क्षेत्र में आधुनिक शिक्षण उपकरणों जैसे– मोबाइल, स्मार्ट फोन, लैपटॉप, टेबलेट, प्रोजेक्टर, भाषा प्रयोगशाला आदि द्वारा शिक्षण के प्रयोगों ने शिक्षा प्रक्रिया का मशीनीकरण कर दिया है। आज मशीनों के प्रयोग से शिक्षक अपने विद्यार्थियों को अपने ज्ञान कौशल से सरलता व सुगमता से लाभान्वित करा सकता है। शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षण मशीनों का उपयोग आज तेजी से बढ़ता जा रहा है।

विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा हेतु अनेक पुस्तकों की आवश्यकता होती है, जिन्हें खरीद पाना सबके लिए सम्भव नहीं होता है। इसके अतिरिक्त पुस्तकें महंगी और आसानी से उपलब्ध न होने के कारण विद्यार्थी ऑनलाइन पुस्तकें पढ़ना पसंद करते हैं। अतः ऑनलाइन पुस्तकों की उपलब्धता इन सभी विद्यार्थियों को लाभान्वित करती है। आजकल सभी प्रकार की पुस्तकों का विस्तारपूर्वक विवरण इंटरनेट पर उपलब्ध रहता है, जिससे ऑनलाइन पुस्तकें पढ़ने का प्रचलन अधिक हो गया है। विद्यार्थी इन पुस्तकों का उपयोग करके अपनी पूरी पढ़ाई कर लेते हैं।

ऑनलाइन शिक्षा

यदि विद्यार्थी किसी व्यवसाय में रहते हुए अपनी शिक्षा पूरी करना चाहते हैं या उनके पास कक्षा में जाने का समय नहीं है, तो इसके लिए विद्यार्थी दूरस्थ शिक्षा से संबंधित संस्थान में ऑनलाइन घर या ऑफिस में बैठे–बैठे अपनी पढ़ाई जारी रख सकते हैं। वे ऑनलाइन परीक्षा भी दे सकते हैं। इससे उच्च शिक्षा की ओर विद्यार्थियों का रुझान तेजी से बढ़ रहा है।

दूरवर्ती शिक्षा

शिक्षा के क्षेत्र में आज दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली का योगदान भी बढ़ता जा रहा है। दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली में मल्टीमीडिया एवं इंटरनेट का योगदान बहुत अधिक है। बहुत से व्यक्ति पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक समस्याओं और समय के अभाव के कारण उच्च

शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाते हैं, लेकिन उनके मन में पढ़ने की इच्छा रहती है। इस प्रणाली के द्वारा इच्छुक विद्यार्थी को उनके घरों पर ही शिक्षा मुहैया कराई जाती है। इस कार्य में मल्टीमीडिया, ऑडियो–वीडियो कैसेट, सीडी–डीवीडी, टेपरिकार्डर, वीडियो रिकार्डर, ई–मेल, इंटरनेट, वीडियो पत्रिकाएं आदि की सहायता ली जाती है। इसमें शैक्षिक गतिविधियों जैसे– प्रवेश प्रक्रिया, पाठ्य–सामग्री घर बैठे ही विद्यार्थियों को इलेक्ट्रॉनिक मीडिया एवं इंटरनेट के माध्यम से उपलब्ध कराई जाती है।

टिप्पणी

शिक्षा में टेलीकांफ्रेंसिंग

कांफ्रेंसिंग हेतु कम्प्यूटर व इंटरनेट द्वारा प्रदत्त बहु–माध्यमी सेवाओं का उपयोग किया जाता है। इंटरनेट सेवाओं द्वारा लिखित सामग्री, रेखाचित्रों आदि को कांफ्रेंसिंग में भाग लेने वाले व्यक्तियों को आसानी से प्रेषित कर सकते हैं। ऑडियो–वीडियो कांफ्रेंसिंग जब कम्प्यूटर टेक्नोलॉजी और इंटरनेट से अच्छी तरह जुड़ जाती है, तो ऐसी टेलीकांफ्रेंसिंग शिक्षक और विद्यार्थी दोनों को ही अपनी–अपनी स्वाभाविक रुचियों, समय और साधनों की उपलब्धता तथा सीखने–सिखाने की गति के आधार पर स्व–अनुदेशक एवं स्व–प्रशिक्षण प्रदान करती है। इससे विद्यार्थी शिक्षा के विषय में आपस में संवाद करने के साथ ही पाठ्य–सामग्री के विषय में भी संवाद कर सकते हैं।

एम–लर्निंग

आज के समय में मोबाइल लर्निंग (एम–लर्निंग) का भी चलन बहुत तेजी से बढ़ रहा है। आज मोबाइल विद्यार्थियों के साथ हर समय उपलब्ध रहता है, जिससे वे इंटरनेट से हमेशा जुड़े रहते हैं। परिणामस्वरूप आज विद्यार्थी मोबाइल सर्विसेज की अति आधुनिक तकनीक का उपयोग ई–बैंकिंग, ई–कॉमर्स तथा ई–लर्निंग में उसी प्रकार कर सकते हैं जिस प्रकार कम्प्यूटरों द्वारा इंटरनेट तथा वेब टेक्नोलॉजी से करते हैं।

ऑनलाइन प्रलेख वितरण सेवाएँ

आज वेबसाइट पर ऑनलाइन प्रलेख वितरण सेवाएं विश्व व्यापी रूप से उपलब्ध हैं। इन सेवाओं के द्वारा शोध आलेखों एवं अन्य प्रलेखों की छायाप्रतियों को प्राप्त किया जा सकता है।

ई–बुकशॉप

आज इंटरनेट पर ऑनलाइन बुकशॉप उपलब्ध हैं। इन पर विद्यार्थी अपनी रुचि के अनुसार प्रलेखों को खोज सकते हैं। उनके विषय में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं और उन्हें खरीद सकते हैं। इससे विद्यार्थियों के लिए पाठ्य–सामग्री के चयन में समय की बचत होती है।

आज सभी प्रमुख प्रकाशकों के होम पेज हैं और इंटरनेट पर इनके द्वारा प्रकाशित पाठ्य–सामग्री से सम्बन्धित संपूर्ण जानकारी उपलब्ध है। इसके साथ ही प्रकाशकों की पुस्तकों को विद्यार्थी ऑनलाइन खरीद सकते हैं।

ई–प्रकाशन

आज इंटरनेट ने जीवन के सभी क्षेत्रों में अपनी पहुंच को आसान किया है जिससे कि आज इंटरनेट पर किताबों की उपलब्धता में तेजी से बढ़ोतरी हुई है। इंटरनेट पर किताबें तथा पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित करना या उपलब्ध कराना ई–प्रकाशन कहलाता है और इस प्रकार की पुस्तकें ई–बुक्स कहलाती हैं। जिनको विद्यार्थी मुफ्त में या शुल्क देकर

पढ़ सकता है। आवश्यकतानुसार इनको डाउनलोड भी किया जा सकता है। ई–बुक्स की अधिकता से यह सिद्ध होता है कि विद्यार्थियों की रुचि इस ओर बढ़ती जा रही है।

डिजिटल पुस्तकालय

टिप्पणी

आज के समय में शिक्षा का स्तर तेजी से बदल रहा है। आज इंटरनेट ने विद्यार्थी के लिए शिक्षा को आसान बना दिया है। विद्यार्थी एक क्लिक पर अपने विषय से संबंधित संपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकता है। इंटरनेट ने दुनिया की किसी–भी जानकारी तक पहुंच को आसान किया है। इसमें पुस्तकों, शोध–पत्रों, ऑनलाइन लाइब्रेरी शोध–ग्रन्थों का अध्ययन विद्यार्थी अपनी रुचि के अनुसार कर सकते हैं। लाइब्रेरी में एक कैटलॉग होता है, जिससे पता चल जाता है कि लाइब्रेरी में कौन से प्रलेख उपलब्ध हैं।

इंटरनेट वेबसाइट

वेबसाइट (Website) सार्वजनिक रूप से इंटरनेट पर उपलब्ध वेब पेजों और संबंधित सामग्री का एक संग्रह होता है जिसे एक सामान्य डोमेन नाम (Domain Name) से जाना जाता है और कम से कम एक वेब सर्वर पर प्रकाशित किया जाता है। उदाहरणस्वरूप, जैसे– wikipedia.org, google.com और amazon.com हैं।

सार्वजनिक रूप से प्राप्त सभी वेबसाइटें सामूहिक रूप से वर्ल्ड वाइड वेब का गठन करती हैं। कुछ ऐसी निजी वेबसाइटें भी हैं जिन्हें केवल एक निजी नेटवर्क पर ही एक्सेस किया जा सकता है।

वेबसाइट आमतौर पर किसी विशेष विषय या उद्देश्य, जैसे– शिक्षा, वाणिज्य, मनोरंजन, समाचार या सामाजिक नेटवर्किंग के लिए समर्पित होती हैं। यह वेब पृष्ठों के बीच हाइपरलिंकिंग साइट के नेविगेशन को निर्देशित करती है, जो अकसर होम पेज से शुरू होती है। उपयोगकर्ता डेस्कटॉप, लैपटॉप, टेबलेट और स्मार्टफोन सहित कई उपकरणों के द्वारा वेबसाइटों तक पहुँच सकते हैं। इन उपकरणों पर उपयोग किया जाने वाला सॉफ्टवेयर एप्लिकेशन वेब ब्राउजर कहलाता है।

एक वेबसाइट बहुत सारे वेब पेजों का संग्रह होता है उदाहरणस्वरूप जिस प्रकार से हमारे घर में बहुत सारा सामान अलग–अलग जगहों पर रखा रहता है, ठीक वैसे ही वेबसाइट भी एक घर की तरह होती है जिसमें बहुत सारे वेब पेज रहते हैं।

जब भी आप किसी वेबसाइट को खोलते हैं तो सबसे पहले एक वेब पेज ही खुलता है जिसे उस वेबसाइट का होम पेज (home page) कहते हैं। वेबसाइट के होम पेज पे दिए गए लिंक पे क्लिक करके आप उस वेबसाइट के अलग–अलग वेब पेज पर पहुंच जाते हैं।

किसी भी वेबसाइट में बहुत सारे पेज हो सकते हैं। लेकिन जब भी किसी वेबसाइट को खोलते हैं तो उसका होम पेज ही खुलता है और ये वेबसाइट का पहला पेज होता है। उदाहरण के लिए जब आप अपने ब्राउजर में https://techmyhobby|com/ खोलेंगे तो होम पेज ही खुलेगा जिस पर आपको कुछ जरूरी पेजों का लिंक देखने को मिलेगा। लेकिन अगर आप कोई टॉपिक गूगल सर्च करके किसी वेबसाइट पर जाते हैं तो ये जरूरी नहीं है कि वो उस वेबसाइट का होम पेज ही होगा क्योंकि वेबसाइट का दूसरा पेज भी हो सकता है और ज्यादातर हमें कोई क्वेरी सर्च करने पर होम पेज

नहीं बल्कि पोस्ट पेज देखने को मिलता है। होम पेज का मतलब है किसी वेबसाइट का सबसे पहला पेज जिसका यूआरएल में केवल डोमेन नेम होता है, जैसे– https://techmyhobby.com/

यू.आर.एल. का मतलब होता है यूनिफॉर्म रिसॉर्स लोकेटर (Uniform Resource Locator) और इसे वेब एड्रेस भी कहते हैं। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है वेब एड्रेस यानी वेबसाइट का पता।

टिप्पणी

किसी भी वेबसाइट तक पहुंचने के लिए हम अपने ब्राउजर में एक एड्रेस लिखते हैं जिसे यूआरएल कहते हैं। वेबसाइट के अलग–अलग वेब पेज का अलग यूआरएल होता है। उदाहरण के लिए इस वेब पेज का यूआरएल है– https://techmyhobby|com/website-kya-hai/ और इस यूआरएल में डोमेन नेम (domain name) भी शामिल होता है।

वेबसाइट, वेब पेज, वेब सर्वर, डोमेन नेम और सर्च इंजन में अंतर

अब वेब पेज, वेबसाइट, वेब सर्वर, सर्च इंजन के बारे में जानते हैं कि इनमें क्या अंतर है–

वेब पेज (Web Page)

जब भी हम इंटरनेट पर कोई वेबसाइट खोलते हैं तो उस वेबसाइट का एक सिंगल पेज खुलता है जिसे वेब पेज कहते हैं। वेब पेज एक प्रकार से डॉक्यूमेंट होते हैं जो वेब ब्राऊजर पर दिखाए जाते हैं।

किसी भी वेब पेज पर हमें कुछ जानकारी देखने को मिलती है। जिस प्रकार से किसी भी किताब में पेज होते हैं वैसे ही वेबसाइट में भी वेब पेज होते हैं।

वेबसाइट (Website)

बहुत सारे वेब पेज के संग्रह को वेबसाइट कहते हैं यानी उस वेबसाइट के सभी वेब पेज को मिलाकर वेबसाइट नाम दिया गया है।

उदाहरण के लिए जैसे किताब में बहुत सारे पेज होते हैं और उन सभी पेजों को मिला जुला कर एक किताब बनती है। वैसे ही बहुत से वेब पेज को मिलाकर वेबसाइट बनती है।

वेब सर्वर (Web Server)

जिस प्रकार से हम कोई भी डाटा पेन ड्राइव (pendrive) या मेमोरी कार्ड (memory card) में रखते हैं ठीक वैसे ही वेबसाइट के डाटा को ऐसे कंप्यूटर में रखा जाता है जो हमेशा ऑन हो और इंटरनेट से जुड़ा हुआ हो।

इस प्रकार के कंप्यूटर हमारे लोकल कंप्यूटर की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली होते हैं और इन्हें ही वेब सर्वर या वेब होस्टिंग कहते हैं।

डोमेन नेम (Domain Name)

जितने भी कंप्यूटर हैं उन सभी का अपना एक यूनीक आईपी एड्रेस होता है ठीक वैसे ही हम अपने वेबसाइट को जिस भी कंप्यूटर यानी वेब सर्वर में स्टोर करते हैं उसका भी एक आईपी एड्रेस होता है और इसी आईपी एड्रेस के द्वारा हम अपने वेबसाइट को एक्सेस कर सकते हैं।

डोमेन नेम के द्वारा हम अपनी वेबसाइट के आईपी एड्रेस को नाम से रिप्लेस कर देते हैं अतः साधारण शब्दों में कहा जा सकता है कि डोमेन नेम किसी भी वेबसाइट का नाम होता है जिसे आसानी से याद रखा जा सकता है, पढ़ा जा सकता है और आसानी से किसी को बताया भी जा सकता है।

टिप्पणी

सर्च इंजन (Search Engine)

सर्च इंजन भी एक प्रकार की वेबसाइट ही होती है जो इंटरनेट यूजर को अलग–अलग वेबसाइट, वेब पेज, कंटेंट या कोई भी जानकारी ढूंढने में मदद करती है। उदाहरण के लिए गूगल, याहू, बिंग आदि कुछ प्रसिद्ध सर्च इंजन हैं।

अतः अधिगम संसाधन के रूप में वेबसाइट एक अत्यंत उपयोगी साधन है। छात्र किसी भी वेबसाइट पर जाकर अध्ययन के लिए उपयुक्त सामग्री की खोज कर सकते हैं और किसी भी विषय से संबंधित जानकारी को प्राप्त कर सकते हैं।

विकिपीडिया

विकिपीडिया एक मुफ्त, वेब आधारित और बहुभाषी विश्वकोश है, जो गैर–लाभ विकिमीडिया फाउन्डेशन से सहयोग प्राप्त परियोजना के द्वारा उत्पन्न हुआ। यह दो शब्दों विकी (wiki) विकी एक हवाई शब्द है जिसका अर्थ है 'जल्दी' और एनसाइक्लोपीडिया (Encyclopedia) का संयोजन है। विश्व में स्वयंसेवकों के सहयोग से विकिपीडिया के करोड़ों लेख लिखे गए हैं और इसके लगभग सभी लेखों को ऐसा कोई भी व्यक्ति संपादित कर सकता है, जो विकिपीडिया वेबसाईट का उपयोग कर सकता है।

जनवरी 2001 में जिम्मी वेल्स और लेरी सेंगर के द्वारा इसका प्रारंभ किया गया, यह आधुनिक समय में इंटरनेट पर सबसे लोकप्रिय संदर्भित कार्य है।

विकिपीडिया के आलोचक इसे व्यवस्थित पूर्वाग्रह और असंगतियों का दोषी मानते हैं, वे आरोप लगाते हैं कि यह इसकी संपादकीय प्रक्रिया में उपलब्धियों पर सहमति का पक्ष लेता है। विकिपीडिया की विश्वसनीयता और सटीकता भी एक बहुत बड़ा मुद्दा है। कुछ आलोचकों के अनुसार असत्यापित जानकारी का समावेश और विध्वंसक प्रवृत्ति भी इसके दोष हैं, हालांकि विद्वानों के द्वारा किए गए कार्य बताते हैं कि विध्वंसक प्रवृत्ति आमतौर पर अल्पकालिक होती है। एंड्रयू लिह ने ऑनलाइन पत्रकारिता पर पांचवीं अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में विकिपीडिया के महत्व को न केवल एक विश्वकोश के सन्दर्भ में वर्णित किया बल्कि इसे एक समाचार स्रोत के रूप में भी वर्णित किया क्योंकि यह हाल में हुई घटनाओं के विषय में बहुत जल्दी लेख प्रस्तुत करता है।

विकिपीडिया, न्यूपीडिया (Nupedia) के लिए एक पूरक परियोजना के रूप में प्रारंभ हुई, जो एक मुफ्त ऑनलाइन अंग्रेजी भाषा की विश्वकोश परियोजना है, जिसके लेखों को विशेषज्ञों अथवा विद्वानों द्वारा लिखा गया और एक औपचारिक प्रक्रिया के तहत इसकी समीक्षा की गई।

न्यूपीडिया की स्थापना 9 मार्च, 2000 को एक वेब पोर्टल कम्पनी बोमिस, इंक के स्वामित्व के तहत की गई। इसके मुख्य सदस्य थे, जिम्मी वेल्स, बोमिस सीईओ और लेरी सेंगर, न्यूपीडिया के एडिटर–इन–चीफ और बाद के विकिपीडिया।

लेरी सेंगर और जिम्मी वेल्स विकिपीडिया (Wikipedia) के संस्थापक माने जाते हैं। जहाँ एक ओर जिम्मी वेल्स को सार्वजनिक रूप से संपादन योग्य विश्वकोश के निर्माण के उद्देश्य को परिभाषित करने का श्रेय दिया जाता है, वहीं लेरी सेंगर को इस

उद्देश्य को पूरा करने के लिए एक विकी की रणनीति का उपयोग करने का श्रेय प्रदान किया जाता है। विकिपीडिया को औपचारिक रूप से 15 जनवरी 2001 को, www.wikipedia.com पर एकमात्र अंग्रेजी भाषा के संस्करण के रूप में प्रारंभ किया गया और इसकी घोषणा न्यूपीडिया मेलिंग सूची पर लेरी सेंगर के द्वारा की गई।

बाद में वर्ष 2002 में जिम्मी वेल्स ने घोषित किया कि विकिपीडिया विज्ञापनों का प्रदर्शन नहीं करेगा और इसकी वेबसाईट को wikipedia.org में परिवर्तित कर दिया गया। तब से अन्य कई परियोजनाओं को संपादकीय कारणों से विकिपीडिया से अलग किया गया है। विकिपीडिया फाउंडेशन का निर्माण 20 जून, 2003 को विकिपीडिया और न्यूपीडिया से किया गया।

टिप्पणी

विकिपीडिया की प्रकृति

विकिपीडिया के लेख किसी औपचारिक सहकर्मी समीक्षा की प्रक्रिया से होकर नहीं गुजरते हैं तथा लेख में परिवर्तन तुरंत प्राप्त हो जाते हैं। किसी भी लेख पर इसके निर्माता या किसी अन्य संपादक का अधिकार नहीं होता है और न ही किसी मान्यता प्राप्त प्राधिकरण के द्वारा इसका निरीक्षण किया जा सकता है।

ऐसे कुछ ही विध्वंस–प्रवण पेज हैं जिन्हें केवल इनके स्थापित उपयोगकर्ताओं के द्वारा संपादित किया जा सकता है, प्रत्येक लेख को गुमनाम रूप में या एक उपयोगकर्ता के अकाउंट के साथ संपादित किया जा सकता है, जबकि केवल पंजीकृत उपयोगकर्ता ही एक नया लेख बना सकता है। इसके परिणामस्वरूप, विकिपीडिया अपने अवयवों की वैधता की कोई गारंटी नहीं देता है। एक सामान्य संदर्भ कार्य होने के कारण, विकिपीडिया में कुछ ऐसी सामग्री भी है जिसे विकिपीडिया के संपादकों सहित कुछ अन्य लोग आक्रामक और आपत्तिजनक मानते हैं।

योगदानकर्ता, चाहे वे पंजीकृत हों या न हों, सॉफ्टवेयर में उपलब्ध उन सुविधाओं का लाभ प्राप्त कर सकते हैं, जो विकिपीडिया को प्रभावशाली बनाती हैं।

प्रत्येक लेख से संबंधित चर्चा के पृष्ठ कई संपादकों के मध्य कार्य का समन्वय करने के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं। नियमित योगदानकर्ता अकसर, अपनी रुचि के लेखों की एक सूची बनाकर रखते हैं, ताकि वे उन लेखों में हाल ही में हुए सभी परिवर्तनों पर आसानी से टैब्स रख सकें। बोट्स नामक कंप्यूटर प्रोग्राम के निर्माण के बाद से ही इसका प्रयोग व्यापक रूप से विध्वंस प्रवृत्ति को हटाने के लिए किया जाता रहा है। इसका प्रयोग अशुद्ध वर्तनी और शैलीगत कमियों को ठीक करने के लिए तथा सांख्यिकीय आंकड़ों से मानक प्रारूप में भूगोल की प्रविष्टियों जैसे लेख को प्रारंभ करने के लिए किया जाता है।

संपादन मॉडल का खुला स्वभाव विकिपीडिया के अधिकांश आलोचकों के लिए आलोचना का केंद्र बना रहा है। उदाहरण के लिए, जैसे– किसी भी अवसर पर, एक लेख का पाठक यह सुनिश्चित नहीं कर सकता कि जिस लेख को वह पढ़ रहा है उसमें विध्वंस प्रवृत्ति शामिल है या नहीं। आलोचक तर्क देते हैं कि गैर विशेषज्ञ संपादन विकिपीडिया की गुणवत्ता को कम कर देता है।

विश्वसनीयता और पूर्वाग्रह

कुछ आलोचकों द्वारा विकिपीडिया पर व्यवस्थित पूर्वाग्रह तथा असंगति प्रदर्शित करने का आरोप भी लगाया गया है। आलोचकों का तर्क है कि अधिकांश जानकारी के लिए

उपयुक्त स्रोतों का अभाव और विकिपीडिया का खुला स्वभाव इसे अविश्वसनीय बनाता है। कुछ टिप्पणीकारों का सुझाव है कि विकिपीडिया आमतौर पर विश्वसनीय है, लेकिन किसी भी दिए गए लेख की विश्वसनीयता सदैव स्पष्ट नहीं होती है। पारंपरिक संदर्भ कार्य जैसे एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका (Encyclopaedia Britannica) के संपादक, एक विश्वकोश के रूप में परियोजना की उपयोगिता और प्रतिष्ठा पर सवाल उठाते हैं।

टिप्पणी

विश्वविद्यालयों के कुछ प्रवक्ता अकादमिक कार्य में किसी भी एनसाइक्लोपीडिया का प्राथमिक स्रोत के रूप में उपयोग करने से छात्रों को हतोत्साहित करते हैं; कुछ तो विशेष रूप से विकिपीडिया के उपयोग का निषेध करते हैं। विकिपीडिया के सह संस्थापक जिम्मी वेल्स इस बात पर बल देते हैं कि किसी भी प्रकार का विश्वकोश प्राथमिक स्रोत के रूप में उपयुक्त नहीं है।

उपयोगकर्ताओं की गोपनीयता के परिणामस्वरूप लेखों की क्षमता की कमी के संबंध में भी कुछ मुद्दे उठाए गए हैं, इसके साथ ही कृत्रिम सूचना की प्रविष्टि, विध्वंस प्रवृत्ति और इसी प्रकार की अन्य समस्याएं भी सामने आई हैं।

'द विकिपीडिया रेवोलुशन' पुस्तक के लेखक एंड्रयू लिह के अनुसार, "एक विकी में इसकी सभी गतिविधियां खुले में होती हैं ताकि इनकी जांच की जा सके। समुदाय में अन्य लोगों की क्रियाओं के प्रेक्षण के द्वारा भरोसा पैदा किया जाता है, इसके लिए लोगों की समान और पूरक रुचियों का पता लगाया जाता है।"

अर्थशास्त्री टायलर कोवेन लिखते हैं, "यदि मुझे यह सोचना पड़े कि अर्थशास्त्र पर विकिपीडिया के जर्नल लेख सच हैं या मीडिया संबंधी लेख सच हैं, तो मैं विकिपीडिया को चुनूंगा, इसके लिए मुझे ज्यादा सोचना नहीं पड़ेगा।" वे टिप्पणी देते हैं कि नॉन–फिक्शन के कई पारंपरिक स्रोत प्रणालीगत पूर्वाग्रहों से पीड़ित है।

जर्नल लेख में नए परिणामों की रिपोर्ट आवश्यकता से अधिक दी जाती है और प्रासंगिक जानकारी को समाचार रिपोर्ट से हटा दिया जाता है। हालांकि, वे यह चेतावनी भी देते हैं कि इंटरनेट की साइटों पर अकसर त्रुटियां पायी जाती हैं। शिक्षाविदों तथा विशेषज्ञों को इनमें सुधार करने के लिए सतर्क रहना चाहिए।

विकिपीडिया समुदाय ने विकिपीडिया की विश्वसनीयता में सुधार करने के प्रयास किए हैं। अंग्रेजी भाषा के विकिपीडिया ने मूल्यांकन पैमाने की शुरुआत की जिससे लेख की गुणवत्ता की जांच की जाती है; अन्य संस्करणों ने भी इसे स्वीकार कर लिया है।

अतः छात्रों के लिए विकिपीडिया भी अधिगम का एक उपयोगी साधन है। इसके माध्यम से छात्र किसी भी विषय से संबंधित नवीन जानकारी प्राप्त करने में समर्थ होते हैं।

ई–संसाधन

ई–संसाधन ऐसी सामग्री है, जिसमें विषय वस्तु तक पहुंचने के लिए कंप्यूटर के माध्यम की आवश्यकता होती है। ऑनलाइन व ऑफलाइन दोनों संसाधन सी डी–रोम जैसे ई–संसाधनों की क्षेत्र सीमा के अंतर्गत आते हैं। ई–संसाधन से अभिप्राय उन सभी उत्पादों से है जिनको, कंप्यूटर ग्रंथालय कंप्यूटर नेटवर्क द्वारा प्रदान करता है।

इलेक्ट्रॉनिक संसाधनों को ऑनलाइन सूचना संसाधनों के नाम से भी जाना जाता है। इनके अंतर्गत ग्रंथपरक डाटाबेस, इलेक्ट्रॉनिक संदर्भ पुस्तक, समग्र पाठ्य पुस्तकों के लिए सर्च इंजन एवं डेटा के डिजिटल संग्रह शामिल हैं। इनमें वह डिजिटल सामग्री

शामिल है जिसको सीधे कंप्यूटर पर ही उत्पादित किया गया है। जैसे–ई–पत्रिकाएँ, डाटाबेस तथा मुद्रित संसाधन जिन्हें स्कैन तथा डिजिटल रूप में परिवर्तित किया गया है। ग्रंथालयों के पास इलेक्ट्रॉनिक संसाधनों, ई–पत्रिकाओं, ऑनलाइन डाटाबेसों का स्वामित्व नहीं है जिस प्रकार उनका अपनी संपत्ति मुद्रित सामग्री पर होता है। इलेक्ट्रॉनिक संसाधनों का स्वामित्व इन संसाधनों के उत्पादनकर्ताओं के पास है।

टिप्पणी

ई–संसाधनों के कुछ उदाहरण हैं, मैगजीनें, समाचार पत्र, विश्वकोश सामयिकियां या उनमें प्रकाशित लेख। इन तक इंटरनेट से जुड़ी युक्तियों (डिवाइसेज) कंप्यूटर, टेबलेट्स, स्मार्ट फोन आदि के माध्यम से पहुंचा जा सकता है।

ई–संसाधनों के लाभ

ई–संसाधनों के अनेक लाभ हैं उनमें से कुछ इस प्रकार हैं–

- ई–संसाधनों तक इंटरनेट के द्वारा पहुंचा जा सकता है। पाठकों को व्यक्तिगत रूप से ग्रंथालय में आने की आवश्यकता नहीं होती। यह उन पाठकों के लिए बहुत उपयोगी है जो दूरवर्ती क्षेत्रों में रहते हैं। पाठक लेखों को डाउनलोड कर सकते हैं तथा उन्हें अपने पास सुरक्षित रख सकते हैं।
- पाठक केवल एक सर्च इंटरफेस के द्वारा बहुत से संसाधनों को एक ही बार में खोज सकते हैं।
- ई–संसाधनों तक पाठक अपनी सुविधा के अनुसार किसी भी स्थान से, किसी भी समय पर अभिगम कर सकते हैं।
- निजी कंप्यूटर (PC) से ई–संसाधनों तक असीमित संख्या में पाठकों द्वारा एक ही समय पर आलेख या सामयिकी तक पहुंचा जा सकता है।
- ई–संसाधनों के लिंक्स के द्वारा पाठक, संबंधित विषय वस्तु तथा लेखों से जुड़ सकते हैं।
- पत्रिकाओं के लेख/अंक उनके मुद्रित संस्करणों से पहले ही ऑनलाइन उपलब्ध हो जाते हैं।
- ई–संसाधन, प्रयोग के आंकड़े भी प्रदान करते हैं जो ग्रंथालय कर्मचारियों को उत्पाद के प्रयोग को जानने में सहायता करते हैं।
- इलेक्ट्रॉनिक संसाधनों में श्रव्य, दृश्य तथा सजीवन विषय वस्तु का समावेश होता है जो कि अन्य मुद्रित प्रारूपों में उपस्थित नहीं होता।
- ई–संसाधनों का संग्रह ग्रंथालयों में कम स्थान घेरता है।

ई–संसाधनों के प्रकार

ई–संसाधनों के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख निम्नलिखित है–

1. ई–सामयिकियां (जर्नल्स)
2. ई–पुस्तकें
3. इलेक्ट्रॉनिक डाटाबेस
4. ई–प्रतिवेदन
5. ई–शोधग्रंथ एवं लघु शोध प्रबंध

टिप्पणी

1. ई–सामयिकियां

ई–सामयिकी से अभिप्राय है–ऐसा प्रकाशन जिसे सामान्यतः इंटरनेट पर इलेक्ट्रॉनिक प्रारूपों में प्रकाशित किया जाता है। एक सामयिक प्रकाशन से तात्पर्य है ऐसा प्रकाशन जिसकी निश्चित अवधि होती है। ये साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, तिमाही, वार्षिक आदि अवधि में प्रकाशित हो सकते हैं। 'इलेक्ट्रॉनिक सामयिकी' शब्द निम्न के लिए प्रयुक्त किया गया है:

- एक प्रतिष्ठित पत्रिका मुद्रित संस्करण को बंद भी कर सकती है तथा इसे मात्र ई–प्रारूप में ही रूपांतरित कर सकती है।
- मात्र ई–पत्रिका, जैसे– *एरीडने, डी. लिब मैगजीन, आदि*
- किसी प्रतिष्ठित मुद्रित पत्रिका का इलेक्ट्रॉनिक रूपांतर है, जैसे– सैल, न्यू साइंटिस्ट, साइंटिफिक अमेरिकन आदि।
- ई–पत्रिका को निशुल्क या वार्षिक शुल्क सहित, लाइसेंस पर या प्रत्येक उपयोग के लिए भुगतान पर, प्राप्त किया जा सकता है।

ई–सामयिकियों के लाभ

ई–सामयिकियों के लाभ निम्न हैं–

- विषय वस्तु सूचक मुख्य शब्दों का प्रयोग करके आकस्मिक ढंग से खोज कर सकते हैं।
- उन्हें किसी भी स्थान पर तथा किसी भी समय अभिगम किया जा सकता है।
- अतिरिक्त विषय वस्तु उपलब्ध होती है, जोकि मुद्रित में प्रायः उपलब्ध नहीं होती।
- वर्तमान के साथ–साथ पिछले अंकों को भी देखा जा सकता है।

2. ई–पुस्तकें

ई–पुस्तक, जिसे इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल पुस्तक के नाम से भी जाना जाता है, एक पाठ्य–वस्तु (टेक्स्ट) तथा चित्रों पर आधारित, डिजिटल प्रारूप में प्रकाशन है। इसे कंप्यूटर या अन्य डिजिटल उपकरणों पर पढ़ने के लिए प्रकाशित किया जाता है। मानक मुद्रित पुस्तकों के समान ही ई–पुस्तकें डिजिटल रूप में मानक पुस्तकें हैं। ई–पुस्तकें अनेक प्रारूपों में उपलब्ध हैं। कुछ को पूर्ण रूप से डाउनलोड कर ऑफलाइन पढ़ा जा सकता है। जबकि अन्य को केवल इंटरनेट से जुड़ने के बाद ऑनलाइन पढ़ सकते हैं।

ई–पुस्तकों से लाभ

ई–पुस्तकों से निम्नलिखित लाभ हैं–

- मुख्य शब्दों के लिए पुस्तकों को खोजा जा सकता है।
- किसी भी स्थान से तथा किसी भी समय अभिगम्य हैं।
- पाठक संबंधित पृष्ठों से टिप्पणियां तैयार करके, सुरक्षित तथा मुद्रित कर सकते हैं।
- ग्रंथालयों में स्थान व भंडारण की समस्या को कम किया जा सकता है।
- दृश्य व श्रव्य विषयवस्तु तक पहुंच आसान होती है।

- ई–पुस्तकें क्षति तथा सुरक्षा संबंधी समस्याओं से मुक्त होती हैं।
- पुराने शीर्षक मुद्रण से बाहर नहीं होते।

ई–पुस्तकों का अभिगम या इनका उपयोग

ई–पुस्तकों की आपूर्ति विभिन्न प्रकाशकों तथा आपूर्तिकर्ताओं द्वारा की जाती है। विभिन्न प्रकाशकों द्वारा उपलब्ध कराए जाने वाले अभिगम के मॉडल, व शर्तें भिन्न–भिन्न हो सकती हैं।

टिप्पणी

- बाजार में उपलब्ध ई–पुस्तकों के लिए विभिन्न प्रकार के आपूर्तिकर्ता तथा व्यापार मॉडल मौजूद हैं। ग्रंथालयों में ई–पुस्तकों को बेचने के लिए प्रकाशक विक्रेताओं से परामर्श करने हेतु विभिन्न व्यापार मॉडलों के विकल्प प्रस्तुत करते हैं।
- उपयोगकर्ताओं की संख्या एक ही समय पर ई–पुस्तकों का उपयोग करने में एक प्रकाशक से दूसरे प्रकाशक के संदर्भ में भिन्न हो सकती है।

ई–पुस्तकों तक पहुंच के लिए उपयोगकर्ताओं के पास निम्नलिखित सुविधाएं होनी चाहिए–

- अद्यतन इंटरनेट ब्राउजर जैसे– इंटरनेट एक्सप्लोरर, क्रोम या फायरफॉक्स की सुविधा होनी चाहिए
- इंटरनेट अनुयोजकता (कनेक्टिविटी) होनी चाहिए
- एडोब एक्रोबेट रीडर का अद्यतन संस्करण, क्योंकि ई–पुस्तकों के लिए अधिकतर पीडीएफ (पोर्टेबल डॉक्यूमेण्ट फॉर्मेट) फाइल का उपयोग किया जाता है।

3. इलेक्ट्रॉनिक डाटाबेस

'डाटाबेस' शब्द का प्रयोग अभिलेखों के ऐसे संग्रह के लिए किया जाता है जोकि सांख्यिकी, पाठ्य या चित्र आधारित डाटा हो सकते हैं। यदि इसे वर्ल्ड वाइड वेब के द्वारा अभिगम किया जाता है, तो यह ऑनलाइन डाटाबेस कहलाता है। इंटरनेट के आगमन से पूर्व, ये ऑनलाइन डाटाबेस सीडी रोम डाटाबेस के रूप में उपलब्ध थे। डाटाबेस बिब्लियोग्राफिक या पूर्ण पाठ्य हो सकते हैं।

वाङ्गमयात्मक (बिब्लियोग्राफिक) डाटाबेस

वाङ्गमयात्मक डाटाबेस संदर्भ ग्रंथपरक अभिलेखों का डाटाबेस है। यह प्रकाशित साहित्य के संदर्भों का व्यवस्थित डिजिटल संग्रह होता है। ये सामान्यतः साधारण प्रकृति के हो सकते हैं या विशिष्ट विषय क्षेत्र से संबंधित। सभी इलेक्ट्रॉनिक डाटाबेस उद्धरणों की जानकारी प्रदान करते हैं जोकि पाठकों को लेख या संसाधन के विषय में मूल प्रकाशन की सूचना प्रदान करते हैं जैसे– शीर्षक, लेखक, दिनांक तथा प्रकाशन का स्रोत।

डाटाबेस अधिकांश उद्धरणों के साथ सारांश भी प्रदान करते हैं जोकि लेख या संसाधन का सारांश होता है। उपभोक्ता एवं शोधकर्ता उद्धरण व सारांश को ध्यानपूर्वक पढ़ते हुए लेख के बारे में बहुत कुछ सीख सकते हैं, यह उन्हें निर्णय लेने में सहायता करता है कि उन्हें पूर्ण लेख को पढ़ना चाहिए या नहीं।

पूर्ण पाठ्य (फुलटैक्स्ट) डाटाबेस

जो डाटाबेस पत्रिका लेखों, पुस्तक के पाठ, सम्मेलन लेख आदि के पूर्ण पाठ्य उपलब्ध कराते हैं वे पूर्ण पाठ्य डाटाबेस कहलाते हैं। पूर्ण पाठ्य अभिगम से अभिप्राय यह है

कि उपभोक्ता पूर्ण पाठ्य लेखों को पढकर, सुरक्षित या मुद्रित कर सकते हैं। पूर्ण पाठ्य लेख एच.टी.एम.एल. या पीडीएफ प्रारूपों में हो सकते हैं।

4. ई–प्रतिवेदन

टिप्पणी

यह एक ऐसा अभिलेख है जिसमें वर्णनात्मक, आरेखकीय या सारणीबद्ध प्रारूप में सूचना उपलब्ध होती है। इसे आवश्यकतानुसार, सावधिक या नियमित आधार पर तैयार किया जाता है। प्रतिवेदन किसी विशिष्ट अवधि या घटना या विषय का वर्णन हो सकता है। इसे मौखिक या लिखित दोनों रूपों में सार्वजनिक किया जा सकता है। जो प्रतिवेदन डिजिटल रूप में उपलब्ध होता है वह ई–प्रतिवेदन कहलाता है। उदाहरण के लिए, जैसे विश्वविद्यालय वार्षिक प्रतिवेदन प्रकाशित करते हैं जिसमें उनके बजट, व्यय, गतिविधियों तथा उपलब्धियों का लेखा–जोखा दिया जाता है। ये प्रतिवेदन जानकारी के लिए इंटरनेट पर भी उपलब्ध होते हैं।

5. ई–शोध लेख एवं शोध प्रबंध

यह एक ऐसा अभिलेख है, जिसमें शोध प्रबंध या शोध लेख शैक्षिणक उपाधि या व्यावसायिक योग्यता के लिए विद्यार्थियों के समर्थन में सामग्री उपलब्ध होती है। यह विद्यार्थी द्वारा किए गए कार्य या शोध तथा उसके परिणामों को प्रस्तुत करता है। विश्वविद्यालय/संस्थाएं अपने शोध प्रबंध एवं शोध लेखों को मुद्रित रूप में प्रस्तुत करते हैं। शोध ग्रंथ व शोध लेख के डिजीटल रूप को ई–शोध ग्रंथ व शोध लेख के नाम से जाना जाता है। भारतीय विश्वविद्यालयों में एम. फिल. तथा पीएचडी के शोध छात्रों को अपने शोधग्रंथ व शोध लेखों की डिजिटल व सॉफ्ट प्रतियों को जमा कराना होता है। वर्तमान समय में ग्रंथालय उन शोध ग्रंथों व शोध लेखों का डिजिटाइजेशन करके उन्हें इंटरनेट पर अभिगम योग्य बना रहे हैं।

1.5.4 भाषा शिक्षण और कक्षागत अंतःक्रिया

हम भाषा शिक्षण में अधिगम स्रोतों के महत्व के बारे में पढ़ चुके हैं। भाषा सीखने की प्रक्रिया में अनंत संभावनाएं हैं जिनके द्वारा हम किसी बच्चे के न केवल भाषिक कौशलों का विकास कर सकते हैं बल्कि उन कौशलों के उपयोग के लिए भरपूर अवसर भी प्रदान कर सकते हैं। इसमें से एक ऐसा ही महत्वपूर्ण अवसर है कक्षागत अंतःक्रिया। कक्षागत अंतःक्रिया न केवल भाषिक कौशलों के विकास में मदद करती है बल्कि यह हमें उन कौशलों का उपयोग करने का भी अवसर प्रदान करती है। वैसे तो कक्षागत अंतःक्रिया किसी भी विषय शिक्षण के लिए महत्वपूर्ण है परंतु भाषा की कक्षा में अंतःक्रिया का होना बेहद आवश्यक है। अंतःक्रिया के अंतर्गत दो या दो से अधिक प्रतिभागियों के बीच किसी विषय पर संवाद होता है। कक्षा के स्तर पर हम अंतःक्रिया के दो स्वरूप देख सकते हैं– (1) कक्षा में विद्यार्थी–विद्यार्थी के मध्य अंतःक्रिया (2) कक्षा में शिक्षक–विद्यार्थी के मध्य अंतःक्रिया। आइए इनके बारे में विस्तार से पढ़ते हैं।

कक्षा में विद्यार्थी–विद्यार्थी के मध्य अंतःक्रिया

किसी भी विद्यालय में विचारों एवं तथ्यों के सम्प्रेषण के लिए सर्वाधिक उपयुक्त स्थान कक्षा होती है। किसी भी कक्षा में शिक्षक एवं विद्यार्थियों के मध्य शाब्दिक या अशाब्दिक रूप में विचारों, भावों एवं ज्ञान का एक–दूसरे को आदान–प्रदान करना ही कक्षागत सम्प्रेषण कहलाता है। विद्यार्थी–विद्यार्थी एवं शिक्षक–विद्यार्थी के मध्य अंतःक्रिया

विद्यार्थियों की उपलब्धि के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वर्तमान समय के शोध इस बात पर केन्द्रित हो रहे हैं कि शिक्षक–विद्यार्थी एवं विद्यार्थी–विद्यार्थी के बीच के सम्प्रेषण को किस प्रकार प्रभावशाली बनाया जा सकता है जिससे शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के बीच मौखिक संवाद की प्रक्रिया सुगमतापूर्वक संचालित हो सके।

टिप्पणी

हम पढ़ चुके हैं कि भाषा शिक्षण में बातचीत का महत्वपूर्ण स्थान है। कक्षा में सर्वप्रथम विद्यार्थी एक–दूसरे से बातचीत करते हैं, वे आपस में विभिन्न मुद्दों पर चर्चा करते हैं, विचार–विमर्श करते हैं, अपने अनुभवों को बांटते हैं, वाद–विवाद करते हैं। कक्षा में प्रायः विद्यार्थी अपने सहपाठी समूह या अन्य समूहों के साथ बैठते हैं। कई बार कोई गतिविधि करवाते हुए विद्यार्थियों के अलग–अलग समूह बनवा दिए जाते हैं। कक्षागत अंतःक्रिया के समय विद्यार्थी आपस में प्रायः निम्नलिखित प्रकार की चर्चाएं एवं वाद–विवाद करते हैं–

- **पढ़ाई जा रही विषयवस्तु पर** : कक्षा में पढ़ाई जा रही विषयवस्तु के कठिन बिन्दुओं पर विद्यार्थी आपस में चर्चा करके समस्या का समाधान निकालने का प्रयास करते हैं। यदि वे समाधान नहीं निकाल पाते तो फिर शिक्षक की मदद लेते हैं।
- **गृहकार्य पर चर्चा** : कक्षा में शिक्षक द्वारा जो भी गृहकार्य दिया जाता है, विद्यार्थी अक्सर उस पर चर्चा करते हैं।
- **पाठ्यसहगामी क्रियाओं पर** : विद्यालय में हो रही पाठ्यसहगामी क्रियाओं के बारे में विद्यार्थी आपस में चर्चा करते हैं। वे अपने एवं अपने साथियों के प्रदर्शन के बारे में चर्चा करते हैं।
- **समसामयिक मुद्दों पर** : विद्यार्थी अक्सर अपने आस–पास, देश–विदेश में में हो रही घटनाओं पर भी चर्चा करते हैं।

इसके अतिरिक्त विद्यार्थी कभी–कभी आपस में विद्यालय के वातावरण, पारिवारिक वातावरण, सामान्य ज्ञान, परीक्षाओं पर, शिक्षकों के बारे में, शैक्षिक भ्रमण, विद्यालय में हो रहे खेलकूद आदि के बारे में भी चर्चा करते हैं।

कक्षा में शिक्षक–विद्यार्थी के मध्य अंतःक्रिया

शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली ढंग से चलाने के लिए शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के बीच संवाद होना बेहद आवश्यक है। शिक्षण–अधिगम कार्य प्रभावशाली होने से विद्यार्थी किसी भी विषय को आसानी से सीख सकते हैं। कक्षा में प्रभावशाली शिक्षण के लिए शिक्षक को सहायक की भूमिका निभानी होती है। उसकी सहायक की भूमिका उसके विद्यार्थियों से सम्प्रेषण एवं अंतःक्रिया पर निर्भर करती है। कक्षागत अंतःक्रिया में शिक्षक–विद्यार्थी व्यवहार एक–दूसरे से सहसंबंधित होते हैं, जो क्रियात्मक रूप से अन्योन्याश्रित भी होते हैं। अतः कक्षागत व्यवहारों का अध्ययन एवं विश्लेषण शिक्षक–विद्यार्थी व्यवहार और उनकी परस्पर अन्योन्याश्रिता का अवलोकन करके ही किया जा सकता है।

कक्षागत व्यवहार का स्वरूप

आधुनिक काल में शिक्षण से तात्पर्य विद्यार्थियों को ज्ञान प्रदान करना मात्र ही नहीं है बल्कि शिक्षक–विद्यार्थी के मध्य अंतःक्रिया से भी है। फ्लैन्डर के अनुसार शिक्षण एक

टिप्पणी

सामाजिक क्रिया है जो शिक्षक व विद्यार्थियों के मध्य अंतःक्रिया से सम्पन्न होती है। शिक्षण प्रक्रिया में एक ओर विद्यार्थी सीखने वाला है तो दूसरी ओर शिक्षक उसके सहायक की भूमिका में है। कक्षा में शिक्षण के अंतर्गत शिक्षक, विद्यार्थियों के व्यवहारों का अवलोकन करता है और उनकी अधिगम प्रक्रिया को समझने का प्रयास करता है। वह विषयवस्तु को विद्यार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत करता है तथा उसका विश्लेषण एवं व्याख्या करता है। कक्षा में शिक्षक के शाब्दिक एवं अशाब्दिक व्यवहारों से कक्षागत अंतःक्रिया सम्पन्न होती है। कक्षा में जब शिक्षक एवं विद्यार्थी बोलकर चर्चा करते हैं तो इस व्यवहार को शाब्दिक व्यवहार कहा जाता है। इसमें अभिव्यक्ति का माध्यम मौखिक, लिखित तथा प्रतीकात्मक होता है। इसके विपरीत अशाब्दिक अंतःक्रिया वह व्यवहार है जिसमें विद्यार्थी एवं शिक्षक के मध्य विचारों का सम्प्रेषण केवल हाव–भाव व संकेत के द्वारा होता है।

शिक्षक–विद्यार्थी का परस्पर कक्षागत व्यवहार

इस क्रिया में कक्षा अध्यापन के दौरान शिक्षक–विद्यार्थी के मध्य विशेष बिन्दुओं पर चर्चा होती है। कक्षा में शिक्षण के अंतर्गत शिक्षक विद्याथियों का अवलोकन करता है, उनकी भावनाओं की अनुभूति करता है तथा उन्हें अधिकाधिक समझने का प्रयास करता है। यह विषयवस्तु को विद्यार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत करता है, उसका विश्लेषण एवं व्याख्या करता है। इन सभी शिक्षक क्रियाओं में भाषा का प्रयोग करना पड़ता है। शिक्षक का वार्तालाप पढ़ाए गए पाठ से संबंधित होता है। विद्यार्थी उनसे अंतःक्रिया करते हैं। शिक्षक सर्वप्रथम कक्षा में विद्यार्थियों से प्रश्न करते हैं, उनके जवाब लेकर यह देखते हैं कि उन्होनें कोई त्रुटि तो नहीं की। यदि त्रुटियां होती हैं तो उन्हें ठीक करते हैं और कभी–कभी उत्तर श्यामपट्ट पर लिखते हैं। इस प्रकार से शिक्षक–विद्यार्थी के मध्य अंतःक्रिया संपन्न होती है।

वाद–विवाद एवं चर्चा कौशलों का विकास

वर्तमान दौर विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षा का दौर है। आज विद्यार्थी को निष्क्रिय श्रोता नहीं माना जाता बल्कि उनको सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदार बनाया जाता है। वाद–विवाद एवं चर्चा कौशल ऐसे उपकरणों के रूप में प्रयोग किए जा सकते हैं जो अन्य भाषा कौशलों के विकास में सहायक होते हैं। यह ऐसी सक्रिय विधि है जिसमें सभी विद्यार्थियों को अपने आप को अभिव्यक्त करने का मौका समान रूप से मिलता है। वाद–विवाद एवं चर्चा ऐसी गतिविधियां हैं जो कक्षागत अंतःक्रिया में विद्यार्थियों एवं शिक्षकों का सहयोग करती हैं। इनके द्वारा विद्यार्थी आत्मविश्वास से अपने विचार व्यक्त कर सकते हैं और उनमें तर्क–शक्ति का भी विकास होता है। इनमें भाग लेने वाले विद्यार्थियों को विविध पुस्तकों एवं पत्र–पत्रिकाओं को पढ़ना पड़ता है जिससे उनके ज्ञान में वृद्धि होती है। शिक्षक को वाद–विवाद एवं चर्चा के लिए नए–नए विषयों का चयन करना चाहिए जिससे नए विषयों की प्रस्तुति करते हुए विद्यार्थियों के शब्द भंडार में वृद्धि हो। यदि कोई शिक्षक ऐसी गतिविधियों को लगातार अपनी कक्षा में करवाता है तो इससे विद्यार्थी शुद्ध उच्चारण तो सीखते ही हैं साथ ही उनके भाषा कौशलों का विकास होता है। एक शिक्षक को यह ध्यान रखना चाहिए कि सभी विद्यार्थियों को इसमें भाग लेने का अवसर मिले। साथ ही तर्कों एवं निर्णयों पर बल देना चाहिए और विद्यार्थियों को निष्कर्षों एवं स्वतंत्र निर्णयों के निर्माण में सहायता प्रदान करनी चाहिए।

अपनी प्रगति जांचिए

13. जिस ग्रंथ में शब्दों को अर्थ सहित किसी विशेष क्रम में सुनियोजित कर दिया जाता है उसे क्या कहा जाता है?

    (क) विश्वकोश (ख) शब्दकोश

    (ग) समाचार पत्र (घ) पत्रिकाएं

14. किस पद्धति के अंतर्गत सभी कालों में प्रचलित शब्दों को अकारादि क्रम से संकलित किया जाता है?

    (क) वर्णनात्मक पद्धति (ख) तुलनात्मक पद्धति

    (ग) ऐतिहासिक पद्धति (घ) इनमें से कोई नहीं

15. पहला भारतीय अंग्रेजी समाचार पत्र 'बंगाल गजट' कलकत्ता से कब निकाला गया था?

    (क) 1814 (ख) 1816

    (ग) 1820 (घ) 1824

16. हिन्दी के प्रथम पत्र 'उदंत मार्तंड' का पहला अंक कब प्रकाशित हुआ था?

    (क) 30 मई, 1826 (ख) 25 जून, 1828

    (ग) 27 मई, 1838 (घ) 12 अगस्त, 1876

टिप्पणी

1.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ख)
2. (क)
3. (ग)
4. (घ)
5. (ख)
6. (ग)
7. (घ)
8. (ख)
9. (घ)
10. (क)
11. (ख)
12. (घ)
13. (ख)
14. (ग)
15. (ख)
16. (क)

1.7 सारांश

टिप्पणी

भाषा केवल अभिव्यक्ति का माध्यम ही नहीं है, अपितु यह किसी बच्चे की रुचियों, क्षमताओं एवं मनोवृत्तियों को भी आकार देती है। भाषा को प्रतीकों की व्यवस्था कहा जाता है। ये प्रतीक ध्वनिमूलक होते हैं। इन ध्वनियों के द्वारा ही कोई भी अपने आप को अभिव्यक्त कर सकता है। भाषा बच्चे के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करती है क्योंकि बच्चा किसी भाषा विशेष के परिवेश में पलकर बड़ा होता है। बच्चे के लिए भाषा का यह परिवेश उसके घर में बोली जाने वाली भाषा एवं विद्यालय में सिखाई जाने वाली भाषा से मिलकर बनता है। इस सीखी गई भाषा के द्वारा वह अपने दैनिक कार्य करता है। अपने आस–पास के परिवेश को समझने का प्रयास करता है, उसमें सृजनात्मकता एवं संवेदनशीलता का विकास होता है।

भाषा के कई रूप हैं। इनमें मानक भाषा, बोली, राजभाषा, राष्ट्रभाषा, मौखिक एवं लिखित भाषा, प्रथम एवं द्वितीय भाषा आदि शामिल हैं। बोली किसी भाषा का उपरूप है, जो किसी क्षेत्र विशेष में बोली जाती है। हिन्दीभाषा क्षेत्र में अवधी, ब्रज, हरियाणवी जैसी बोलियां बोली जाती हैं। मानक भाषा, किसी भी भाषा का आदर्श रूप है। विद्यालय में जब भाषा सिखाई जाती है तो उससे हमारा अर्थ मानक भाषा सिखाने से होता है। राजभाषा किसी देश की कामकाज की भाषा है।

शिक्षण की दृष्टि से भाषा के मौखिक एवं लिखित रूप को समझने की आवश्यकता है। जब कोई व्यक्ति बोलकर अपने आप को अभिव्यक्त करता है तो वह भाषा का मौखिक रूप होता है एवं जब भाषा को लिखकर अपने आप को अभिव्यक्त किया जाता है तो वह भाषा का लिखित रूप कहलाता है। भाषा के ये दोनों ही रूप महत्वपूर्ण हैं। मौखिक अभिव्यक्ति से सुनना एवं बोलना दोनों कौशल जुड़े हैं और लिखित अभिव्यक्ति से लिखना एवं पढ़ना, ये दोनों भाषा कौशल जुड़े हैं। बच्चा सबसे पहले सुनना एवं बोलना अपने घर–परिवार से सीखता है। बच्चे द्वारा अपने परिवार द्वारा सीखी गई यह भाषा 'प्रथम भाषा' कहलती है। इसके अतिरिक्त जब वह अपने परिवेश में बोली–समझी जाने वाली अन्य भाषा सीखता है तो वह उसकी द्वितीय भाषा कहलाती है। इसके अतिरिक्त वह अन्य भाषाओं का अध्ययन विद्यालय में जाकर करता है जहां उसको भाषा के मानक रूप से परिचित करवाया जाता है साथ ही लेखन एवं पठन कौशल का विकास भी करवाया जाता है।

हमारे ज्ञानार्जन का मूल स्रोत भाषा है। भाषा मनुष्य में संवेदनाओं का विकास करके सामाजिक भावों का पोषण करती है। मनुष्य एक स्थान से दूसरे स्थान पर विचरण करता रहता है। उसे अपने व्यक्तित्व के विकास के लिए, दूसरों से संपर्क बनाने के लिए, अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए या अन्य कारणों से भी दूसरे स्थानों पर जाना पड़ता है। ऐसे में मनुष्य का काम केवल एक भाषा सीख कर नहीं चल सकता। उससे समाज में अन्य व्यक्तियों से मेल–जोल बढ़ाने, व्यापार बढ़ाने, दूसरे स्थान की संस्कृति को समझने के लिए भी दूसरी भाषा या अन्य कई भाषाओं की आवश्यकता होती है। भारत जैसे देश में जहां हर राज्य की भाषा अलग है यहां द्विभाषिकता एवं बहुभाषिकता का महत्व और अधिक बढ़ जाता है। हालांकि शैक्षिक दृष्टिकोण से देखे तो बच्चे की मातृभाषा सबसे महत्वपूर्ण है परंतु वैश्वीकरण के इस दौर में अन्य भाषाओं को सीखना एक जरूरत बन गया है।

भाषा के विकास के लिए हमें भाषा कौशलों में निपुण होने की आवश्यकता है। ये चार भाषा कौशल हैं– सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना। इन चारों कौशलों को विभिन्न विधियों एवं गतिविधियों के माध्यम से विकसित किया जा सकता है। इनमें कहानी सुनाना एक महत्वपूर्ण कौशल है जिससे अन्य कई कौशलों का विकास किया जा सकता है। पाठ के अंत में अनुवाद उपागम एवं त्रुटि विश्लेषण पर चर्चा की गई है।

टिप्पणी

वर्तमान समय में समेकित शिक्षा को बहुत महत्त्व दिया जाता है। समेकित अधिगम उस शिक्षा से संबंधित है जिसमें विभिन्न विषय क्षेत्रों की विभिन्न संबंधित अवधारणाओं को सार्थक एवं समग्र रूप से संयोजित किया जाता है। यह पाठ्यक्रम तीन प्रकार का होता है– एक ही विषय की विभिन्न अवधारणाओं और कौशलों को जोड़ना(अंतर्विषयी), विभिन्न विषयों की अवधारणाओं एवं कौशलों को संबंधित करते हुए कौशलों का विकास करना (बहुविषयी) एवं विषयों के बाहर की अवधारणाओं एवं कौशलों को जोड़ते हुए उनको शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया का हिस्सा बनाना (बहिर्विषयी)।

समेकित अधिगम के लिए पाठ्यपुस्तकों को भी महत्त्वपूर्ण स्रोत माना जा सकता है यदि वह समेकित अधिगम के उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिए बनाई गई हों। हालांकि समेकित अधिगम हेतु कोई विशेष सामग्री निश्चित नहीं है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि हम सामग्री को किस प्रकार प्रयोग करते हैं। ये हमको सोचना होगा कि कैसे एक विशेष सामग्री विभिन्न विषयों में तत्संबंधी अधिगम प्रतिफलों की प्राप्ति हेतु विद्यार्थियों की मदद कर सकती है। पारंपरिक शिक्षण में अध्यापक शिक्षण का मुख्य केंद्र बिन्दु होता था और विद्यार्थी निष्क्रिय श्रोता बना रहता था। अध्यापक को शिक्षण कार्य में किसी प्रकार की सहायता प्राप्त नहीं होती थी। परंतु वर्तमान समय में शिक्षा बाल केन्द्रित हो रही है। एनसीएफ 2005 भी बाल केन्द्रित शिक्षा पर एवं बच्चे के सर्वांगीण विकास पर बल देता है। शिक्षा रुचिपूर्ण एवं मनोरंजक होनी चाहिए। शिक्षक को कक्षागत शिक्षण प्रक्रिया को इस प्रकार सरल एवं सजीव बनाने का प्रयास करना चाहिए जिससे विद्यार्थियों को आसानी से समझ आ जाए। इस प्रकार की शिक्षण प्रक्रिया की सफलता के लिए बहुत से साधनों की आवश्यकता होती है।

भाषा शिक्षण में भी कई प्रकार के अधिगम स्रोतों का प्रयोग किया जाता है इनमें शब्दकोश, विश्वकोश, समाचारपत्र, जर्नल, वास्तविक वस्तुएं, श्यामपट्ट, दृश्य–श्रव्य साधन आदि शामिल हैं। शिक्षण में पाठ को रुचिकर एवं प्रभावशाली बनाने के लिए इस तरह के साधनों का प्रयोग होता है। इसमें कक्षागत अंतःक्रियाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। किसी भी साधन का प्रभावशाली उपयोग शिक्षक–विद्यार्थी एवं विद्यार्थी–विद्यार्थी की अंतःक्रिया पर काफी हद तक निर्भर करता है। कक्षागत अंतःक्रिया के लिए वाद–विवाद एवं चर्चा जैसी गतिविधियों का प्रयोग विद्यार्थियों में अभिव्यक्ति, बोलने की कला, आत्मविश्वास एवं निर्णय शक्ति को विकसित करता है।

1.8 मुख्य शब्दावली

- **भाषा** : भाषा केवल अभिव्यक्ति का साधन मात्र नहीं है अपितु यह सोचने, समझने, महसूस करने एवं चीजों से जुड़ने का भी माध्यम है।
- **बोली** : किसी भी भाषा के क्षेत्र में उस भाषा के बोले जाने वाले उपरूप को ही बोली कहा जाता है।

टिप्पणी

- **मानक भाषा** : किसी भी भाषा को मानक भाषा तब माना जा सकता है जब वह प्रयोग की दृष्टि से सर्वोत्तम हो और निश्चित पैमाने के अनुसार लिखी जाती हो।
- **संस्कृति** : संस्कृति को हम कुछ ऐसे आचरणों/व्यवहारों से परिभाषित कर सकते हैं जो किसी समूह विशेष में पाए जाते हैं।
- **मौखिक भाषा** : जब कोई व्यक्ति अपने विचार बोलकर अभिव्यक्त करता है या आमने–सामने आपस में बात करता है तो वह भाषा का मौखिक रूप कहलाता है।
- **लिखित भाषा** : जिस भाषा को लिखकर अथवा पढ़कर हम अपने विचारों को अभिव्यक्त कर सकते हैं वह भाषा का लिखित रूप कहलाता है।
- **प्रथम भाषा** : बच्चे की प्रथम भाषा वह भाषा है जो वह जन्म लेने के बाद सबसे पहले सीखता एवं बोलता है।
- **द्वितीय भाषा** : द्वितीय भाषा वह भाषा होती है जो बच्चा अपने परिवार से तो नहीं सीखता परंतु उसके आस–पास के परिवेश में यह भाषा पर्याप्त सुनाई देती है।
- **विदेशी भाषा** : विदेशी भाषा प्रयोक्ता के भाषाई समुदाय से भिन्न कोई भी भाषा हो सकती है जो उसके आस–पास के परिवेश में न बोली जाती हो।
- **द्विभाषावाद** : द्विभाषावाद से अभिप्राय दो भाषा बोलने से है।
- **बहुभाषिकता** : दो या अधिक भाषा बोलने वाले व्यक्ति को बहुभाषी कहा जाता है।
- **सहायक भाषा** : जब अन्य सीखी जाने वाली भाषा सामान्य बोल–चाल के लिए प्रयोग न की जाए और केवल ज्ञान प्राप्त करने के माध्यम के रूप में स्वीकार की जाए तो ऐसी भाषा को सहायक भाषा कहा जाता है।
- **संपूरक भाषा** : जब कोई सीखी गई भाषा बेहद सीमित संदर्भों में प्रयोग की जाए तो उसको संपूरक भाषा कहा जाता है।
- **परिपूरक भाषा** : जब कोई अन्य भाषा किसी भाषा समाज के सीमित परंतु निर्धारित सामाजिक संदर्भों में प्रयोग की जाती है तो उसको परिपूरक भाषा कहा जाता है।
- **भाषा कौशल** : भाषा कौशलों से अभिप्राय है किसी भी भाषा में काम करने की समर्थता हासिल करना। इनमें चार भाषायी कौशल शामिल है– सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना।
- **समेकित उपागम** : समेकित उपागम उस शिक्षा से संबंधित है जिसमें विभिन्न विषय क्षेत्रों की एक जैसी अवधारणों को समग्र रूप से एक साथ देखा जाता है और उसका शिक्षण भी समग्र रूप से करने का प्रयास किया जाता है।
- **विषय क्षेत्र के अंदर समेकन** : एक ही विषय क्षेत्र के अंदर समेकन की प्रक्रिया में एक ही विषय के ज्ञान एवं कौशलों को एक साथ जोड़कर शिक्षण किया जाता है।
- **बहुविषयी समेकन** : बहुविषयी समेकन में कोई एक मुख्य थीम होती है जो बहुत से विषयों से जुड़ी रहती है।
- **अंतरविषयी समेकन** : जब शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में एक विषय की बेहतर समझ के लिए किसी दूसरे विषय के ज्ञान व कौशल को सम्मिलित किया जाता है तो उसे अंतर विषयी समेकन कहा जाता है।

- **विषय क्षेत्रों के बाहर समेकन** : इस प्रकार के समेकन में विद्यार्थियों की बाहरी दुनिया के अनुभवों को कक्षा में स्थान दिया जाता है और विभिन्न विषयों के शिक्षण में उनके ज्ञान, भाषा एवं अन्य कौशलों का प्रयोग किया जाता है।
- **शब्दकोश** : जिस ग्रंथ में शब्दों को अर्थ सहित किसी विशेष क्रम में सुनियोजित कर दिया जाता है उस ग्रंथ को शब्दकोश कहा जाता है।
- **विश्वकोश** : यह एक ऐसी पुस्तक या पुस्तकों का समुच्चय है जिसमें ज्ञान की विभिन्न शाखाओं या कुछ अन्य व्यापक क्षेत्रों के साथ सूचनात्मक लेखों को वर्णानुक्रम में व्यवस्थित किया जाता है।
- **समाचारपत्र** : समाचारपत्र अथवा अखबार समाज और देश में हो रही घटनाओं पर आधारित एक प्रकाशन है।
- **अधिगम स्रोत** : जिन वस्तुओं या सामग्रियों के उपयोग की सहायता से अधिगम को अधिक रुचिपूर्ण और अवधारणा की समझ को बेहतर बनाया जा सकता है वे अधिगम स्रोत कहलाती हैं।

टिप्पणी

1.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. भाषा एवं संस्कृति एक दूसरे से कैसे संबंधित हैं?
2. प्रथम एवं द्वितीय भाषा के अंतर को स्पष्ट कीजिए।
3. अन्य भाषा के कोई दो प्रकार बताइए।
4. मौखिक भाषा का क्या महत्त्व है?
5. कहानी सुनते हुए किन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए?
6. श्रवण कौशल की कौन–कौन सी विधियां हैं?
7. समेकित उपागम के प्रकार बताइए।
8. आपकी दृष्टि में समेकित उपागम का कौन सा प्रकार सबसे बेहतर है और क्यों?
9. भाषा शिक्षण में शब्दकोश एवं विश्वकोश का क्या महत्त्व है?
10. भाषा में अधिगम स्रोतों का प्रयोग करने के क्या उद्देश्य हो सकते हैं?

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. भाषा क्या है? भाषा की प्रकृति पर प्रकाश डालिए।
2. भाषा एवं बोली के अंतर की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
3. क्या द्वितीय भाषा एवं विदेशी भाषा एक हो सकती हैं? तर्क सहित बताइए।
4. घर में बोली जाने वाली भाषा एवं स्कूल में बोली जानी वाली भाषा कैसे एक दूसरे से भिन्न है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
5. भारत के संदर्भ में बहुभाषिकता की चुनौतियों को अपने शब्दों में लिखिए।
6. भाषा कौशलों के विकास में अनुवाद का क्या योगदान है?
7. त्रुटि संशोधन के लिए एक शिक्षक होने के नाते आप क्या करेंगे?
8. समेकित उपागम से आप क्या समझते हैं? इसकी कोई चार विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

टिप्पणी

9. एक अच्छी पाठ्यपुस्तक का निर्माण करते हुए आप किन–किन बातों का ध्यान रखेंगे।
10. समेकित पाठ्यपुस्तक की कौन सी विशेषता को आप सबसे महत्वपूर्ण समझते हैं और क्यों?
11. समाचारपत्र कैसे किसी व्यक्ति विशेष से प्रभवित होते हैं। अपनी राय व्यक्त कीजिए।
12. आपके विचार में बाल पत्रिकाओं का उपयोग विद्यालय में एक संसाधन के रूप में कैसे किया जा सकता है।
13. भाषा शिक्षण में कक्षागत अंतःक्रिया एक संसाधन के रूप में प्रयोग की जा सकती है, कैसे? स्पष्ट कीजिए।

1.10 सहायक पाठ्य सामग्री

1. कुमार, कृष्ण, 'बच्चे की भाषा और अध्यापक', राष्ट्रीय पुस्तक न्यासय भारतय संस्करण 1996
2. जेकोब्स, एच, एच, 'डिजाइन ऑप्शन फॉर एन इंटेग्रटेड करीकुलम', इन एच.एच जकोब्स (एडिट) इंटर डिसिप्लिनरी करीकुलम, डिजाइन एंड इम्प्लिमैनटेशन, एलेक्जेंडरिया वी ए एससीडी, संस्करण 1989
3. डार्क, सुसेन, एम और बर्नस, रेबिका सी, 'मीटिंग स्टैंडर्डस – इंटेग्रटेड करीकुलम', एलेक्जेंडरिया वी–एससीडीय संस्करण 2004
4. तिवारी, भोलानाथ, 'भाषा विज्ञान प्रवेश', किताब घर प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2013
5. प्रतिमा, 'भाषा शिक्षण', श्री नटराज प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2017
6. बीने, जेम्स ए, 'करीकुलम इंटिग्रेशन' डिजाइनिंग कोर ऑफ डेमोक्रेटिक एडुकेशन, न्यू पार्क, टीचर्स कॉलेज प्रेसख, संस्करण 1997
7. 'भारतीय भाषाओं का शिक्षण', राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, संस्करण 2009
8. मा.सं.वि.मं. (1986), 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति', नई दिल्ली, भारत सरकार
9. मा.सं.वि.मं. (2020), 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति', नई दिल्ली, भारत सरकार
10. रा.शै.अ.प्र.प. (2005), 'राष्ट्रीय पाठचर्या की रूपरेखा', नई दिल्ली
11. शूमेकर, बी, 'इंटेग्रटेड एडुकेशन, ए करीकुलम फॉर द ट्वेंटी फर्स्ट सेंचुरी', औरीगन स्कूल स्टडी काउंसिल, संस्करण 1989
12. श्रीवास्तव, डॉ. रवीन्द्रनाथ, 'भाषा शिक्षण', वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2016
13. सिंह, निरंजन कुमार, 'माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण', राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, संस्करण 2011
14. हम्फ्रीस, ए, पोस्ट टी, एंड एलिस, ए, 'इंटर डिसिप्लिनरी मेथड्स– ए थेमटिक अप्रोच', सी ए : गुड एयर पब्लिशिंग कंपनी, संस्करण 1981

इकाई 2 पठन एवं लेखन का शिक्षाशास्त्र

टिप्पणी

संरचना

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 पाठ्यपुस्तकें, पाठ्यचर्या एवं पाठ्यक्रम
  2.2.1 पाठ्यपुस्तकों की आवश्यकता
  2.2.2 भाषा की पाठ्यपुस्तकों की विशेषताएं
  2.2.3 पाठ्यक्रम एवं पाठ्यचर्या
  2.2.4 पाठ का विश्लेषण एवं अवलोकन
  2.2.5 पाठ्यपुस्तक विश्लेषण
2.3 अध्ययन कौशल विकसित करना
  2.3.1 प्रश्नों के प्रकार एवं उद्देश्य
  2.3.2 विभिन्न विषयों के प्रश्नों के उत्तर कैसे दें (मौखिक एवं लिखित)
  2.3.3 नोट लेना एवं नोट बनाना
  2.3.4 सारांश लिखना
  2.3.5 लेखन प्रक्रिया, प्रभावी लेखन के गुण
  2.3.6 व्यक्तिगत एवं सामूहिक रिपोर्ट लेखन
2.4 भाषा कौशलों का मूल्यांकन
  2.4.1 समझ की प्रकृति
  2.4.2 सुनने की समझ
  2.4.3 पढ़ने की समझ
  2.4.4 पढ़ना सिखाने में शिक्षक की भूमिका
  2.4.5 समझ का मूल्यांकन करने के लिए उपकरण
  2.4.6 पढ़ने की समझ में क्या और कैसे मूल्यांकन करें : सूचना, शब्द–भंडार, व्याकरण एवं रचना
2.5 पाठ्यचर्या क्षेत्रों में भाषाई प्रयोग
  2.5.1 आलोचनात्मक चिंतन
  2.5.2 विद्यालयी विषयों से अलग–अलग विषयों के पाठ
  2.5.3 घटनाओं के विवरण, व्याख्या, वर्णन, तर्क–वितर्क आदि कर पाना
  2.5.4 आनंद के लिए पढ़ना
2.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.7 सारांश
2.8 मुख्य शब्दावली
2.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.10 सहायक पाठ्य सामग्री

2.0 परिचय

पारंपरिक अवधारणा के अनुसार पाठ्यपुस्तकों को पाठ्यचर्या की मुख्य कार्यस्थली माना गया है। हालांकि वर्तमान में पाठ्यपुस्तकों के साथ–साथ अधिगम स्रोतों के प्रयोग पर भी बल दिया गया है। पाठ्यपुस्तकें भाषा शिक्षण के लिए एक प्रकार के अधिगम स्रोत के रूप में कार्य करती हैं। परंतु कई बार शिक्षक का पूरा ध्यान केवल पाठ्यपुस्तकों पर ही होता है। वे पाठ्यपुस्तकों को पाठ्यक्रम का पर्याय मान लेते हैं। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि पाठ्यपुस्तकें भाषा शिक्षण के लिए महत्वपूर्ण सामग्री प्रदान

करती हैं बशर्ते वे भली प्रकार से बनाई गईं हों और उनका समय–समय पर विश्लेषण होता रहे।

प्रस्तुत इकाई में हम भाषा शिक्षण के संदर्भ में पाठ्यपुस्तकें, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यचर्या की आवश्यकता की चर्चा करेंगे और साथ ही पाठ्यपुस्तकों एवं पाठों के मुख्य तत्त्व एवं उनके विश्लेषण की प्रक्रिया को समझने का प्रयास करेंगे।

टिप्पणी

2.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- पाठ्यपुस्तक, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यचर्या की आवश्यकता को समझ पाएंगे;
- किसी पाठ का विश्लेषण करना सीख पाएंगे;
- किसी पाठ्यपुस्तक का विश्लेषण कैसे किया जाता है, यह समझ पाएंगे;
- मूल्यांकन के अंतर्गत प्रश्नों के प्रकार एवं उनके जवाब देने के तरीकों को समझ पाएंगे;
- लेखन प्रक्रिया एवं प्रभावी लेखन के गुणों के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे;
- लेखन प्रक्रिया के भिन्न–भिन्न रूपों जैसे सारांश लिखना, नोट लेना आदि के विषय में सीख पाएंगे;
- समझ की प्रकृति के संदर्भ में सुनने एवं पढ़ने की समझ को स्पष्ट कर पाएंगे;
- समझ का मूल्यांकन करने के लिए आवश्यक उपकरणों के बारे में बता पाएंगे;
- पढ़ने की समझ के संदर्भ में किस चीज का और कैसे मूल्यांकन किया जाए यह समझ पाएंगे;
- आलोचनात्मक चिंतन की अवधारणा को समझ पाएंगे;
- विभिन्न विषयों की पठनसामग्री में से घटनाओं का व्याख्यात्मक एवं वर्णनात्मक विवरण कर एवं उन पर तर्क–वितर्क कर पाएंगे;
- पाठ्यचर्या में पढ़ने के आनंद के महत्व को समझ पाएंगे।

2.2 पाठ्यपुस्तकें, पाठ्यचर्या एवं पाठ्यक्रम

अध्ययन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पाठ्यपुस्तकों, पाठ्यक्रम तथा पाठ्यचर्या का अत्यधिक महत्व है। श्रेष्ठ पाठ्यपुस्तकों के चयन तथा संतुलित पाठ्यक्रम होने से शिक्षा का परिणाम सर्वश्रेष्ठ होता है।

2.2.1 पाठ्यपुस्तकों की आवश्यकता

पाठ्यपुस्तकें शिक्षण की दृष्टि से बेहद उपयोगी साधन हैं। भारत के संदर्भ में जहां अधिकांश अभिभावक अपने बच्चों के लिए अन्य साधन खरीद पाने में असमर्थ हैं, ऐसे में पाठ्यपुस्तकें उनके लिए एक अनमोल संसाधन हैं। बेकन पाल के अनुसार, "पाठ्यपुस्तक कक्षा–शिक्षण के प्रयोग के लिए प्ररचित वह पुस्तक है जो सावधानी के साथ उस विषय के विशेषज्ञ द्वारा तैयार की जाती है जो सामान्य शिक्षण–युक्ति से भी

सम्पन्न होती है।" हालांकि पाठ्यपुस्तक एक साधन है साध्य नहीं, फिर भी हम उसके महत्व को कम करके नहीं आंक सकते। "सुविचारित एवं सुनियोजित रूप में तैयार की गई अच्छी पाठ्यपुस्तकों का बालकों की शिक्षा तथा राष्ट्र एवं राष्ट्र–निवासियों के भाग्य–निर्माण में निश्चित ही बहुत योगदान है।"

टिप्पणी

सामान्य पुस्तक एवं पाठ्यपुस्तकों में अंतर होता है। निरंजन कुमार सिंह के अनुसार, "पाठ्य–विषय, शैक्षणिक उद्देश्य एवं कक्षा–शिक्षण की दृष्टि से उपयुक्त सामग्री का चयन और क्रमायोजन करते हुए जिस पुस्तक की रचना की जाती है, उसे पाठ्यपुस्तक कहते हैं।" परंपरागत रूप से पाठ्यपुस्तकों का प्रयोग होता आया है इसलिए पाठ्यपुस्तकों की आवश्यकता को समझना भी जरूरी है।

- पाठ्यपुस्तक कक्षा में शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया के लिए आधार का काम करती है। इसके द्वारा ही पाठ्य–विषय का एक समग्र रूप सामने आ जाता है।
- पाठ्यपुस्तक के द्वारा शिक्षक को सम्पूर्ण सत्र के लिए पाठ्य–सामग्री को विभिन्न इकाइयों एवं पाठों में विभाजित करने तथा पाठ्य सामग्री को व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करने में सहायता मिलती है।
- पाठ्यपुस्तक शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों के लिए प्रतिदिन की कार्य–प्रगति के प्रति सचेतक का कार्य करती है। वे इस बात से परिचित रहते हैं कि उन्होंने पाठ्य–विषय का कितना अंश समाप्त कर लिया है, कितना अंश शेष है और इस आधार पर वे शिक्षण–प्रक्रिया एवं योजना में आवश्यक परिवर्तन, सुधार एवं प्रयत्न कर सकते हैं।
- पाठ्यपुस्तक द्वारा बालकों को स्वाध्याय के लिए प्रोत्साहन मिलता है। उन्हें पाठ्य–विषय संबंधी आवश्यक सामग्री एक स्थान पर एकत्र मिल जाती है और वे उसे अध्ययन द्वारा भली–भांति आत्मसात कर सकते हैं। विषय सामग्री की आवृत्ति के लिए पाठ्यपुस्तक और भी उपयोगी सिद्ध होती है।
- सामूहिक शिक्षण व्यवस्था में पाठ्यपुस्तक बहुत ही आवश्यक शैक्षणिक उपकरण है। भाषा और साहित्य जैसे विषय में तो इसके बिना काम ही नहीं चल सकता क्योंकि पाठ्यपुस्तक के आधार पर किसी साहित्यकार एवं उसकी कृतियों का परिचय पूरी कक्षा को एक साथ प्रदान कर दिया जाता है।
- हमारे देश में आधुनिक परीक्षा पद्धति ऐसी है कि पाठ्यपुस्तक और भी आवश्यक हो जाती है। वस्तुतः पाठ्यपुस्तक को बालकों के ज्ञानार्जन का आधार मान कर उनकी परीक्षा ली जाती है।

पाठ्यपुस्तकों की उपयोगिता के साथ ही इसके कुछ ऐसे पहलुओं पर भी विचार करना आवश्यक होगा जो पाठ्यपुस्तक के उपयोग का दूसरा नजरिया भी हमारे सम्मुख प्रस्तुत करें। वर्तमान शिक्षण प्रणाली में आज भी पाठ्यपुस्तकों को इतना अधिक महत्व दिया जाता है कि वे शिक्षा का सम्पूर्ण केंद्र बन जाती हैं। वे शिक्षण का साधन नहीं साध्य बन जाती हैं। विद्यार्थी एवं शिक्षक अपना पूरा ध्यान पाठ्यपुस्तक के पठन–पाठन पर ही लगाते हैं। विद्यार्थी पाठ्यपुस्तक को याद करना ही अपना एकमात्र उद्देश्य मानते हैं। इससे विषय का ज्ञान संकीर्ण और सीमित हो जाता है। भाषा शिक्षण के संदर्भ में तो यह बात और भी ज्यादा महत्वपूर्ण है। इस संदर्भ में कृष्ण कुमार लिखते हैं,

टिप्पणी

"बार–बार यह बात समझाई गई है कि भाषा–शिक्षण का उद्देश्य पाठ्यपुस्तक की पढ़ाई नहीं, भाषा से जुड़े कौशलों का विकास है। इन कौशलों में बोलने और सुनने के कौशल शामिल हैं जिनका विकास भाषा को पाठ्यपुस्तक की जकड़ से छुटकारा दिलाए बिना करना बहुत कठिन है।" वास्तव में पाठ्यपुस्तकों पर अत्याधिक निर्भरता के कारण विद्यार्थियों में स्वयं शिक्षा प्रवृत्ति का विकास नहीं हो पाता। किसी भी विषय के वृहद ज्ञान के लिए उससे संबंधित अन्य पुस्तकें पढ़ना भी आवश्यक है। विशेषकर उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में तो एक शिक्षक को यह प्रयास करना चाहिए कि विद्यार्थियों को अन्य पुस्तकें पढ़ने की आदत हो। इसके अतिरिक्त केवल पाठ्यपुस्तकों पर आधारित लिखित मूल्यांकन व परीक्षा के कारण शिक्षण प्रक्रिया निर्जीव हो जाती है, क्योंकि छात्रों का पूरा ध्यान पाठों की व्याख्या करने और परीक्षा के लिए छात्रों को तैयार करने की ओर ही लगा रहता है। यही कारण है कि विद्यार्थियों के स्वाध्याय, तर्क, विचार–विमर्श एवं विश्लेषण आदि के लिए उचित अवसर नहीं प्राप्त होता।

इस प्रकार के तर्क के आधार पर पाठ्यपुस्तकों का विरोध होता है परंतु पाठ्यपुस्तक का प्रयोग कक्षा में यदि सही तरीके से किया जाए तो यह एक उपयोगी संसाधन है। आवश्यकता है पाठ्यपुस्तक की रचना एवं उसका प्रयोग उपयुक्त ढंग से हो और वह विद्यार्थियों की शैक्षिक अवशकताओं की पूर्ति में सहायक सिद्ध हो।

2.2.2 भाषा की पाठ्यपुस्तकों की विशेषताएं

भाषा की पाठ्यपुस्तकों की निम्न विशेषताएं होती हैं–

- भाषा अन्य विषयों को सीखने का भी माध्यम है इसलिए भाषा का संबंध अन्य विषयों से स्वतः ही स्थापित हो जाता है। किसी भी भाषा का शब्द भंडार केवल साहित्यिक विषयों से ही नहीं बल्कि अन्य सभी विषयों से भी संवर्द्धित होता है। यही कारण है कि भाषा की पाठ्यपुस्तकों में अन्य विषयों से संबंधित पाठ भी शामिल किए जाते हैं। इससे पाठ्य सामग्री में विविधता एवं व्यापकता बनी रहती है। भाषा की पाठ्यपुस्तकों में अन्य पाठ्यपुस्तकों की अपेक्षा अनेक स्रोतों से प्राप्त सामग्री शामिल की जाती है।
- भाषा की पाठ्यपुस्तकों में भाषिक एवं वैचारिक दोनों पक्षों का ध्यान रखना पड़ता है। वैचारिक दृष्टि से साहित्यिक, सांस्कृतिक, पौराणिक, प्राकृतिक सौन्दर्य आदि विषयों से संबंधित सामग्री रहती है साथ ही सामाजिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक, अर्थव्यवस्था जैसे विषयों से संबंधित सामग्री भी ली जाती है। इस सामग्री को इस रूप में प्रस्तुत किया जाता है कि विद्यार्थियों के ज्ञान में वृद्धि हो और उनकी वैचारिक, भाषिक एवं साहित्यिक योग्यता का विकास हो।
- भाषा की पाठ्यपुस्तकों में सामग्री चाहे किसी भी विषय से ली जाए उनमें भाषिक तत्त्वों जैसे पदों, मुहावरों, कहावतों, संरचना–पदों, वाक्यों, उपवाक्यों आदि का ध्यान रखना पड़ता है। वैचारिक एवं भाषिक तत्वों के साथ–साथ विविध साहित्यिक विधाओं का समावेशन भी पाठ्यपुस्तकों में किया जाता है।

भाषा की पाठ्यपुस्तक की रचना करते हुए ध्यान देने योग्य बातें

चूंकि भाषा की पाठ्यपुस्तक में वैचारिक एवं भाषिक पक्ष के साथ–साथ साहित्यिक पक्ष को भी शामिल करना पड़ता है इसलिए इसके निर्माण की प्रक्रिया भी काफी जटिल

प्रतीत होती है। इसके अतिरिक्त पाठ्यपुस्तकों का एक विशिष्ट पाठक वर्ग होता है इसलिए इनका निर्माण काफी सावधानीपूर्वक करना चाहिए। एक अच्छी पाठ्यपुस्तक का निर्माण करते हुए उसमें निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए–

टिप्पणी

- पाठ्यपुस्तक का निर्माण करते हुए सर्वप्रथम यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि यह किस स्तर के लिए तैयार की जा रही है। भाषा की पुस्तकों में स्तर का ध्यान रखना बेहद आवश्यक है। सर्वप्रथम, स्तर के अनुसार ही भाषिक एवं वैचारिक सामग्री के अनुपात का निर्धारण किया जाता है। उदाहरण के लिए प्राथमिक कक्षाओं में भाषिक सामग्री की अधिकता रहती है और उससे ऊपर के स्तर पर भाषिक एवं वैचारिक दोनों प्रकार की सामग्री का समावेश किया जाता है। दूसरा, भाषा की पुस्तकों में विधाओं का चयन भी स्तर के अनुसार ही किया जाता है। उदाहरण के लिए कहानी, संवाद, जीवनी, वर्णन, गीत आदि प्राथमिक कक्षाओं के लिए अधिक उपयुक्त विधाएं हैं। इसके विपरीत माध्यमिक कक्षाओं में कहानी, निबंध, जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण, यात्रा, एकांकी, कविता आदि विधाएं रखी जा सकती हैं।
- स्तर के बाद पाठ्यपुस्तकों का निर्माण करते हुए शैक्षणिक उद्देश्यों को ध्यान में रखना चाहिए। कुछ सामान्य उद्देश्य इस प्रकार हैं– विषय सामग्री का ज्ञान, सुनकर समझने की योग्यता, पढ़कर समझने की योग्यता, मौखिक अभिव्यक्ति, लिखित अभिव्यक्ति, अभिव्यक्ति में मौलिकता, साहित्यिक रसानुभूति, अनुवाद, मातृभाषा एवं उसके साहित्य में रुचि आदि।
- राष्ट्रीय एकता, जनतांत्रिकता, धर्म निरपेक्षवाद एवं अन्य सभी संवैधानिक मूल्यों का पाठ्यपुस्तक रचना में ध्यान रखना आवश्यक है।
- पाठ्यपुस्तक निर्माण के समय कौन–सी साहित्यिक रचना को स्थान दिया जाए, यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। क्या प्रतिष्ठित साहित्यकारों की रचनाओं को स्थान दिया जाए या कोई भी अच्छी एवं सार्थक रचना को पाठ्यपुस्तक में स्थान दिया जाए, भले ही उसका लेखक साधारण हो। यह प्रश्न मुख्यतः माध्यमिक कक्षाओं की पाठ्यपुस्तकों के निर्माण के समय उठाया जाता है। निरंजन कुमार सिंह इस संदर्भ में लिखते हैं कि "माध्यमिक कक्षाओं की पाठ्यपुस्तकों में प्रतिनिधि साहित्यकारों की कृतियां संकलित होती हैं। अतः प्रश्न उठता है कि पाठ्यपुस्तकों में प्रतिष्ठित साहित्यकारों की कृतियों को ही स्थान दिया जाए या अच्छी रचना चाहे वह साधारण लेखक की ही हो, को रखा जाए।" यह सर्वसम्मत है कि उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं की मातृभाषा की पाठ्यपुस्तक में प्रतिष्ठित साहित्यकारों का प्रतिनिधित्व अवश्य होना चाहिए। हालांकि कुछ ऐसी रचनाओं को भी स्थान दिया जा सकता है जिनके लेखक भले ही प्रसिद्ध न हों परंतु उनकी रचनाएं उच्च कोटि की हों। इससे नव–लेखन को प्रोत्साहन मिलता है और आधुनिक नवीन साहित्यिक प्रवृत्तियों का भी परिचय मिलता है।
- पाठ्यपुस्तक की भाषा सरल होनी चाहिए। इसमें ऐसे स्थानिक भाषा–प्रयोगों का समावेश होना चाहिए जो मानक साहित्यिक भाषा के संवर्द्धन में सहायक हों साथ ही प्रचलित विदेशी शब्दों का समावेश भी किया जाना चाहिए।
- पाठ्यपुस्तक की रचना में स्तर के अनुसार विद्यार्थियों की रुचि, उनकी मानसिक परिपक्वता, उसके बौद्धिक स्तर आदि का भी ध्यान रखा जाना चाहिए।

टिप्पणी

- भाषा की पाठ्यपुस्तकों में रचना के विभिन्न दृष्टिकोणों जैसे भाषिक, विषयवस्तु से संबंधित, साहित्यिक आदि के साथ–साथ विभिन्न शिक्षण–अधिगम पद्धतियों जैसे वर्ण पद्धति, शब्द पद्धति, वाक्य पद्धति आदि और अन्य भाषिक कौशलों से संबंधित शिक्षण–पद्धतियों पर विचार किया जाना चाहिए।
- विद्यालय के सम्पूर्ण पाठ्यक्रम में भाषा शिक्षण के लिए निर्धारित समय का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। पाठ्यक्रम में कौन–कौन–सी क्रियाएं समाविष्ट हैं और उनमें भाषा का क्या स्थान है जैसी बातें भी ध्यान देने योग्य हैं।
- पाठ्यपुस्तकों का निर्माण करते समय यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि पाठ्यपुस्तक शिक्षण के लिए कुल निर्धारित समय कितना है। उसको ध्यान में रखकर ही सामग्री का निर्धारण किया जाता है।
- पाठ्यपुस्तक शिक्षण की सफलता मुख्यतः शिक्षक पर ही निर्भर है। इसलिए पाठ्यपुस्तकों का निर्माण करते हुए शिक्षकों की योग्यता, प्रशिक्षण, अनुभव, साधन–संपन्नता आदि का भी ध्यान रखा जाना चाहिए।
- पाठ्यपुस्तक के आरंभ में प्रस्तावना या भूमिका में शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के लिए कुछ सहायक एवं उपयोगी बातें दी जाती हैं। इसके अतिरिक्त पुस्तक लिखने का प्रयोजन, पाठ्यपुस्तक लिखने वाले लेखक या समूह का नाम, पुस्तक की विशेषताओं आदि का उल्लेख किया जाता है।
- पाठ्यपुस्तकों के निर्माण के समय उनका आर्थिक पक्ष भी देखा जाना चाहिए अर्थात पाठ्यपुस्तकें टिकाऊ एवं कम मूल्यों की होनी चाहिए।
- पाठ्यपुस्तक में विषय सामग्री के चयन के बाद उसका प्रस्तुतीकरण महत्वपूर्ण है। प्रस्तुतीकरण में एक ओर अध्ययनात्मक पक्ष जैसे– पाठ, अभ्यास, चित्र, प्रस्तावना, शब्दकोश, टिप्पणी, संदर्भ आदि और दूसरी ओर रूपात्मक पक्ष जैसे– पुस्तक के आकार–प्रकार, मुखपृष्ठ, मुद्रण, कागज, जिल्द आदि का ध्यान रखा जाना आवश्यक है।
- पाठ्यपुस्तक के अंत में आवश्यक शब्दकोश, पुस्तक की भाषिक सामग्री पर आधारित भाषा संबंधी अभ्यास, व्याख्या, टिप्पणियां, संदर्भ आदि देने चाहिए।

2.2.3 पाठ्यक्रम एवं पाठ्यचर्या

'पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें' के राष्ट्रीय फोकस समूह के आधार पत्र (2005) में कहा गया है कि "वर्तमान में पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें तैयार करने के लिए जो पद्धति अपनाई गई है उसकी विशेषता यह है कि वह शिक्षा के लक्ष्य, अधिगम की जरूरतों एवं बच्चों के सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिवेश पर आधारित न होकर परीक्षा व्यवस्था की जरूरतों एवं तरीकों से निर्धारित होती है।" इस बात का अध्ययन हम पाठ्यपुस्तकों के संदर्भ में कर चुके हैं। अब हम पाठ्यक्रम एवं पाठ्यचर्या की आवश्यकता एवं उसके स्वरूप पर चर्चा करेंगे।

पाठ्यचर्या का क्या अर्थ है? किसी विद्यालय के अंदर होने वाली सभी प्रक्रियाएं पाठ्यचर्या के अंतर्गत आती हैं। इन सभी प्रक्रियाओं में शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों परस्पर सम्मिलित होते हैं। इसके अंतर्गत केवल पठन–पाठन ही नहीं अपितु वे सभी क्रियाएं आती हैं जिनका संबंध शिक्षा एवं शिक्षण से होता है। पाठ्यचर्या की इस परिभाषा की

टिप्पणी

भी काफी आलोचना की जाती है। जैसे यह कहा जाता है कि यदि पाठ्यचर्या के अंतर्गत विद्यालय की सभी गतिविधियां आती हैं तो क्या विद्यालय की दीवारों को रंगने के लिए चुना गया रंग पाठ्यचर्या के अंतर्गत आता है? इसी प्रकार जब विद्यार्थी एक–दूसरे को धमकाते हैं तो क्या यह क्रिया भी पाठ्यचर्या के अंतर्गत आती है? इस संदर्भ में क्रिस्टोफर विंच लिखते हैं कि "क्या पढ़ाया जाना चाहिए क्या नहीं, इस पर जब भी चर्चा होती है तो दुर्भाग्यवश यह अपारदर्शी होती है जो कभी बहुत विस्तार से तो कभी संकुचित रूप में परिभाषित करती है कि पाठ्यचर्या को क्या गठित करता है।" इस संदर्भ में पाठ्यचर्या की एक अन्य परिभाषा देखते हैं– "नियोजित, संपोषित और नियमित अधिगम, जिसे गंभीरतापूर्वक लिया गया हो, जिसकी एक सुनियोजित विषयवस्तु हो और जो अधिगम की अवस्थाओं के साथ चलता हो।" (विल्सन, 1977) पाठ्यचर्या की ये परिभाषा ऐसी गतिविधियों की बात करती है जिसको गंभीरतापूर्वक लिया गया हो, अब यह एक जटिल प्रश्न है कि किन गतिविधियों को गंभीरतापूर्ण मानकर पाठ्यचर्या में शामिल किया जाए। 1975 में पाठ्यचर्या समिति जिसने 'द करीकुलम फॉर टेन इयर स्कूल : ए फ्रेमवर्क' लिखा था उसने पाठ्यचर्या को इस प्रकार परिभाषित किया है– "सोचे–समझे रूप में शैक्षिक अनुभवों के नियोजित समुच्चयों का सम्पूर्ण योग पाठ्यचर्या है, जो बच्चों को विद्यालय द्वारा दिए जाते हैं। इस प्रकार यह संबंधित है–

1. एक विशिष्ट अवस्था या कक्षा में शिक्षा के सामान्य उद्देश्यों से।
2. विषय आधारित निर्देशात्मक उद्देश्य और विषयवस्तु से।
3. अध्ययन के कोर्स और समय निर्धारण से।
4. शिक्षण–अधिगम अनुभवों से।
5. निर्देशात्मक साधनों और सामग्रियों से।
6. अधिगम आगमों के मूल्यांकन और विद्यार्थियों, शिक्षकों और अभिभावकों की प्रतिपुष्टि से।"

यह परिभाषा कक्षा में सामान्य उदेश्य से लेकर अधिगम आगमों के मूल्यांकन तक की विशालता को अपने में समेटे हुए है परंतु इसके बिन्दु 3 एवं 4 में जो विवरण दिए गए हैं उनके अनुसार यह परिभाषा पाठ्यक्रम की अधिक प्रतीत होती है।

भारत में विभिन्न शैक्षिक दस्तावेजों में पाठ्यचर्या की परिभाषा को बहुत ही व्यापक रूप में लिया गया है। विभिन्न संगोष्ठियों, नीति–दस्तावेजों, शोधकर्ताओं, विभिन्न प्रकाशनों आदि में यही कहा गया है कि विद्यालय में जो कुछ हो रहा है वह पाठ्यचर्या का ही हिस्सा है। पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों के राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र इस संदर्भ में कहता है कि "साहित्य दावा करता है कि सभी कुछ पाठ्यचर्या बने और दूसरी ओर योजनाबद्ध दृष्टिकोण विद्यालयी अनुभव के बहुत ही संकुचित हिस्से को घेरता है। लेकिन घोषित रूप में सभी कुछ पाठ्यचर्या है। यह नियोजन के लिए चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस प्रकार जो आवश्यक माना जाता है वह नियोजित है तथा पाठ्यचर्या के विस्तृत परिदृश्य के बचे हुए भाग को संयोग से होने के लिए छोड़ दिया जाता है।" इस प्रकार यदि देखा जाए तो पाठ्यचर्या को परिभाषित करना इतना भी सरल काम नहीं है जैसा कि समझा जाता है और जब पाठ्यचर्या को परिभाषित करना हो तो एक लंबे विचार–विमर्श के बाद ही किसी निष्कर्ष पर पहुंचा जा

टिप्पणी

सकता है। यह जान लेना हमारे लिए आवश्यक है कि पाठ्यचर्या में किन–किन चीजों को शामिल किया जाए और किन चीजों को बाहर रखा जाए और इनके पीछे के तर्क क्या होंगे। पाठ्यचर्या की सार्थक परिभाषा के लिए इतने दृष्टिकोणों को जाने के बाद यह भी ध्यान रखना जरूरी है कि पाठ्यचर्या का गंभीर सरोकार इस प्रश्न में है कि हमें अपने शैक्षिक संस्थानों में वास्तव में किस प्रकार की चीजें पढ़ानी चाहिए? पाठ्यचर्या की एक सार्थक परिभाषा विंच देते हैं– "पाठ्यचर्या नियोजित गतिविधियों का समूह हो सकती है जो विशिष्ट शैक्षिक उद्देश्यों को क्रियान्वित करने के लिए डिजाइन की गई हो जिसमें महत्वपूर्ण अवयव जैसे विषयवस्तु के संदर्भ में क्या पढ़ाया जाए और कैसा ज्ञान, कुशलताएं, व्यवहार दिए जाएं यह सब शामिल हैं।"

अतः यह कहा जा सकता है कि पाठ्यचर्या, शिक्षा के उद्देश्यों एवं बच्चों की योग्यताओं के बीच में सुनियोजित समन्वयन है और इसलिए इसकी अच्छी तरह सोची–समझी हुई दिशा होनी चाहिए, प्रगति के विश्वसनीय जरिए हों और इतना ज्यादा लचीलापन हो कि बच्चे की प्रगति और रुचि में वे दिशाएं भी शामिल की जा सकें जिनके विषय में पहले से अनुमान नहीं लगाया जा सकता।

नीचे दिए गए चित्र को ध्यान से देखिए, यह पाठ्यचर्या की रूपरेखा का ग्राफीय निरूपण दिया है। इसको देखकर आपको क्या लगता है? क्या पाठ्यचर्या की रूपरेखा, पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकें एवं अन्य शिक्षण–अधिगम सामग्री एक जुड़ी हुई पद्धति हो सकती हैं?

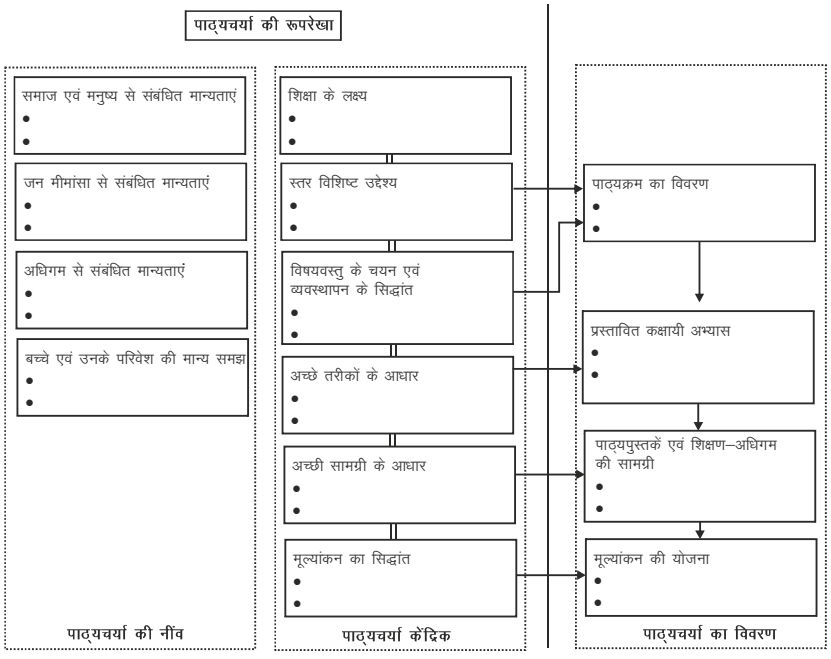

पाठ्यचर्या की रूपरेखा का ग्राफीय निरूपण

स्रोत : पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें के राष्ट्रीय फोकस समूह के आधार पत्र (2005)

इस ढांचे में सर्वप्रथम मनुष्य एवं समाज संबंधित मान्यताओं संबंधी प्रश्नों पर विचार किया जाएगा जैसे– मनुष्य क्या है? हम किस प्रकार का समाज चाहते हैं? हमने किस प्रकार की उन्नति की और यह कैसे जांच करेंगे कि उन्नति हुई है? हमारे आगे बढ़ने में कौन–सी बाधाएं आ रही हैं? ऐसे कई सवालों के जवाब खोजने का प्रयास

किया जाता है। इन मूलभूत मान्यताओं को सावधानीपूर्वक स्पष्ट करना होगा और उसमें पर्याप्त सामान्यीकरण हो यह भी ध्यान रखना होगा ताकि भिन्नताओं की संभावना न रहे। मान्यताओं को यदि साफ तौर पर बता दिया जाए तो उससे विमर्श को एक सामान्य दिशा मिलती है।

बीच वाले हिस्से में थोड़े विशिष्ट होकर देखना है। पाठ्यचर्या की केन्द्रीय स्थिति मानव मूल्यों की सामान्य अवधारणा, मूलभूत क्षेत्र में कही गई पूर्व धारणाओं, भारतीय संविधान, मानव अधिकार घोषणा आदि हमारे उद्देश्यों एवं आम सरोकारों को एक आधार प्रदान करते हैं। विषयवस्तु के चयन के लिए ज्ञान मीमांसा एवं मनोविज्ञान आवश्यक है। यहां कुछ निश्चित सामान्य सिद्धांतों को दिया जा सकता है जिससे कुछ नया जोड़ने के अवसर भी मिल सकें।

टिप्पणी

तीसरा भाग, पाठ्यचर्या का विवरण जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है यह मूर्त रूप से कार्य करने वाला स्तर है। इसमें अलग–अलग स्तरों पर पाठ्यक्रम का निर्माण किया जा सकता है जैसे राज्य स्तर पर या जिला स्तर पर और फिर इन निर्धारित मानदंडों के अनुसार विधियां, सामग्रियां एवं मूल्यांकन के चुनाव स्कूल स्तर पर ही किए जाने चाहिए।

पाठ्यक्रम

पाठ्यक्रम को कई लोग पाठ्यचर्या के समांतर ही प्रयोग करते हैं। पाठ्यक्रम द्वारा शिक्षण एवं उससे संबंधित कार्य पहले से ही निश्चित कर दिए जाते हैं। इससे शिक्षक का कार्य आसान हो जाता है और वे यह जान पाते हैं कि उनको कितने समय में क्या पढ़ाना है, कितना पढ़ाना है और किन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पढ़ाना है। पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों के राष्ट्रीय फोकस समूह के आधार पत्र (2005) के अनुसार, "पाठ्यक्रम यह बताता है कि विषयवस्तु के हिसाब से क्या पढ़ाया जाए और स्तर विशिष्ट उद्देश्यों के मद्देनजर किस तरह के ज्ञान, कौशल और अभिवृत्तियों को खास बढ़ावा मिले?" पाठ्यचर्या एवं पाठ्यक्रम के अंतर को हम निम्नलिखित प्रकार से समझ सकते हैं–

पाठ्यचर्या (Curriculum)	पाठ्यक्रम (Syllabus)
• इसका संबंध विद्यार्थी के सामाजिक जीवन से होता है।	• यह केवल पठन–पाठन का आधार है।
• इससे विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास होता है।	• इससे केवल बौद्धिक विकास होता है।
• इसके अंतर्गत विविध प्रकार की क्रियाओं को स्थान दिया जाता है।	• इसमें अधिकांशतः मानसिक क्रियाओं को ही स्थान दिया जाता है।
• इससे छात्रों की विभिन्न प्रवृत्तियों का विकास करने में सहयोग मिलता है।	• इसमें पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त किसी भी शाखा में प्रवृत्ति का स्थान नहीं होता।
• इसमें छात्रों की आवश्यकता का पूरा ध्यान रखा जाता है। यह परिवर्तन की दृष्टि से लचीला है अर्थात इसमें परिवर्तन किया जा सकता है।	• इसमें मनोवैज्ञानिक तथ्यों का बहुत कम स्थान है।
• इसमें व्यक्तिगत विभिन्नताओं को पूरा स्थान दिया जाता है।	• इसमें व्यक्तिगत विभिन्नताओं को उतना महत्व नहीं दिया जाता।

टिप्पणी

पाठ्यचर्या में सकारात्मक बदलाव के लिए क्या किया जा सकता है, आइए अब इस पर चर्चा करें–

- यह एक स्थापित सत्य है कि सरकारी स्कूल मुख्यतः गरीबों के लिए हैं। इनमें पढ़ने वाले अधिकांश बच्चे तमाम अवरोधों से गुजरते हुए इन स्कूलों तक पहुंचे हैं। इनमें भी स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की दर काफी अधिक है। वास्तव में सरकारी स्कूल में दाखिला लेने वाला कोई विद्यार्थी कक्षा दस तक किसी दुर्घटना से ही पहुंच पाता है न कि किसी व्यवस्था के कारण। इस प्रकार की असंगत एवं असमान शिक्षा व्यवस्था के लिए कई प्रकार के निजी और सार्वजनिक स्कूलों के प्रावधान जिम्मेदार हैं। सर्वप्रथम विद्यालयों में गुणवत्ता को बढ़ाने की ओर ध्यान दिया जाए। स्कूली व्यवस्था में ऐसे सकारात्मक परिवर्तन किए जाएं कि ज्यादा से ज्यादा बच्चे विद्यालयों में आए और उनको विद्यालय न छोड़ना पड़े।
- स्कूलों को बाल केन्द्रित होना चाहिए। स्कूल निश्चित तौर पर बच्चे के स्वास्थ्य, पोषकता आदि को लेकर सजग हों। स्कूलों के सरोकारों में यह भी है कि यह समझा जाए कि विद्यार्थी किस पृष्ठभूमि से आ रहे हैं और स्कूल के बाद उनकी शेष दिनचर्या कैसी होगी। स्कूल को इन सभी विविधताओं की कद्र करनी चाहिए और सभी बच्चों को एक समान अवसर प्रदान करने चाहिए।
- एक सशक्त पाठ्यचर्या के लिए सशक्त शिक्षक की आवश्यकता है। शिक्षा के अधिकार और शिक्षक सशक्तीकरण को एक–दूसरे से जुड़ा होना चाहिए। शिक्षक पर विश्वास किया जाना चाहिए क्योंकि वह पाठ्यचर्या को क्रियान्वित करने का कार्य करता है। यह एक ऐसी आवश्यकता है जिस पर समझौते का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।
- प्राथमिक विद्यालयों के स्तर पर कक्षा और विद्यालयों में समुदाय की भागीदारी इस बात की मांग करती है कि पाठ्यचर्या के एक हिस्से को या तो विद्यालय के स्तर पर रचा जाए या फिर एक ही क्षेत्र में कुछ स्कूलों के समूह के स्तर पर। इस प्रक्रिया में अन्य संस्थाओं से लोग विद्यालयों के साथ जुड़कर काम कर सकते हैं। उन्हें विद्यालयों और प्राथमिक विद्यालय के अच्छे लोगों के साथ पर्याप्त समय बिताना चाहिए तथा शिक्षकों के साथ लंबे समय तक काम करके सामग्री और विचारों को सामने लाना चाहिए।
- ग्राम पंचायतों की उत्तम भागीदारी द्वारा समुदायों को मजबूत बनाए जाने की आवश्यकता है। साथ ही शिक्षकों को भी अपने दायित्वों को प्रभावी ढंग से पूरा करने के लिए सशक्त किया जाना चाहिए।
- पाठ्यचर्या को समावेशी बनाए जाने की आवश्यकता है। पाठ्यचर्या को सांस्कृतिक विविधताओं का आदर करना चाहिए तथा ऐसी नीतियां बनानी चाहिए जो किसी का भी बहिष्कार न करें।
- प्रथम पीढ़ी के विद्यार्थियों के लिए सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था को ऐसी बनाए जाने की जरूरत है जिससे कि वह ऐसे बच्चों की जरूरतों की पूर्ति कर सके और उनके साथ सम्मान एवं संवेदनशीलता के साथ बर्ताव कर सके, ताकि वे हर दिन स्कूल में आने के लिए प्रोत्साहित हो सकें।

टिप्पणी

- पाठ्यचर्या में सुधार के लिए परीक्षा सुधार अनिवार्य रूप से किया जाना चाहिए। बहुत सारे विद्यार्थी परीक्षा के दवाब में तनाव में रहते हैं और अपने जीवन के कीमती वर्षों को खराब कर देते हैं। कई बार अच्छे अंक नहीं आने पर वे गहरी चिंता एवं आत्मग्लानि से भर जाते हैं। स्कूल के नजरिए से देखने पर यह पता चलता है कि यह परीक्षा उच्च प्राथमिक तक, नीचे उतरते हुए, स्कूल की विषयवस्तु तथा विधि को निर्धारित करती है। इसलिए परीक्षा में सुधार के लिए आवश्यक है कि हम परीक्षा एवं उससे जुड़ी हुई पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकों पर आलोचनात्मक नजर डालें।
- इसके अतिरिक्त शिक्षा व्यवस्था में सुधार के लिए हमें समय–समय पर अध्ययन रिपोर्ट बनानी चाहिए जिससे यह पता चल सके कि क्या व्यवस्थागत तथा संगठनात्मक परिवर्तन हुए हैं और उनका क्या प्रभाव रहा है?

2.2.4 पाठ का विश्लेषण एवं अवलोकन

अवलोकन से आशय है–आंखों से देखना। जब हम किसी पाठ के अवलोकन की बात करते हैं तो इसका अभिप्राय क्या है? क्या सिर्फ आंखों से देखने भर से अवलोकन हो जाता है? इसका जवाब है– नहीं। अवलोकन केवल देखना भर नहीं है यह वैज्ञानिक अन्वेषण की एक पद्धति है जिसमें किसी भी चीज को देखकर उसकी जांच–पड़ताल की जाती है। इसमें कार्य–कारण एवं पारस्परिक संबंधों को जानने के लिए किया गया सूक्ष्म निरीक्षण शामिल है। अवलोकन में कानों एवं वाणी की अपेक्षा नेत्रों के प्रयोग की स्वतन्त्रता पर बल दिया जाता है। इसमें नेत्रों द्वारा नवीन अथवा प्राथमिक तत्त्वों का विचारपूर्वक संकलन किया जाता है। किसी भी पाठ का अवलोकन एवं विश्लेषण करते समय हमें निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए–

1. **शीर्षक** : पाठ का अवलोकन करते हुए सर्वप्रथम उसके शीर्षक पर ही नजर जाती है। क्या शीर्षक पठनीय एवं समझने में आसान है? क्या वह कल्पनाशीलता को बढ़ाने वाला है? क्या वह पाठ के अनुसार है? हालांकि इसका अनुमान तो पाठ को पढ़ने के बाद ही लगाया जा सकता है।
2. **उद्देश्य** : पाठ के अवलोकन के समय पाठ के उद्देश्यों का अच्छी तरह से विश्लेषण करना चाहिए। पाठ के उद्देश्य, पाठ से सामंजस्य स्थापित कर रहे हैं या नहीं? ये उद्देश्य कक्षा के स्तर के अनुसार भी होने चाहिए। उनमें भाषा एवं वैचारिक दोनों पक्षों का समावेश होना चाहिए।
3. **परिचय/प्रस्तावना** : पाठ का प्रारम्भ कैसे किया गया है इसका अवलोकन किया जाना चाहिए। पाठ का परिचय कैसे कैसे दिया जा रहा है? क्या प्रारम्भ में लेखक/लेखिका या कवि आदि का परिचय दिया गया है या किसी संदर्भ को जोड़कर पाठ की शुरुआत की गई है?
4. **विषयवस्तु** : अब पाठ का मुख्य भाग अर्थात उसकी विषयवस्तु आती है। क्या विषयवस्तु विद्यार्थियों के स्तर के अनुसार है? क्या यह उनके पूर्वज्ञान से उन्हें जोड़ती है? क्या यह क्रमानुसार व्यवस्थित की गई है? ऐसे बहुत से प्रश्नों के जवाब विषयवस्तु के अवलोकन के समय खोजने होंगे।
5. **भाषा** : विषयवस्तु के विश्लेषण के साथ ही उसकी भाषा का भी विश्लेषण करना होगा। भाषा अधिक जटिल नहीं होनी चाहिए। कठिन शब्दों के अर्थ बीच में ही

टिप्पणी

दिए गए हैं या नहीं यह देखना चाहिए। भाषा प्रयोग (मुहावरे, अलंकार आदि) का अवलोकन किया जाना चाहिए।

6. **चित्रों आदि का प्रयोग** : विषयवस्तु के विश्लेषण के समय ही यह देख लेना चाहिए कि पाठ में चित्र आदि का प्रयोग किया गया है या नहीं। यदि किया गया है तो क्या वे विषयवस्तु से तालमेल खाते हैं। क्या विषयवस्तु की व्याख्या करने में उन चित्रों, ग्राफ आदि से किसी प्रकार की मदद मिल रही है? इन सबका गहराई से विश्लेषण किया जाना चाहिए।
7. **मुद्रण** : पाठ के अवलोकन के समय मुद्रण की गुणवत्ता की भी जांच करनी चाहिए। शब्दों का आकार अधिक छोटा या अधिक बड़ा तो नहीं है? रंग किस प्रकार के प्रयोग किए गए हैं? टंकण में त्रुटियां तो नहीं हैं? इन सब बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए।
8. **पाठ के अंत में दिए गए प्रश्नोत्तर या अभ्यास** : क्या पाठ के अंत में प्रश्न पूछे गए हैं? यदि हां तो पाठ के अंत में दिए गए प्रश्नों का स्वरूप कैसा है? उनकी भाषा कैसी है? क्या प्रश्न सिर्फ पाठ में से ही पूछे गए हैं? प्रश्न तथ्यात्मक हैं या अनुभव पर आधारित हैं? क्या प्रश्न पाठ के प्रति समझ बढ़ाने में योगदान दे रहे हैं? क्या वे कक्षा में चर्चा के और अंतःक्रिया का पर्याप्त अवसर दे रहे हैं?
9. **गतिविधियां** : क्या पाठ के अंत में गतिविधियां दी गईं हैं? उनका स्वरूप कैसा है? क्या वे अनुभव पर आधारित हैं या प्रयोगात्मक हैं? क्या गतिविधियां पाठ के प्रति समझ बढ़ाने में अपना योगदान दे रही हैं? क्या वे व्यक्तिगत रूप से करने वाली हैं या समूह में करने वाली हैं?
10. **शब्दार्थ** : क्या पाठ के अंत में स्पष्टीकरण के लिए शब्दार्थ या समझ बढ़ाने लिए सारांश आदि दिया गया है?

इन सब बिन्दुओं का ध्यान रखकर हम किसी भी पाठ का विश्लेषण कर सकते हैं। इनके अलावा और भी बिन्दु हो सकते हैं। बस आपको पाठ का अवलोकन प्रारम्भ करने से पहले यह भी देखना होगा कि यह अवलोकन किस उद्देश्य से किया जा रहा है? और आपको उस उद्देश्य को पूरा करने के लिए पाठ में क्या–क्या देखने की जरूरत है।

2.2.5 पाठ्यपुस्तक विश्लेषण

वर्तमान में पाठ्यपुस्तकें उसी पद्धति से तैयार की जाती हैं जैसे कई दशकों पहले की जाती थीं। रंग–रूप एवं सामग्री का थोड़ा–बहुत अंतर जरूर आया है परंतु उनके तैयार करने के पीछे की सोच आज भी वही है कि पाठ्यचर्या का सारा ज्ञान केवल पाठ्यपुस्तकों में ही होता है। इसलिए ऐसी पाठ्यपुस्तकें तैयार की जाएं जो बच्चों को पाठ्यक्रम का सारा ज्ञान दे सकें और उसके अतिरिक्त कुछ और पढ़ने की आवश्यकता ही न पड़े। पाठ्यपुस्तकों का निर्माण परीक्षा को केंद्र में रखकर भी किया जाता था। ऐसे में समय–समय पर पाठ्यपुस्तकों के विश्लेषण की आवश्यकता महसूस की जाती है। पाठ्यपुस्तक के विश्लेषण करने के कई फायदे हैं, जैसे– पाठ्यपुस्तक की गुणवत्ता की समय–समय पर जांच करना, नई पाठ्यपुस्तकों का निर्माण करना, त्रुटियों को दूर करना आदि।

हम पढ़ चुके हैं कि पाठ्यपुस्तकों के निर्माण के समय किन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए। उन्हीं बिन्दुओं के आधार पर हम पाठ्यपुस्तकों का विश्लेषण भी कर सकते हैं। आइए देखते हैं कि पाठ्यपुस्तक का विश्लेषण कैसे और किन आधारों पर किया जाना चाहिए। पाठ्यपुस्तक के विश्लेषण के लिए हम निम्नलिखित को मूल्यांकन का आधार बना सकते हैं–

टिप्पणी

1. पाठ्यपुस्तक का परिचय
2. पाठ–दर–पाठ मूल्यांकन
3. नकारात्मक पहलुओं को ढूंढ़ निकालना
4. सकारात्मक पहलुओं को ढूंढ़ निकालना
5. पुस्तक का व्यापक मूल्यांकन
6. मूल्यांकनकर्ता का परिचय

इन मूल्यांकन के आधारों को थोड़ा विस्तार से समझते हैं–

1. **पाठ्यपुस्तक का परिचय** : पाठ्यपुस्तक के विश्लेषण में सर्वप्रथम पुस्तक का पूरा ब्योरा दिया जाता है। इसका विषय, प्रकाशक, प्रकाशन वर्ष, बाहरी आवरण, लेखक या लेखक समूह आदि देखा जाता है।
2. **पाठ–दर–पाठ मूल्यांकन** : पाठ्यपुस्तक परिचय के बाद एक–एक पाठ का मूल्यांकन किया जाता है। पाठ मूल्यांकन के बारे में हम पढ़ चुके हैं कि हमको किन–किन पहलुओं पर विचार करना है।
3. **नकारात्मक पहलुओं को ढूंढ़ निकालना** : प्रत्येक पाठ का मूल्यांकन करने के बाद उसके नकारात्मक पहलुओं पर विचार किया जाएगा। इसकी पुष्टि के लिए कुछ उदाहरण भी दिए जा सकते हैं।
4. **सकारात्मक पहलुओं को ढूंढ़ निकालना** : नकारात्मक पहलुओं के बाद सकारात्मक पहलुओं पर भी विचार किया जाता है।
5. **पुस्तक का व्यापक मूल्यांकन** : इसमें पुस्तक का समग्र रूप से मूल्यांकन किया जाता है। इसमें पाठों की संख्या, लेखक एवं लेखिकाओं की संख्या, पूर्वाग्रह, नकारात्मक पहलू, सकारात्मक पहलू आदि पर विचार करके इन पर चिंतन–मनन किया जाता है।
6. **मूल्यांकनकर्ता का परिचय** : इसके पश्चात अंत में मूल्यांकनकर्ता अपना परिचय भी देता है।

इन आधारों को ध्यान में रखते हुए किसी पाठ्यपुस्तक का विश्लेषण करते हुए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए–

- क्या पाठ्यपुस्तक, पाठ्यचर्या एवं पाठ्यक्रम के उद्देश्य को पूरा करने में सक्षम है?
- क्या पाठ्यपुस्तक बाल–केन्द्रित है।
- क्या पाठ्यपुस्तक में शामिल विषयवस्तु, विद्यार्थियों के स्तर के अनुसार है? और क्या यह मनोरंजक एवं रुचिपूर्ण है।
- क्या पाठ्यपुस्तक की विषयवस्तु समावेशी है? क्या यह विद्यार्थियों में आलोचनात्मक चिंतन को बढ़ावा देती है या यह रटंत शिक्षा को बढ़ावा देती है।

टिप्पणी

- पाठ्यपुस्तक में भाषा कैसी है? क्या भाषा सरल है? क्या पाठ्यपुस्तक बहुभाषिकता को बढ़ावा देती है।
- पाठ्यपुस्तक में चित्रों का प्रयोग, ग्राफ, सारणी आदि का प्रयोग किस प्रकार किया गया है।
- पाठ्यपुस्तक में मूल्यांकन के लिए किस प्रकार के प्रश्न दिए गए हैं?
- पाठ्यपुस्तक का मुद्रण, आवरण, आकार आदि किस प्रकार है? मुद्रण में त्रुटियां तो नहीं हैं?
- पाठ्यपुस्तक में पाठों की संख्या, उनके लेखक/लेखिका का अनुपात आदि भी देखना आवश्यक है।
- क्या पाठ्यपुस्तक संवेदनशील बनाती है।
- अंत में निष्कर्ष जरूर लिखना चाहिए।

पाठ्यपुस्तक के विश्लेषण का उदाहरण

यहां हम कक्षा 6 की भाषा की पाठ्यपुस्तक 'वसंत' का विश्लेषण कर रहे हैं।

पाठ्यपुस्तक का नाम : वसंत (भाषा)

कक्षा : 6

रचना : राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी)

प्रकाशक : दिल्ली पाठ्यपुस्तक ब्यूरो, दिल्ली

प्रथम संस्करण : 2009

पाठ्यपुस्तक विश्लेषण के बिंदु	विश्लेषण
• क्या पाठ्यपुस्तक, पाठ्यचर्या एवं पाठ्यक्रम के उद्देश्य को पूरा करने में सक्षम है?	पाठ्यपुस्तक के विश्लेषण से ऐसा प्रतीत होता है कि यह पुस्तक पाठ्यक्रम के विभिन्न उद्देश्य जैसे– भाषा कौशलों का विकास, प्रश्न करना सीखना, बात को आगे बढ़ाना सीखना, किसी सामग्री की बारीकी से जांच करके उस पर बात करना आदि को पूरा करने के अवसर प्रदान करती है।
• क्या पाठ्यपुस्तक बाल–केन्द्रित है।	पाठ्यपुस्तक बाल–केन्द्रित है क्योंकि इसकी पाठ्य सामग्री बच्चों को ध्यान में रखकर ही शामिल की गई है। इसमें चित्रों एवं रंगों का प्रयोग भी किया गया है।
• सभी विधाओं का समावेश	पाठ्यपुस्तक में स्तर के अनुसार अलग–अलग विधाओं का समावेश किया गया है जैसे– कविता, संस्मरण, कहानी, निबंध, एकांकी, पत्र जैसी सरल, रुचिपूर्ण एवं महत्वपूर्ण विधाओं को शामिल किया गया है।
• क्या पाठ्यपुस्तक में शामिल विषयवस्तु, विद्यार्थियों के स्तर के अनुसार है? और क्या यह मनोरंजक एवं रुचिपूर्ण है।	पाठ्यपुस्तक में शामिल पाठ मनोरंजक एवं रुचिपूर्ण है, कई पाठ जानकारी से भरपूर हैं तो कई पढ़ने में मजेदार। 'नादान दोस्त' कहानी और 'बचपन' संस्मरण बच्चों के लिए विशेष रूप से मजेदार लगते हैं। इसमें अतिरिक्त सामग्री भी दी गई है जिसे विद्यार्थी स्वयं पढ़ सकते हैं। हर पाठ के अंत में अभ्यास एवं पाठ्यपुस्तक के अंत में शब्दकोश भी दिया गया है जिससे विद्यार्थी को कठिन शब्दों को समझने में परेशानी न हो।
• क्या पाठ्यपुस्तक की विषयवस्तु समावेशी है? क्या यह विद्यार्थियों में आलोचनात्मक चिंतन को बढ़ावा देती है या यह रटंत शिक्षा को बढ़ावा देती है।	पाठ्यपुस्तक की विषयवस्तु समावेशी प्रतीत होती है हालांकि कुछ अन्य विषयों जैसे विज्ञान आदि से संबंधित पाठों का समावेश भी किया जा सकता था। पर 'सांस–सांस में बांस' जैसे पाठ आदि जो सामाजिक विज्ञान से संबंधित प्रतीत होते हैं शामिल किए गए हैं। पाठों का स्वरूप ऐसा है जो बच्चे की स्वाभाविक अभिव्यक्ति एवं कल्पनाशीलता का विकास करने में सहायक है।

टिप्पणी

पाठ्यपुस्तक विश्लेषण के बिंदु	विश्लेषण
• पाठ्यपुस्तक में भाषा कैसी है? क्या भाषा सरल है? क्या पाठ्यपुस्तक बहुभाषिकता को बढ़ावा देती है।	पाठ्यपुस्तक की भाषा सरल एवं स्तर के अनुकूल प्रतीत होती है। पाठ्यपुस्तक में कई पाठों में बहुभाषिकता की झलक भी स्रोत के रूप में नजर आती है। भारतीय भाषाओं के अनूदित पाठ भी पुस्तक में रखे गए हैं जो बच्चों का अन्य भाषा एवं परिवेश से परिचय करवाते हैं।
• पाठ्यपुस्तक में चित्रों का प्रयोग, ग्राफ, सारणी आदि का प्रयोग किस प्रकार किया गया है।	पाठ्यपुस्तक आकर्षक एवं चित्रों से भरपूर है। हर पाठ में पाठ से संबंधित चित्र दिए गए हैं, जिनको देखकर बच्चे कल्पना कर सकते हैं। इन चित्रों पर अध्यापक द्वारा पाठ प्रारम्भ करने से पहले चर्चा भी करवाई जा सकती है। कुल मिलाकर चित्र पुस्तक में गुणवत्ता जोड़ते हैं।
• पाठ्यपुस्तक में मूल्यांकन के लिए किस प्रकार के प्रश्न दिए गए हैं?	यदि मूल्यांकन की बात करें तो प्रत्येक पाठ के पीछे अभ्यास दिया गया है और इसको कई भागों में बांटा गया है। मुख्यतः तीन भाग तो हर पाठ में हैं– पाठ से संबंधित प्रश्न, अनुमान और कल्पना से संबंधित प्रश्न, भाषा से संबंधित गतिविधियां एवं प्रश्न। इसके अतिरिक्त अधिकांश पाठों में 'कुछ करने को' भी दिया गया है जिसमें विद्यार्थियों के अनुभव से संबंधित गतिविधियां दी गई हैं। इससे विद्यार्थी अपने आप को बेहतर ढंग से पाठ से जोड़ सकेंगे।
• पाठ्यपुस्तक का मुद्रण, आवरण, आकार आदि किस प्रकार हैं? मुद्रण में त्रुटियां तो नहीं हैं?	पाठ्यपुस्तक का मुद्रण गुणवत्तापूर्ण एवं स्पष्ट है। रंगों का उचित प्रयोग किया गया है। आवरण पृष्ठ आकर्षक है जो वसंत ऋतु से जुड़ा हुआ प्रतीत होता है। इसमें पेड़–पौधे और जानवर बने हुए हैं। दूसरी तरफ विद्यार्थियों के लिए केन्द्रीय प्रायोजित कल्याण योजनाओं की जानकारी दी गई है। इसमें आमुख, पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति की जानकारी के साथ–साथ शिक्षकों से भी संवाद स्थापित करने की कोशिश की गई है। और पहले पाठ के ठीक पहले संविधान की उद्देशिका भी दी गई है जिससे बच्चों में संवैधानिक मूल्यों के प्रति सम्मान की भावना जाग्रत हो। पाठ्यपुस्तक के विश्लेषण से पता चलता है कि इसमें त्रुटियाँ नहीं है।
• पाठ्यपुस्तक में पाठों की संख्या, उनके लेखक/लेखिका का अनुपात आदि भी देखना आवश्यक है।	पाठ्यपुस्तक में कुल 17 पाठ हैं और 5 अतिरिक सामाग्रियां केवल ऐसे ही पढ़ने के लिए दी गई हैं जिनसे विद्यार्थियों में पढ़ने की आदत का विकास हो सके। लेखक/लेखिका के अनुपात की बात करें तो लेखकों की संख्या लेखिकाओं की तुलना में अधिक है। पाठों की संख्या स्तर के अनुसार ठीक प्रतीत होती है।
• क्या पाठ्यपुस्तक संवेदनशील बनाती है।	पाठ्यपुस्तक में कई ऐसे पाठ हैं जो विद्यार्थियों के मन में संवेदनशीलता उत्पन्न कर सकते हैं जैसे वह चिड़िया जो, नादान दोस्त, जो देखकर भी नहीं देखतें आदि। 'पेपरमेशी' जैसे पाठों को केवल पढ़ने के लिए शामिल कर बच्चों को स्थानीय ज्ञान के प्रति संवेदनशील बनाने का प्रयास भी किया गया है।
• अंत में इस पाठ्यपुस्तक के अध्ययन से क्या निष्कर्ष निकलता है?	निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि यह पाठ्यपुस्तक काफी हद तक अधिगम प्रतिफलों की प्राप्ति में सहायक है। परंतु इसकी सफलता काफी हद तक इसके शिक्षक द्वारा उपयोग करने पर निर्भर करती है। अध्यापक इस पुस्तक के माध्यम से विद्यार्थियों को बाहर की दुनिया से जोड़ें और पाठ्यपुस्तक में दिए गए क्रियाकलापों की ओर भी ध्यान दें।

इस उदाहरण से समझा जा सकता है कि पाठ्यपुस्तक का विश्लेषण किस प्रकार किया जा सकता है। वे कौन से महत्वपूर्ण बिन्दु हैं जिनके बिना विश्लेषण अधूरा है? किस प्रकार विश्लेषण करते हुए हम पाठ्यपुस्तक में से उदाहरणों का सहारा ले सकते हैं? आदि। हमें उम्मीद है अब आप किसी भी पाठ्यपुस्तक का विश्लेषण कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त कई बार विश्लेषण के कुछ विशेष आधार भी हो सकते हैं जैसे जेंडर दृष्टिकोण से पाठ्यपुस्तकों का विश्लेषण, केवल भाषिक दृष्टि से पाठ्यपुस्तकों का विश्लेषण आदि।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

1. किसी विद्यालय के अंदर होने वाली सभी प्रक्रियाएं किसके अंतर्गत आती हैं?
   (क) पाठ्यपुस्तक (ख) पाठ्यचर्या
   (ग) पाठ्यक्रम (घ) इनमें से कोई नहीं
2. पाठ्यचर्या समिति ने 'द करीकुलम फॉर टेन इयर स्कूल : ए फ्रेमवर्क' कब लिखा था?
   (क) 1955 (ख) 1965
   (ग) 1975 (घ) 1985
3. किसी भी पाठ का अवलोकन एवं विश्लेषण करते समय किस तथ्य का ध्यान रखना आवश्यक है?
   (क) शीर्षक (ख) उद्देश्य
   (ग) भाषा एवं विषयवस्तु (घ) ये सभी

2.3 अध्ययन कौशल विकसित करना

शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में अध्ययन कौशल बहुत ही महत्वपूर्ण है। किसी विषय के शिक्षण में जो उद्देश्य निर्धारित किए जाते हैं उनका विधिवत अध्ययन किया जाता है। अध्ययन कौशल के माध्यम से विद्यार्थी की क्षमता का पता लगाया जा सकता है। किस विद्यार्थी ने शिक्षण के निर्धारित उद्देश्य को प्राप्त किया है, किस विद्यार्थी का बौद्धिक स्तर क्या है? आदि बातें उसके अध्ययन कौशल पर निर्भर करती हैं। अध्यापकों का कर्तव्य है कि वे छात्रों का अध्ययन कौशल विकसित करने में अपना पूरा सहयोग दें।

हम यह कैसे पता लगा सकते हैं कि कक्षा में जो भी शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया के माध्यम से पढ़ाया गया है, वह विद्यार्थी ने सीखा या नहीं? यदि सीख लिया है तो कितना सीखा है और जो सीखा है उसमें त्रुटियों का स्तर क्या है। इन सभी प्रश्नों का जवाब हमें विद्यार्थियों के मूल्यांकन के माध्यम से मिलेगा। मूल्यांकन का शाब्दिक अर्थ किसी वस्तु की उपयोगिता एवं महत्व का अंकन करना है। भाषा के संदर्भ में मूल्यांकन का अर्थ भाषा सीखने के पश्चात विद्यार्थी के लिए वह भाषा कितनी उपयोगी सिद्ध हुई है इस बात का निरीक्षण करना है।

भोलानाथ तिवारी के अनुसार, "कोई व्यक्ति भाषा सीख रहा है तो उसने भाषा कितनी सीख ली है, इसका पता लगाने के लिए समय–समय पर भाषा–अधिगम मूल्यांकन या भाषा–संप्राप्ति–मूल्यांकन करते हैं।"

वांट एवं ब्राउन के अनुसार, "मूल्यांकन किसी वस्तु के मूल्य को निर्धारित करने के कार्य या प्रक्रिया की ओर संकेत करता है। मूल्यांकन मापन पर निर्भर है, मापन का समानार्थी नहीं है। मूल्यांकन इस प्रकार के प्रश्न के उत्तर में मापन से आगे भी आता है कि क्या प्राप्त मात्रा वांछनीय है।"

रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव के अनुसार, "यह उद्देश्य बाधित वह नियमित शैक्षिक प्रक्रिया है जो छात्रों की सामर्थ्य क्षमता को उनकी निरीक्षणीय क्रिया व्यवहार के सहारे इसलिए पता लगाती है कि शिक्षण प्रक्रिया अधिक प्रभावी रूप से चल सके।"

मुख्यतः मूल्यांकन का संबंध शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों एवं व्यक्तित्व के परिवर्तनों से है। निरंजन कुमार सिंह इस संदर्भ में लिखते हैं कि "मूल्यांकन का संबंध विषय की ज्ञानोपलब्धि मात्र से नहीं है, जैसा कि परंपरागत परीक्षा में पाया जाता है। इसका संबंध तो विषय–वस्तु के ज्ञान के साथ–साथ अभिरुचि, व्यक्तित्व के गुण, रुचि, अभिवृत्ति आदि के विकास और परिवर्तन से भी है।" अतः मूल्यांकन केवल ज्ञान का मापन नहीं है यह तो एक ऐसी प्रक्रिया है जो यह बताती है कि किस सीमा तक शैक्षणिक उद्देश्यों की प्राप्ति हो सकी है? शिक्षण प्रक्रिया कितनी प्रभावपूर्ण सिद्ध हुई है? और इसके साथ ही इससे यह मापने में मदद मिलती है कि विद्यार्थी के व्यक्तित्व का विकास कितना एवं कितनी सफलता के साथ हो सका। इस प्रकार हम मूल्यांकन के महत्व को निम्नलिखित प्रकार से रेखांकित कर सकते हैं–

टिप्पणी

- मूल्यांकन से शिक्षा के उदेश्य के स्पष्टीकरण में सहायता मिलती है।
- मूल्यांकन से शिक्षण प्रक्रिया एवं उसके स्वरूप में वांछित परिवर्तन के लिए सहायता मिलती है।
- मूल्यांकन ही पाठ्यक्रम में संशोधन एवं परिवर्तन का आधार बनता है।
- मूल्यांकन विद्यार्थियों के लिए भी सीखने की प्रक्रिया में मदद करता है।
- मूल्यांकन ही छात्रों के निर्देशन के लिए आधार का काम करता है।

2.3.1 प्रश्नों के प्रकार एवं उद्देश्य

मूल्यांकन की अनेक विधियां हैं। इनमें लिखित परीक्षा, मौखिक परीक्षा, सृजनात्मक लेखन, गतिविधियां, कार्यकलाप, जांच–सूची जैसे बहुत से तरीके शामिल हैं। इनमें लिखित एवं मौखिक परीक्षा वृहद स्तर पर अपनाई जाने वाली एक विधि है। इन परीक्षाओं के लिए एक अच्छे प्रश्नपत्र का निर्माण किया जाना आवश्यक है। इनमें शामिल किए जाने वाले प्रश्नों के स्वरूप पर विचार करने से पहले हम एक अच्छे प्रश्नपत्र में क्या गुण होने चाहिए इस पर चर्चा करेंगे–

- सर्वप्रथम प्रश्नों की रचना ऐसी होनी चाहिए जिनका मूल्यांकन अलग–अलग परीक्षकों द्वारा होने पर भी इनके परिणाम एक ही हों। इसका अर्थ है कि जब विद्यार्थी उस प्रश्न को पढ़ें तो वे उसका एक ही अर्थ निकालें और उसी के अनुसार जवाब दें।
- प्रश्न ऐसे होने चाहिए जिनसे जिस विषय की परीक्षा लेनी हो वह उद्देश्य पूरा हो। अर्थात जिन उद्देश्यों की पूर्ति को ध्यान में रख कर हम परीक्षा का आयोजन करते हैं, उनकी पूर्ति का ठीक–ठीक मूल्यांकन हो जाए तभी परीक्षा प्रामाणिक कही जाएगी। उदाहरण के लिए यदि हम विद्यार्थियों के लेखन–कौशल की जांच करना चाहते हैं तो प्रश्न भी ऐसे ही होने चाहिए जो लेखन कौशल की जांच करें न कि ज्ञान की।
- प्रश्न बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उनमें विश्वसनीयता हो अर्थात एक प्रश्नपत्र कई बार दिए जाने पर भी फल में एकरूपता होनी चाहिए। यदि

टिप्पणी

किसी परीक्षा में प्रश्नों की विश्वसनीयता बनी रहती है तो वह परीक्षा भी उतनी ही विश्वसनीय है।

- परीक्षा में प्रश्न इस प्रकार के हों कि उनके आधार पर छात्रों का वर्गीकरण आसानी से किया जा सके। परीक्षण का एक मुख्य कार्य बच्चों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं को मापना है।
- प्रश्नपत्र व्यावहारिक होने चाहिए अर्थात प्रश्नपत्र ऐसे होने चाहिए जिनके करने में विद्यालय के वातावरण, समय सारिणी और परीक्षा की अवधि के अनुसार कोई कठिनाई न हो। प्रश्नों की भाषा सुगम हो जिनको विद्यार्थी आसानी से समझ लें। समय, शक्ति, श्रम, व्यय, व्यवस्था आदि की दृष्टि से परीक्षा लेना सरल होना चाहिए।

प्रश्नों के प्रकार

मूल्यांकन की दृष्टि से प्रश्नों को निम्नलिखित प्रकारों में बांटा जा सकता है–

1. निबंधात्मक प्रश्न
2. लघु उत्तर वाले प्रश्न
3. वस्तुनिष्ठ प्रश्न
   - बहुविकल्प प्रश्न
   - सत्य/असत्य प्रश्न
   - मिलान पद
   - वर्गीकरण या विभेदीकरण पद
   - वाक्य पूर्ति पद
   - सरल प्रत्यास्मरण

आइए अब इन प्रश्नों के स्वरूपों पर विस्तारपूर्वक चर्चा करते हैं–

(1) निबंधात्मक प्रश्न : निबंधात्मक प्रश्नों का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थी की विषयवस्तु के ज्ञान की जानकारी का पता लगाना ही होता है। निबंधात्मक प्रश्नों में विद्यार्थी के पास प्रश्नों का उत्तर देने के लिए पर्याप्त समय रहता है। परंतु निबंधात्मक प्रश्नों में कुछ दोष भी हैं जो निम्नलिखित हैं–

- इस प्रकार के प्रश्नों में प्रश्नकर्ता का उद्देश्य स्पष्ट नहीं हो पाता कि वह वास्तव में क्या जांचना चाहता है। इससे परीक्षण की वैधता नष्ट हो जाती है।
- कई बार ऐसा देखा गया है कि निबंधात्मक प्रश्नों के कारण बच्चों में अधिकाधिक कंठस्थ करने की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलता है।
- इस प्रकार के प्रश्नों से संपूर्ण पाठ्यविषय को समावृत नहीं कर पाते, फलस्वरूप विद्यार्थी सम्पूर्ण पाठ्यसामग्री का अध्ययन न करके कुछ चुने हुए अंशों का ही अध्ययन करते हैं और परीक्षा में यथेष्ट सफलता भी प्राप्त कर लेते हैं। इसी कारण परीक्षा के पहले प्रश्नपत्रों के संबंध में नाना प्रकार के अनुमान लगाए जाने लगते हैं।

- इन प्रश्नों के उत्तर की कोई सीमा नहीं होती। जो विद्यार्थी जितना जानता है उतना लिखता है अतः विश्वसनीयता का अभाव पाया जाता है।
- प्रश्नों की भाषा इस ढंग की होती है कि विभिन्न परीक्षक उनके उत्तर की जांच विभिन्न दृष्टिकोणों से करते हैं। परीक्षकों के सामने प्रश्नोत्तरों के नमूने भी नहीं होते हैं, अतः अंक देने में मनमानापन चलता रहता है।

टिप्पणी

उदाहरण के लिए निम्नलिखित निबंधात्मक प्रश्नों को देखिए–

1. प्रेमचंद की कहानी कला की विशेषताएं बताइए।
2. 'बाल्य स्वभाव का जैसा सजीव एवं स्वाभाविक वर्णन सूरदास ने किया है वैसा और किसी कवि ने नहीं।' इस कथन की सार्थकता सोदाहरण सिद्ध कीजिए।

इन प्रश्नों पर विचार–विमर्श करने से स्पष्ट हो जाता है कि इनका कोई निश्चित उद्देश्य नहीं है। यह भी पता नहीं चलता कि प्रश्नकर्ता किस योग्यता या किन योग्यताओं की जांच करना चाहता है। अपेक्षित उत्तर की भी कोई सीमा नहीं। परीक्षक अपने–अपने दृष्टिकोण के अनुसार इनकी जांच करने के लिए स्वतंत्र हैं। परंतु इस प्रकार के दोष होते हुए भी भाषा की परीक्षा में निबंधात्मक प्रश्नों को बहिष्कृत नहीं किया जा सकता क्योंकि इनकी कुछ विशेषताएं भी हैं। निबंधात्मक प्रश्नों से बच्चों की भाषा–शक्ति, अभिव्यक्ति–क्षमता, मौलिक विचार एवं समीक्षात्मक शक्ति, विषय–वस्तु को अपने ढंग से संगठित करके प्रस्तुत करने की कला आदि की परीक्षा हो पाती है जो अन्य प्रकार के प्रश्नों द्वारा संभव नहीं है। इसलिए निबंधात्मक प्रश्नों को हटाने के बजाय उनकी रचना में सुधार करने की आवश्यकता है।

(2) लघु उत्तर वाले प्रश्न : निबंधात्मक प्रश्नों के दोषों का निवारण काफी हद तक लघु उत्तर वाले प्रश्नों से हो सकता है। इन लघुत्तरात्मक प्रश्नों का सबसे बड़ा लाभ यह है कि सम्पूर्ण पाठ्यविषय पर आधारित प्रश्न दिए जा सकते हैं। इनका उत्तर लिखने में समय भी काफी कम लगता है। इनमें बहुत हद तक विश्वसनीयता एवं वस्तुनिष्ठता पाई जाती है। उदाहरण के लिए 'साहित्य के महत्व' पाठ पर आधारित लघुत्तरात्मक प्रश्न इस प्रकार पूछे जा सकते हैं–

1. लेखक के अनुसार साहित्य की परिभाषा क्या है?
2. साहित्य को किन बातों का निर्णायक कहा गया है?
3. अपनी भाषा एवं साहित्य के विकास के पक्ष में लेखक द्वारा प्रस्तुत किन्हीं तीन तर्कों का उल्लेख कीजिए।

इन प्रश्नों के उत्तर संक्षेप रूप में दिए जा सकते हैं।

(3) वस्तुनिष्ठ प्रश्न : हम भाषा में परीक्षा केवल निबंधात्मक एवं लघुत्तरात्मक प्रश्नों के द्वारा ही नहीं ले सकते क्योंकि उपर्युक्त मूल्यांकन सिद्धांतों की दृष्टि से पूर्णतः वैध एवं विश्वसनीय नहीं हो सकता और न ही सम्पूर्ण पाठ्यविषय को वह समवृत्त ही कर सकता है। इसलिए शिक्षा विशेषज्ञ, वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के समावेशन पर बल देते हैं। वर्तमान में मूल्यांकन के लिए वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का बहुत महत्व है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर में विचारों की स्वतन्त्रता नहीं रहती है। प्रश्नोत्तरों के विकल्प दिए रहते हैं उनमें से ही सही उत्तर को चिह्नित करना होता है इसलिए इनका

टिप्पणी

जवाब बहुत ही कम समय में दिया जा सकता है। इनकी जांच में भी कम समय लगता है। इनके उत्तरों के लिए एक कुंजी बनाई जा सकती है जिसकी मदद से ये आसानी से जांचे जा सकते हैं।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के लाभ निम्नलिखित हैं–

- इस प्रकार के प्रश्न पाठ्यविषय को अधिक से अधिक समावृत कर सकते हैं।
- जिस योग्यता की परीक्षा लेना चाहते हैं केवल उसी से संबंधित प्रश्नों का निर्माण कर सकते हैं।
- इनका जवाब देने में और इनकी जांच करने में कम समय लगता है।
- भाषिक तत्त्वों का ज्ञान, वर्तनी, शब्दार्थ, शब्द रचना, शब्द प्रयोग, वाक्य रचना, वाक्य प्रयोग आदि तथा वैचारिक सामग्री में तथ्य एवं सूचना आदि के ज्ञान की परीक्षा के लिए वस्तुनिष्ठ प्रश्न बहुत उपयोगी हैं।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न भी कई प्रकार के होते हैं। इनके बारे में थोड़ा विस्तार से समझने का प्रयास करते हैं–

• **बहुविकल्प प्रश्न** : इस प्रकार के प्रश्न कथन के रूप में पूछे जाते हैं और सही उत्तर के लिए चार–पांच विकल्प दिए जाते हैं जिनमें से सही उत्तर का चुनाव करना होता है। उत्तर का चुनाव भी कई प्रकार से होता है– (1) ऐसा प्रश्न जिसके दिए हुए अनेक उत्तरों में से एक सही उत्तर का चुनाव करना होता है। (2) ऐसा प्रश्न जिसके एक से अधिक सही उत्तर होते हैं उसके लिए सही उत्तर के जोड़े बना दिए जाते हैं फिर उनमें से चुनाव करना होता है। नीचे लिखे गए उदाहरण देखिए–

(1) अनेक उत्तरों में से एक सही उत्तर वाला प्रश्न

बच्चे प्रारम्भ से ही–

(क) एकभाषिक होते हैं

(ख) द्विभाषिक होते हैं

(ग) बहुभाषिक होते हैं

(घ) भाषा में कमजोर होते हैं

(2) उत्तर के जोड़े वाला प्रश्न

निम्नलिखित में से कौन सी रचनाएं, भारतीय प्रशासन व्यवस्था पर सटीक व्यंग्य करती हैं?

(क) भोलाराम का जीव

(ख) सिक्का बदल गया

(ग) जामुन का पेड़

(घ) पिता

नीचे दिए विकल्पों में से सही उत्तर का चुनाव कीजिए–

(A) (क) और (ग)

(B) (क), (ख) और (ग)

(C) (ख), (ग) और (घ)

(A) (क), (ग) और (घ)

[]

टिप्पणी

• **सत्य/असत्य प्रश्न** : ये ऐसे प्रश्न हैं जिनका जवाब सत्य/असत्य या हां/नहीं के रूप में देना होता है। उदाहरण–

तुलसीदास के संबंध में नीचे कुछ कथन दिए गए हैं और उनके सामने सत्य/असत्य लिखा हुआ है। सही उत्तर पर निशान लगाइए–

(क) उनकी उपासना माधुर्य भाव की थी। (सत्य/असत्य)

(ख) उन्होंने राम के लोकरक्षक के रूप को अधिक महत्व दिया। (सत्य/असत्य)

(ग) उनके पद साहित्य लहरी में संकलित हैं। (सत्य/असत्य)

(घ) उनकी रचनाएं केवल ब्रज भाषा में हैं। (सत्य/असत्य)

(ड) उनकी भक्ति दास्य भाव की थी। (सत्य/असत्य)

(च) उन्होंने अपनी रचनाओं में सामाजिक मर्यादा का ध्यान रखा। (सत्य/असत्य)

• **मिलान पद** : ऐसे प्रश्नों में दो स्तंभों में दिए गए बिना क्रम के कथनों या शब्दों का सही मिलान करना पड़ता है।

उदाहरण–

नीचे पहले स्तंभ में कुछ विशेषण और दूसरे स्तंभ में विशेष्य दिए गए हैं। विशेषण और विशेष्य का उचित मिलान कीजिए–

विशेषण	**विशेष्य**
1. घमासान	पंडित
2. घनघोर	पवन
3. सूचीभेद्य	युद्ध
4. तीक्ष्ण	घटा
5. प्रकांड	धार
6. प्रचण्ड	अंधकार

• **वर्गीकरण या विभेदीकरण पद** : इसमें दिए गए अनेक शब्दों या शब्दों के समूह में से विजातीय को चिह्नित करना शामिल है।

उदाहरण–

नीचे प्रत्येक पंक्ति में पांच शब्द लिखे हैं जिनमें चार एक वर्ग के हैं। जो उस वर्ग का नहीं है उसे रेखांकित कीजिए–

(क) ने, को, से, तुम, पर

(ख) यश–अपयश, सुख–दुख, आचार–विचार, हर्ष–विषाद, ऊंच–नीच

(ग) वसुधा, अचला, वसुंधरा, भूधर, धरा

(घ) उपमा, रूपक, वीभत्स, उत्प्रेक्षा

(ड) सूरसागर, साकेत, पद्मावत, जायसी, रामचरितमानस

• **वाक्य पूर्ति पद** : इस प्रकार के प्रश्नों में ऐसे कथन दिए जाते हैं जिनमें एक या दो शब्दों के स्थान रिक्त रहते हैं और छात्र उपयुक्त शब्दों द्वारा (यदि शब्द दिए गए हैं तो उनमें से उपयुक्त शब्द चुनकर और यदि नहीं दिए गए हैं तो स्वयं) उनकी पूर्ति करते हैं। उदाहरण–

टिप्पणी

(1) हिन्दी गद्य साहित्य के प्रवर्तकों में .....का नाम अग्रणी बना रहेगा।

(2) हिन्दी उपन्यास जगत में प्रेमचंद को .....के नाम से विभूषित किया जाता है।

(3) सुमित्रानंदन पंत को उनकी रचना .....पर ज्ञानपीठ का पुरस्कार मिला।

(4) रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ .....थे।

(5) छायावाद के सर्वप्रमुख कवियों में .....नाम विशेष उलेखनीय हैं।

• **सरल प्रत्यास्मरण** : इसमें एक छोटा–सा प्रश्न पूछा जाता है जिसका उत्तर भी संक्षिप्त होता है। (एक या आधा वाक्य या एक शब्द)

उदाहरण–

नीचे कुछ ग्रन्थों के नाम लिखे गए हैं। प्रत्येक के सामने उसके रचयिता का नाम लिखिए–

(1) पद्मावत .....

(2) गोदान .....

(3) साकेत .....

(4) अजातशत्रु .....

(5) चिंतामणि .....

(6) कामायनी .....

2.3.2 विभिन्न विषयों के प्रश्नों के उत्तर कैसे दें (मौखिक एवं लिखित)

किसी भी विषय में उत्तर लेखन की प्रक्रिया को चार चरणों में विभाजित करके समझा जा सकता है–

1. प्रश्न को समझना तथा सुविधा के लिए उसे कई भागों में बांटना।
2. उत्तर की रूपरेखा तैयार करना।
3. उत्तर लिखना।
4. उत्तर के प्रस्तुतीकरण को आकर्षक बनाना।

प्रश्न को समझना तथा सुविधा के लिए उसे कई भागों में बांटना

किसी भी विषय में उत्तर–लेखन की प्रक्रिया का प्रथम चरण यही है कि उम्मीदवार प्रश्न को कितने सटीक तरीके से समझता है तथा उसमें छिपे विभिन्न उप–प्रश्नों तथा उनके पारस्परिक संबंधों को कैसे परिभाषित करता है? सच तो यह है कि आधे से अधिक विद्यार्थी इस पहले चरण में ही गंभीर गलतियां कर बैठते हैं।

टिप्पणी

- प्रश्न को समझने का अर्थ यह है कि प्रश्न में क्या पूछा गया है? कई बार प्रश्न की भाषा ऐसी होती है कि हम संदेह में रहते हैं कि क्या लिखें और क्या छोड़ें? इस समस्या का निराकरण करने के लिए प्रश्न को समझने की क्षमता का विकास करना आवश्यक है।
- प्रश्न को ठीक से समझने के लिए मुख्यतः दो बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए–
  1. प्रश्न के अंत में किस शब्द का प्रयोग किया गया है।
  2. प्रश्न के कथन में कितने तार्किक हिस्से विद्यमान हैं और उन सभी में आपसी संबंध क्या है?
- प्रश्न के अंत में दिए गए शब्दों से आशय उन शब्दों से है जो बताते हैं कि प्रश्न के संबंध में अभ्यर्थी को क्या करना है? ऐसे शब्दों में विवेचन कीजिए, विश्लेषण कीजिए, प्रकाश डालिए, व्याख्या कीजिए, मूल्यांकन कीजिए, आलोचनात्मक मूल्यांकन, परीक्षण, निरीक्षण, समीक्षा, आलोचना, समालोचना, वर्णन/विवरण एवं स्पष्ट कीजिए/स्पष्टीकरण दीजिए इत्यादि शामिल हैं।
- इन शब्दों के आधार पर तय होता है कि परीक्षक विद्यार्थी से उत्तर में क्या उम्मीद कर रहा है?

उत्तर की रूपरेखा तैयार करना

- उत्तर–लेखन प्रक्रिया के दूसरे चरण के अंतर्गत उत्तर की एक संक्षिप्त रूपरेखा बनाई जा सकती है। कई विद्यार्थी इस प्रक्रिया का प्रयोग करने से बचते हैं और समय बचाने के लिए सीधे उत्तर लिखने की शुरुआत कर देते हैं। अगर उनकी लेखन क्षमता बहुत सधी हुई न हो तो यह मानकर चलना चाहिए कि उनके उत्तर में अव्यवस्था तथा बिखराव का आना स्वाभाविक है।
- बहुत अच्छी लेखन क्षमता वाले कुछ विद्यार्थियों का स्तर तो इतना ऊंचा होता है कि वे प्रश्न को पढ़ते ही मन ही मन उत्तर की रूपरेखा तैयार कर लेते हैं और सीधे उत्तर–लेखन की शुरुआत कर देते हैं।
- रूपरेखा बनाने का अर्थ यह है कि उत्तर से संबंधित जो बिन्दु विद्यार्थी के दिमाग में हैं, उन्हें किसी रफ कागज पर लिखकर व्यवस्थित कर लिया जाए।

उत्तर लिखना

- एक अच्छे उत्तर की दो विशेषताएं होती हैं– प्रामाणिकता एवं प्रवाह। प्रामाणिकता से अभिप्राय है कि उत्तर में ऐसे ठोस तथ्य एवं तर्क विद्यमान होने चाहिए जिनसे प्रश्न की वास्तविक मांग पूरी होती हो अर्थात परीक्षक को उत्तर पढ़कर यह महसूस होना चाहिए कि विद्यार्थी ने विषय का गंभीर अध्ययन किया है। प्रवाह का अर्थ है कि उत्तर के पहले शब्द से अंतिम शब्द तक ऐसी क्रमबद्धता होनी चाहिए कि परीक्षक को उत्तर पढ़ते समय बीच में कहीं न रुकना पड़े।
- उत्तर लिखते हुए दी गई शब्द सीमा का ध्यान रखना चाहिए।
- प्रश्न की प्रकृति के अनुसार उत्तर को बिन्दुओं में अनुच्छेद में लिखा जा सकता है।

- उत्तर लिखने में भाषा–शैली की सरलता एवं सहजता बनाए रखना चाहिए। शब्दों के चयन में सावधानी रखना अनिवार्य है।

उत्तर के प्रस्तुतीकरण को आकर्षक बनाना

- उत्तर के सबसे महत्वपूर्ण शब्दों तथा वाक्यों को रेखांकित करना न भूलें। लिखावट साफ–सुथरी होनी चाहिए।
- अपने शब्दों तथा पंक्तियों के मध्य खाली स्थान इस प्रकार से छोड़ें कि आपके उत्तर आकर्षक नजर आएं।

टिप्पणी

2.3.3 नोट लेना एवं नोट बनाना

नोट लेने की आवश्यकता मुख्य तौर पर दो स्थितियों में पड़ती है। पहला, जब हम किसी अन्य लिखित क्रियाकलाप के प्रारम्भिक चरण के रूप में नोट लेते हैं, जैसे– रिपोर्ट, कार्यवृत अथवा अभिलेख तैयार करने में आधार सामग्री की दृष्टि से। इसी प्रकार से विज्ञान प्रयोगशाला में प्रयोग करने के साथ–साथ महत्वपूर्ण चरणों या अभिक्रियाओं को नोट करना अथवा सामाजिक अध्ययन के अंतर्गत भ्रमण के दौरान देखी एवं अनुभव की गई महत्वपूर्ण बातों को नोट करना भी आगे के लेखन के लिए आधार सामग्री प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त विद्यार्थी कक्षा में शिक्षण के दौरान पढ़ाई गई पाठ्य–सामग्री के नोट लिख सकता है साथ ही किसी सभा, विचार–गोष्ठी में वक्ता के भाषण, व्याख्यान को सूत्र में लिखना भी इसमें शामिल है।

नोट बनाना एक कला है। आपने अक्सर अपनी कक्षा में किसी ऐसे विद्यार्थी को देखा होगा जो बहुत अच्छे से नोट बना लेता/लेती है और कक्षा के अन्य विद्यार्थी उनसे मदद मांगते हैं। कई विद्यार्थी अन्य की अपेक्षा अधिक व्यवस्थित एवं सुविचारित ढंग से नोट बना लेते हैं। नोट बनाने की कला में किसी दिए हुए विषय पर अपेक्षित सामग्री ढूंढ़ना, पुस्तकालय से संदर्भ–पुस्तकें अथवा अन्य उपयोगी पुस्तकें लेकर उनमें से वांछित अथवा आवश्यक सामग्री छांटना सम्मिलित हैं।

नोट लेने में सुनने के कौशल का भरपूर विकास होता है। अच्छे नोट बनाने के लिए एकाग्रता के साथ सुनना पड़ता है। इसके साथ ही तीव्र गति से लिखने एवं सार ग्रहण करने का भी अभ्यास होता रहता है। इस दृष्टि से हर स्तर के विद्यार्थियों के लिए यह एक अत्यंत उपयोगी क्रियाकलाप है। जब विद्यार्थियों को नोट लेना सिखाना हो तो इस बात का अभ्यास करवाना चाहिए कि विद्यार्थी सुपाठ्य लेख लिखें। नोट लिखते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि नोट भले ही संक्षिप्त हो परंतु इस प्रकार से लिखे गए हों कि जब उसको विस्तार से लिखा जाए तो सामग्री कम न हो।

नोट बनाने की कला में तीन विशेष कुशलताएं अपेक्षित होती हैं–

- किसी पाठ्यवस्तु में महत्वपूर्ण विचारों के अभिनिर्धारण की कुशलता।
- महत्वपूर्ण विचारों को कुशलता से संक्षिप्त करना।
- संक्षिप्त की गई सामग्री का संगठित रूप से पुनः प्रस्तुतीकरण करना।

किसी पाठ्यवस्तु में महत्वपूर्ण विचारों के अभिनिर्धारण की कुशलता

पाठ्यवस्तु में महत्वपूर्ण विचारों के अभिनिर्धारण की कुशलता में पाठ्यांश को पढ़कर समझने की योग्यता अंतर्निहित है। पठन बोध के लिए आवश्यक है कि पाठ्यांश के

टिप्पणी

विषय/प्रकरण का निर्धारण किया जाए। इसके अतिरिक्त पाठ्यांश के विषय/प्रकरण के द्योतक वाक्य का निर्धारण किया जाए और साथ ही पाठ्यांश में आए उन विवरणों का अभिनिर्धारण किया जाए जो महत्वपूर्ण बिन्दुओं की पुष्टि करते हैं। इससे हम अंदाजा लगा सकते हैं कि पाठ्यवस्तु के नोट बनाने के लिए सबसे पहले हमें उसको पढ़कर समझने की आवश्यकता है। पाठ्यवस्तु को जानने के लिए हमें यह समझने का प्रयास करना चाहिए कि पाठ्यवस्तु किस बारे में है। तत्पश्चात हमें उन वाक्यों/कथनों को छांटना चाहिए जिनसे पाठ्यवस्तु को विषय का परिचय प्राप्त होता है और अंत में उन विवरणों को पहचानना चाहिए जो पाठ्यवस्तु के महत्वपूर्ण बिंदुओं की पुष्टि करते हैं। मुख्य विचारों और उनकी पुष्टि करने वाले विवरणों के निर्धारण के लिए हमें पाठ्यांश को अनेक बार पढ़ना चाहिए। पहली बार पाठ्यांश के व्यापक बोध के लिए और बाद में मुख्य बिन्दुओं और उनकी पुष्टि करने वाले विवरणों के निर्धारण के लिए। पाठ्यांश को पढ़ते हुए हमें महत्वपूर्ण विचारों और उनकी पुष्टि करने वाले विवरणों से संबंधित मुख्य बिन्दु अथवा सर्वाधिक निर्णायक शब्दों को रेखांकित कर लेना चाहिए ताकि बाद में अभिनिर्धारण सहजता से हो सके। इस प्रकार से जो महत्वपूर्ण अंश/वाक्य या बिन्दु हैं उनको रेखांकित किया जा सकता है और नोट बनाने की दृष्टि से जो शब्द या वाक्यांश महत्वपूर्ण नहीं हैं उनको अलग से कोष्ठक में रखा जा सकता है।

महत्वपूर्ण विचारों को कुशलता से संक्षिप्त करना

यह नोट बनाने का अगला चरण है। इसके अंतर्गत अभिनिर्धारण किए गए महत्वपूर्ण विचारों को संक्षिप्त किया जाता है और फिर उन्हें संगठित रूप में पुनः प्रस्तुत किया जाता है। संक्षिप्तीकरण करने के कई तरीके हैं। इनमें से कुछ प्रकार हैं–

- पूरे वाक्य न लिखना।
- सर्वाधिक निर्णायक सूचना को ही लेना।
- शब्दों के स्थान पर लघु रूपों का प्रयोग करना।
- क्रिया को पूरा न लिखकर उसको संक्षेप में लिखना, जैसे 'अपराधी फरार हो गया' के स्थान पर केवल 'अपराधी फरार'।
- जहां संभव हो वहां पूरे शब्दों के स्थान पर उनके संकेताक्षर अथवा संक्षिप्त रूप लिखना, जैसे– भारतीय जनता पार्टी के स्थान पर 'भाजपा'।

संक्षिप्त की गई सामग्री का संगठित रूप से पुनः प्रस्तुतीकरण करना

पाठ्यांश में निहित सूचना को संगठित रूप में पुनः प्रस्तुत करने के लिए हमें सूचना–बिन्दुओं के क्रम को आगे–पीछे अथवा पुनःगठित करना पड़ सकता है। सूचना का पुनः प्रस्तुतीकरण पाठ्यसामग्री की प्रकृति के अनुसार शब्दों में किया जा सकता है अथवा तालिका, ग्राफ, रेखाचित्र, आरेख आदि की सहायता से दृश्य रूप में किया जा सकता है। अभिनिर्धारित तथा संक्षेपित सामग्री को संगठित रूप में पुनः प्रस्तुत करते समय, मुख्य विचारों और पुष्टि करने वाले विवरणों का नोट बनाते समय एक–दूसरे के नीचे नहीं लिखते हैं, अपितु मुख्य विचारों को हाशिए के साथ–साथ लिखा जाता है और उनकी पुष्टि करने वाले विवरणों को हाशिए से थोड़ा दूर। इस प्रकार उनका आसानी से अभिनिर्धारण हो सकता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि सुनियोजित तथा सुव्यवस्थित रूप से नोट बनाने के लिए उपर्युक्त प्रक्रिया का उपयोग किया जा सकता है। इस प्रक्रिया में कुशलता प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों को नोट बनाने के पर्याप्त अवसर देने होंगे और अभ्यास कराना होगा।

टिप्पणी

2.3.4 सारांश लिखना

सामान्यतः कक्षा आठ के बाद छात्रों में किसी पठित सामग्री को संक्षिप्त रूप या सारांश में प्रस्तुत करने की क्षमता आ जानी चाहिए। सार ग्रहण में पाठांतर्गत तथ्यों, भावों, विचारों की उपेक्षा न करके उनकी संक्षिप्त अभिव्यक्ति पर बल देना चाहिए, यह बात छात्रों को स्पष्ट कर देनी चाहिए।

सारांश लिखने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए–

- एक, दो या अधिक बार पढ़कर मूल सामग्री को समझना चाहिए।
- सामग्री में आई व्याख्याओं, उदाहरणों और भावों के दोहराव को रेखांकित कर लेना चाहिए।
- मूलभाव को अलग से कागज पर लिख लेना चाहिए।
- मूलभाव और उससे संबंधित भावों के आधार पर अन्य पुरुष शैली में मूल सामग्री से लगभग एक–तिहाई आकार में संक्षिप्त करके सारांश लिखना चाहिए।
- यदि आवश्यक हो तो मूलभाव के आधार पर सारांश का शीर्षक लिखना चाहिए।
- लिखित सार को पढ़कर देखना चाहिए कि उसमें कोई मुख्य बात आने से रह तो नहीं गई है।
- आवश्यक होने पर सार का संपादन करना चाहिए। संपादन का अर्थ है कि सार में कोई मुख्य बात आने से रह गई हो तो उसे जोड़ा जाए और यदि उसमें कोई दोहराव है तो उसे हटाया जाए।
- जहां तक संभव हो, कम से कम शब्दों में मुख्य विचारों को प्रस्तुत किया जाना चाहिए।
- सारांश लिखते हुए भाषा का भी ध्यान रखना आवश्यक है। लिखते हुए जटिल शब्दावली का प्रयोग नहीं करना चाहिए और ज्यादा लंबे वाक्य नहीं लिखने चाहिए।

2.3.5 लेखन प्रक्रिया, प्रभावी लेखन के गुण

जब मनुष्य सभ्यता के दौर में प्रवेश कर रहा था उस समय प्रकृति की नकल करना उसकी एक प्रवृत्ति बन गई थी। उसने गुफाओं के अंदर दीवारों पर प्राकृतिक रंगों से अनेक चित्र बनाए। ये दृश्यात्मक अंकन था। इसके बाद मानव विकास का दौर चला और अनेक पड़ावों को पार करते हुए लेखन की उत्पत्ति हुई। यदि लेखन का आविष्कार नहीं किया जाता तो हम भूतकाल के विषय में, विभिन्न स्थानों एवं लोगों के विषय में कुछ नहीं जान पाते। लेखन को अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम माना गया है। लेखन विविध प्रकार की विधाओं में किया जाता है। अभिव्यक्ति के तरीकों और लेखन की विशेषताओं के आधार पर लेखन को दो मुख्य प्रकारों में विभाजित किया जाता है–

(1) सृजनात्मक लेखन

(2) वर्णनात्मक लेखन

टिप्पणी

सृजनात्मक लेखन

सृजनात्मक लेखन को कुछ लोग एक आध्यात्मिक प्रक्रिया मानते हैं। इसका उद्देश्य सूचित करना मात्र ही नहीं, अपितु रहस्यों व रसों को उद्‌घाटित करना है। एक रचनात्मक लेखन कभी तटस्थ रूप से दुनिया की ठोस चीजों के बारे में बात करता है तो कभी भावविभोर होकर वह प्रेम, पवित्रता, पलायन, ईश्वर, नश्वरता आदि विषयों के बारे में अपने उद्‌गार व्यक्त करता है। अन्यथा लेखन में वह अपनी अपूर्व कल्पना का इस्तेमाल करता है। वह जीवन के विभिन्न पहलुओं में संबंध बनाता है और सामाजिक स्थितियों और घटनाओं के विषय में लिखता है।

इस प्रकार सृजनात्मक लेखन के माध्यम से लेखक अपने दिल के करीब के विषयों को प्रकाशित करता है, उन्हें ऊंचा उठाता है और लेखन के माध्यम से समाज में परिवर्तन लाने का प्रयास करता है। एक प्रकार से उसका वजूद ही उसके लेख, कहानी या उपन्यास में होता है। किसी विषय पर लेखक क्या सोचता है यह हम उसके लेखन में महसूस कर सकते हैं अर्थात किसी लेखक के निजी दृष्टिकोण से उसके लेखन के माध्यम से परिचित हुआ जा सकता है।

सृजनात्मकता सभी कलाओं की प्राथमिक प्रेरणा है। इसे परिभाषित करना बेहद कठिन है। यह एक आदर्श वैचारिकता है जो एक लेखक के मस्तिष्क की कल्पनापूर्ण स्वाभाविक प्रवृत्ति है तथा लेखक से संबंधित उसके अतीत और वर्तमान के परिवेश से प्रभावित है।

प्रभावशाली सृजनात्मक लेखन की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- पाठकों का ध्यान आकर्षित करता है।
- पाठकों में रुचि व इच्छा जाग्रत करता है।
- पाठकों तक एक सुस्पष्ट संदेश प्रेषित करता है।

वर्णनात्मक लेखन

इस प्रकार के लेखन का प्रमुख उद्देश्य सूचित करना है। इस प्रकार का लेखन वर्णनात्मक है। यह लेखन व्याख्यात्मक भी है। यह लेखन विभिन्न विषयों पर प्रकाश डालता है और इस प्रकार के लेखन से विषयों के विभिन्न पहलुओं को दर्शाया जाता है। इस प्रकार के लेखन का आम उदाहरण है– 'निबंध'। इस श्रेणी की अन्य विधाएं हैं– आलेख, रिपोर्ताज आदि।

इस प्रकार का लेखन सूचनाओं व विचारों से संबंधित होता है। इस श्रेणी की विधाएं सूचना प्रधान होने के साथ–साथ ज्ञानवर्धक भी होती हैं। इतिहास, धर्म और विज्ञान इत्यादि से संबंधित पुस्तकें इसी श्रेणी में आती हैं। सूचित करने के इस उद्देश्य को बेहतर ढंग से प्राप्त करने और प्रभावशाली बनाने के लिए लेखक विश्लेषण का इस्तेमाल करता है। इन विधाओं के लेखक पाठकों के साथ संबंध बनाने के लिए अपने विचार, तर्क व उदाहरण आदि को व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करते हैं।

इसके अतिरिक्त रचना के आधार पर भी इसे दो भागों में विभाजित किया जा सकता है–

(1) नियमबद्ध लेखन

(2) मुक्त लेखन

टिप्पणी

नियमबद्ध लेखन : नियमबद्ध लेखन में प्रतिबंध स्वरूप अनेक नियम हैं जिनका पालन आवश्यक है। लेखक उन नियमों से आबद्ध रहता है। ये नियम भी दो प्रकार के हैं– पहले, भाषा संबंधी जैसे शब्द, वाक्य, अनुच्छेद, विराम चिह्न आदि जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है। दूसरे, ऐसे विषय संबंधी जिनमें सुनिश्चित प्रणाली एवं क्रिया विधि का अनुसरण करना पड़ता है जैसे पत्र–प्रपत्र–

- वाणिज्यिक एवं व्यावसायिक पत्र।
- निजी एवं पारिवारिक पत्र।
- समाचार पत्र के संपादक के नाम पत्र।
- किसी सभा, समिति, अधिवेशन, समारोह आदि की रिपोर्ट।
- विविध प्रकार के प्रपत्र भरना– मनीआर्डर, तार, बैंक फॉर्म आदि।

रचना संबंधी इन विषयों का शिक्षण विद्यालयों में करवाया जाता है। विद्यार्थियों को इनके लिखने की प्रणाली एवं क्रियाविधि का परिचय विविध उदाहरणों एवं नमूनों द्वारा करवाना चाहिए और प्रचुर मात्रा में अभ्यास करवाना चाहिए।

मुक्त लेखन : इस प्रकार के लेखन में भाषा संबंधी नियमों का पालन करते हुए भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से स्वेच्छानुसार शब्दों को चुनकर, संवारकर तथा सजाकर संयोजित करते हैं। पत्र–प्रपत्रों की भांति प्रतिबंधों एवं नियमों से वह बंधा नहीं रहता।

मुक्त लेखन की दृष्टि से अनेक प्रकार के विषय चुने जा सकते हैं किन्तु प्रारम्भ में ही बालक से स्वतंत्र मौलिक रचनाओं की अपेक्षा नहीं की जा सकती। अतः उनको पहले सरल, ज्ञात, पठित एवं स्थूल विषयों पर कुछ स्वतन्त्रतापूर्वक लिखने के लिए कहना चाहिए–

- पठित महापुरुषों की जीवनी।
- चित्रों के आधार पर वर्णन।
- तथ्यात्मक वर्णन (सामाजिक–विज्ञान एवं विज्ञान के पाठों पर आधारित)।
- देखे–सुने का अथवा बातचीत आधारित वर्णन।
- अनुभव पर आधारित वर्णन जैसे– यात्रा, प्रकृति वर्णन, घटना वर्णन, मेला वर्णन आदि।
- पठित पाठ्य–सामग्री के आधार पर प्रश्नों के उत्तर, पाठों के सारांश एवं संक्षिप्तीकरण।

प्रभावी लेखन के गुण

जब प्रभावी लेखन की बात की जाती है तो कुछ ऐसे तत्त्वों को जानना आवश्यक है, जो लेखन को प्रभावी बनाते हैं। ये तत्त्व इस प्रकार हैं–

टिप्पणी

- **सरल भाषा का प्रयोग** : लेखन को शैलीमय बनाना आसान होता है। लेखन को किसी निश्चित ढांचे में ढालना भी कोई कठिन कार्य नहीं होता। किन्तु लेखन में सरलता ला पाना एक कठिन कार्य है। लेखन में सरलता ला पाना अपने आप में एक कला माना जाता है। वास्तव में यह एक शिल्प या कौशल मात्र है। अभ्यास से हम लेखन में सरलता लाने में भी दक्ष हो सकते हैं। लेखन में सरलता एक अति आवश्यक पहलू है। सरलता के कारण ही लेखन में स्पष्टता, प्रवाहशीलता व बोधगम्यता आती है।
- **सरल शब्दों का प्रयोग** : कठिन, भारी–भरकम व जटिल शब्द लेख की पठनीतया को कम करते है। साथ ही इनसे लेख को समझने में भी परेशानी होती है। इस प्रकार की शब्दावली के प्रयोग से पाठक चकित हो सकते हैं। किन्तु सच्चाई यह है कि ऐसी शब्दावली प्राय : पाठकों को भ्रमित करती है। अच्छे लेखन की यह आवश्यकता है कि कठिन, जटिल व भारी–भरकम शब्दों के बदले सरल शब्दों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
- **सरल वाक्य संरचना का प्रयोग** : संरचना के संदर्भ में वाक्यों के कई प्रकार हैं– सरल, संयुक्त व मिश्रित। इन तीनों प्रकार के वाक्यों में संयुक्त व मिश्रित वाक्य लंबे व जटिल संरचना के होते हैं। इनकी तुलना में सरल वाक्य संक्षिप्त होते हैं व लिखने एवं समझने में आसान होते हैं। लंबे व जटिल वाक्य लेख की पठनीयता में कमी लाते हैं।
- **शब्द बहुलता से बचना** : कई शब्द कलेवर व कठिनता के संदर्भ में भारी–भरकम होते हैं। कुछ लेखक अपना शब्द–पांडित्य दिखाने हेतु इनका प्रयोग करते हैं। कुछ अन्य लेखक अपने लेखों में शब्द बहुलता को प्राथमिकता देते हैं। किन्तु हमें लिखते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि शब्द अकारण अपने प्रति ध्यान आकर्षण न करें तथा विषय–वस्तु की महिमा व गरिमा को खंडित न करें। इसलिए प्रयास किया जाना चाहिए कि सरल शब्दों के साथ–साथ कम से कम शब्दों का प्रयोग किया जाए।
- **तकनीकी व कठिन शब्दों से बचना** : सभी व्यावसायिक क्षेत्रों की निश्चित तकनीकी शब्दावली है। उस क्षेत्र से संबंध न रखने वाले व्यक्ति प्रायः ऐसे शब्दों को समझने में असहजता महसूस करते हैं। इसलिए लेखन में इस प्रकार के तकनीकी शब्दों का कम से कम प्रयोग होना चाहिए। यदि ऐसे शब्दों का प्रयोग किया भी जाए तो उनकी टीका भी शामिल करने की आवश्यकता होती है।
- **विशेषणों का कम प्रयोग** : विशेषण या क्रियाविशेषण प्रायः लेख को भारी–भरकम बना देते हैं। ये संदेश की महत्ता को कम कर देते हैं। विशेषण या क्रियाविशेषण के बदले संज्ञा व क्रियाओं का अधिक प्रयोग किया जाना चाहिए। वर्णन को स्पष्ट, रोचक, चित्रमय व क्रियाशील बनाने के लिए विशेषण व क्रियाविशेषणों के स्थान पर एकाधिक सरल वाक्यों का प्रयोग करना चाहिए। विशेषण आदि के प्रयोग लंबे व जटिल बन जाते हैं। साथ ही कई बार इनके प्रयोग से विषय व संदेश के अर्थ को अलग व अनावश्यक दिशा मिल सकती है। सरल संज्ञा व क्रियाएं विषय व विचारों को अर्थपूर्ण बनाते हैं।

टिप्पणी

- **लेख में प्रवाहशीलता निहित करना** : लेखों में विषय–वस्तु व विचार आदि की क्रमबद्धता के कारण सरलता व स्पष्टता के साथ–साथ प्रवाहशीलता भी मिलती है। विषय या विचारों को अनावश्यक तरीके से या अचानक प्रस्तुत करने से लेख की तारतम्यता या लयबद्धता में कमी आती है। ऐसे में कुछ स्थितियों में वाक्य व लेख की संरचना का संतुलन बिगड़ने का भी डर रहता है।
- **वस्तुनिष्ठ होना** : कहा जाता है कि संक्षिप्तता से लेखन में पठनीयता व रोचकता संभव होती है। जैसे बातूनी व्यक्तियों को हम बहुत ज्यादा पसंद नहीं करते, ठीक वैसे ही अच्छे लेखक भारी–भरकम शब्द या संरचना आदि के प्रयोग से बचते हैं। संक्षिप्तता व वस्तुनिष्ठता लेख में सटीकता व स्पष्टता लाने में मदद करते हैं।

प्रभावी लेखन के लिए हमें निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना होगा–

- **सुलेख** : प्रभावी लेखन के लिए अच्छे और साफ–सुथरे शब्दों का बहुत महत्व है। पूर्ण एवं सुंदर शब्द लिखना, स्वच्छ लेखन, पृष्ठ पर लिखित अंश का स्थान अर्थात ऊपर, नीचे एवं बाईं ओर हाशिया छोड़ने का ध्यान, अक्षर–अक्षर, शब्द–शब्द और वाक्य–वाक्य के बीच दूरी का ध्यान रखना चाहिए।
- **भाषा संबंधी विविध अभ्यास** : शुद्ध एवं परिनिष्ठित भाषा के प्रयोग पर ही लिखित रचना की प्रभावपूर्णता निर्भर है, अतः अधिकाधिक भाषा संबंधी अभ्यास छात्रों द्वारा होने चाहिए। इन अभ्यासों के लिए एक योजना बना लेनी चाहिए। कक्षा में लिखित अभ्यास के लिए मौखिक कार्य की भी सहायता लेना अनिवार्य है। श्यामपट्ट का अधिकाधिक प्रयोग वांछित है।

  भाषा संबंधी अभ्यासों में शामिल हैं–

  (1) **वर्तनी संबंधी अभ्यास** : कई बार माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर भी वर्तनी संबंधी अशुद्धियां होती हैं। इसलिए लेखन के लिए वर्तनी की शुद्धता पर बहुत ध्यान देना चाहिए। इसके निवारण के लिए विभिन्न प्रकार के अभ्यास करवाए जा सकते हैं।

  (2) **शब्द प्रयोग संबंधी अभ्यास** : भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति के साधन शब्द ही हैं। लेखन की उत्कृष्टता बहुत कुछ शब्दों के ही ज्ञान, प्रयोग तथा योजना पर निर्भर है। शब्द प्रयोग संबंधी अभ्यासों में शब्दों का वाक्य में प्रयोग, रिक्त स्थानों की पूर्ति, समानार्थी, अनेकार्थी आदि शब्दों का अभ्यास, लिंग, वचन एवं विभक्ति संबंधी अभ्यास, विशेषण, सर्वनाम एवं क्रिया–विशेषणों का प्रयोग, उपसर्ग, प्रत्यय, संधि एवं समास संबंधी शब्द रचना के विविध आयाम शामिल हैं।

  (3) **वाक्य रचना संबंधी अभ्यास** : भावभिव्यक्ति की दृष्टि से वाक्य रचना के अभ्यासों का विशेष महत्व है। ये अभ्यास इस प्रकार के हो सकते हैं– ज्ञात विषयों पर प्रश्नों के उत्तर लिखवाना, अव्यवस्थित पदक्रम देकर उन्हें व्यवस्थित क्रम में करवाना, वाक्यों में रिक्तपूर्ति, वाक्य के विविध रूपों जैसे स्वीकारात्मक, नकारात्मक, प्रश्नवाचक आदि संबंधी अभ्यास, काल परिवर्तन, विभक्तियों का उचित प्रयोग, संयुक्त एवं मिश्र वाक्यों की रचना आदि।

टिप्पणी

(4) **अनुच्छेद रचना** : भावों एवं विचारों को सुव्यवस्थित एवं सुसम्बद्ध रूप से प्रस्तुत करने के लिए अनेक वाक्यों को क्रम से आयोजित करना पड़ता है। ऐसे वाक्यों के समूह को अनुच्छेद कहते हैं। प्रत्येक अनुच्छेद में एक मुख्य विचार रहता है। यदि किसी विषय का वर्णन लंबा होता है तो उसे अनेक अनुच्छेदों में बांटा जाता है और उन्हें क्रमबद्ध रूप से, पूर्व संबंध का उचित ध्यान रखते हुए प्रस्तुत किया जाता है। अपने विचारों को सुव्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने के लिए विद्यार्थियों को अनुच्छेद का ज्ञान अवश्य करवाना चाहिए। अनुच्छेद से संबंधित अभ्यास इस प्रकार से हो सकते हैं– कई अनुच्छेदों के मिले हुए रूप को पृथक अनुच्छेदों में विभक्त करवाना, अनुच्छेदों के शीर्षक लिखवाना, शीर्षक देकर उन पर आठ–दस पंक्तियों का एक अनुच्छेद लिखवाना, किसी अनुच्छेद का कभी प्रारम्भ कभी मध्य एवं कभी अंत देकर अनुच्छेद पूरा करवाना आदि।

(5) **विराम चिह्न** : लेखन में विराम चिह्नों का महत्वपूर्ण स्थान है। बिना विराम चिह्नों के अर्थ–व्यंजकता स्पष्ट नहीं हो सकती। इसके अभ्यास इस प्रकार से हो सकते हैं– बिना विराम चिह्न के कुछ वाक्य विद्यार्थियों को देना और उनसे उपयुक्त विराम चिह्न लगवाना, किसी अनुच्छेद में अशुद्ध विराम चिह्नों के प्रयोग को शुद्ध कराना, अनुचित स्थानों पर विराम चिह्न लगाकर उनको सही स्थान पर लगाने को कहना आदि।

2.3.6 व्यक्तिगत एवं सामूहिक रिपोर्ट लेखन

विद्यालयी शिक्षा की समाप्ति के बाद भी व्यावहारिक जगत में विद्यार्थियों से अपनी संस्था के कार्यों का विवरण प्रस्तुत करने के लिए रिपोर्ट लिखने की अथवा किसी मीटिंग के कार्यवृत लेखन की अपेक्षा की जा सकती है। जब कोई एक व्यक्ति रिपोर्ट लिखता है तो व्यक्तिगत रिपोर्ट कहलाती है और जब एक समूह जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति मिलकर रिपोर्ट लिखते हैं तो वह सामूहिक रिपोर्ट लेखन होता है।

रिपोर्ट बनाने में निम्नलिखित तथ्यों के उल्लेख/विवरण की अपेक्षा होती है–

- समारोह, अधिवेशन अथवा किसी अन्य कार्यक्रम का नामोल्लेख, तिथि और समय।
- कार्यक्रम में आयोजकों, कार्यक्रम के अध्यक्ष, विशिष्ट अतिथि आदि के नाम।
- कार्यक्रम के रोचक एवं महत्वपूर्ण विवरण।
- अध्यक्षीय भाषण।
- धन्यवाद ज्ञापन आदि।

रिपोर्ट प्रस्तुति की इस विधि में समारोह अथवा प्रतियोगिता के स्वरूप के आधार पर यथोचित परिवर्तन किया जा सकता है। रिपोर्ट लेखन की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

1. रिपोर्ट में किसी घटना या प्रसंग की मुख्य–मुख्य बातें लिखी जाती हैं।
2. रिपोर्ट में बातें एक क्रम में लिखी जाती हैं। सारी बातें सिलसिलेवार लिखी होती हैं।
3. रिपोर्ट संक्षेप में लिखी जाती है। बातें विस्तार में नहीं, संक्षेप में लिखी जाती हैं।

टिप्पणी

4. रिपोर्ट ऐसी हो, जिसकी सारी बातें सरल और स्पष्ट हों। उनको समझने में सिरदर्द न हो। उनका एक ही अर्थ और निष्कर्ष हो। स्पष्टता एक अच्छी रिपोर्ट की बड़ी विशेषता होती है।
5. रिपोर्ट में सच्ची बातों का विवरण होता है। इसमें पक्षपात, कल्पना और भावना के लिए स्थान नहीं है।
6. रिपोर्ट में लेखक या प्रतिवेदक की प्रतिक्रिया या धारणा व्यक्त नहीं की जाती। उसमें ऐसी कोई बात न कही जाए, जिससे भम्र पैदा हो।
7. रिपोर्ट की भाषा साहित्यिक नहीं होती। यह सरल और रोचक होती है। रिपोर्ट लिखने वाला जिस भाव से शब्दों का प्रयोग करता है उन शब्दों से वही भाव स्पष्ट होना चाहिए।
8. रिपोर्ट किसी घटना या विषय की साफ और सजीव तस्वीर सुनने या पढ़नेवाले के मन पर खींच देती है। यदि रिपोर्ट बहुत बड़ी है तो उसका सारांश अवश्य देना चाहिए।
9. एक अच्छी रिपोर्ट को मात्र सुनी सुनाई बातों के आधार पर तैयार नहीं किया जा सकता। इसके लिए प्रामाणिक तथ्यों का संग्रह कर रिपोर्ट में प्रस्तुत करना होता है।
10. रिपोर्ट में घटना समस्या आदि का तटस्थ एवं निष्पक्ष विवेचन होना चाहिए। इसमें व्यक्तिगत आक्षेपों लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए।
11. रिपोर्ट को विस्तृत होने की स्थिति में अनुच्छेदों में विभाजित किया जाना चाहिए।
12. प्रत्येक रिपोर्ट में उपयुक्त शीर्षक अवश्य होना चाहिए जिससे वह स्पष्ट हो जाए।

अपनी प्रगति जांचिए

4. जिन प्रश्नों के जवाब लंबे होते हैं और जिनको लिखने में समय लगता है, वे कहलाते हैं–
   (क) निबंधात्मक प्रश्न (ख) लघुत्तरात्मक प्रश्न
   (ग) वैकल्पिक प्रश्न (घ) वस्तुनिष्ठ प्रश्न
5. किसी भी विषय में उत्तर लेखन की प्रक्रिया को कितने चरणों में विभाजित किया जा सकता है?
   (क) दो (ख) तीन
   (ग) चार (घ) पांच
6. किस लेखन के माध्यम से लेखक अपने मन के विषयों को प्रकाशित करता है?
   (क) वर्णनात्मक लेखन (ख) सर्जनात्मक लेखन
   (ग) नियमबद्ध लेखन (घ) मुक्त लेखन
7. जब कोई व्यक्ति रिपोर्ट लिखता है तो वह कौन–सी रिपोर्ट कहलाती है?
   (क) व्यक्तिगत रिपोर्ट (ख) सामूहिक रिपोर्ट
   (ग) क व ख दोनों (घ) इनमें से कोई नहीं

2.4 भाषा कौशलों का मूल्यांकन

टिप्पणी

बच्चों में चीजों को सीखने एवं समझने की स्वाभाविक इच्छा होती है। उनमें बचपन से ही सीखने के प्रति जिज्ञासा होती है जो विद्यालय में प्रवेश करने के बाद धीरे–धीरे तिरोहित होने लगती है। विद्यालयी परिप्रेक्ष्य में 'पढ़ना' सबसे महत्वपूर्ण क्रिया है। विद्यालय के समस्त विषयों की ज्ञान प्राप्ति का माध्यम पढ़ना ही है। पढ़ने के माध्यम से विद्यार्थी ज्ञान के नए–नए आयामों से परिचित होता है। सुनकर समझने, बोलने एवं लिखने के कौशलों का विकास भी काफी हद तक पढ़ने की योग्यता पर निर्भर करता है। किसी भी विषय पर प्रभावी रूप से बोलने एवं लिखने के लिए पहले पढ़ना पड़ता है। आमतौर पर स्कूल में पढ़ना सिखाने की शुरुआत वर्णमाला रटवाकर नीरस तरीके से करवाई जाती है। पढ़ने–पढ़ाने की इस प्रक्रिया में कई बार शिक्षक भी नहीं समझ पाते कि पढ़ना क्या है? सुनना क्या है? विद्यार्थियों में पढ़ने के प्रति लगन और रुचि को कैसे विकसित किया जाए? पढ़ना वास्तव में क्या है? पढ़ने के दौरान समझ कैसे विकसित की जाए?

2.4.1 समझ की प्रकृति

समझ में शब्दों के साथ अर्थों का सही जुड़ाव, संदर्भ द्वारा सुझाए गए सही अर्थ का चयन शामिल है। पिछले सालों में बनाई गई शिक्षा नीतियां, शिक्षा में समझ को विकसित करने पर बल देती हैं। इससे पहले समझ बनाने को लेकर किसी प्रकार की कोई बात नहीं कही गई थी। भारतीय भाषाओं का शिक्षण का राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र (2005) में भी भाषा शिक्षण का एक मुख्य उद्देश्य समझने की दक्षता प्राप्त करना है, "एक शिक्षार्थी को जो कुछ कहा गया है उसे समझने के लिए उसमें वक्ता की ओर से आने वाले विभिन्न गैर शाब्दिक संकेतों को ग्रहण करने की क्षमता होनी चाहिए। उसमें गैर शाब्दिक संकेतों के द्वारा सुनकर और समझकर संबंध जोड़ने और अनुमान लगाने की कुशलता होनी चाहिए।"

समझ और भाषा

समझ और भाषा का रिश्ता काफी गहरा है। हमारी समझ अपनी भाषा में ही विकसित होती है। भाषा के बिना समझ की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती है। हालांकि विद्यालयों में भाषा को एक टूल की तरह प्रयोग किया जाता है परंतु भाषा की भूमिका इससे कहीं अधिक है। हम वर्तमान में क्या कर रहे हैं और भविष्य में क्या करना है इसके बारे में भाषा हमें सचेत करती है। अपने विषय में विवेकपूर्ण ढंग से निर्णय करने का काम भाषा ही करती है। भाषा से ही हम सार्थक अवधारणाएं बनाते हैं, संबंधों का संजाल बनाते हैं, अपने अनुभवों को सार्थकता प्रदान करते हैं, अपने इरादों को देख पाते हैं और दूसरों के इरादों को समझ पाते हैं। यही कारण है कि इंसान को गढ़ने की आवश्यक शर्त के रूप में भाषा समझ का माध्यम बनती है।

बच्चों की अपनी भाषा की संरचना उनके दिमाग में पहले से ही है। जब वह किसी भी चीज के बारे में अवधारणा विकसित करते हैं तो वह इसी भाषा के कारण कर पाते हैं। जब भी वह कोई नई चीज देखता है तो उसका संबंध पहले के अनुभवों से जोड़ता है और नई विशेषताएं पता करता है तब जाकर उस चीज की अवधारणा बनती है। इस संदर्भ में कुछ और चीजें जो समझने की जरूरत हैं–

टिप्पणी

- विद्यालय आने से पहले ही बच्चे भाषा से जुड़े होते हैं।
- बच्चे न केवल भाषा को सीखते हैं बल्कि अपने दिमाग में भी रचते हैं।
- बच्चे समझ बनाने की क्षमता रखते हैं और स्वयं समझ बनाते भी हैं।
- उनके आस–पास कई भाषाओं का होना एक प्रकार का संसाधन है।
- बच्चों के पास जटिल भाषा भी हो सकती है और उनके पास भाषा का ऐसा व्याकरण होता है जिसमें वह सब कुछ अभिव्यक्त कर सकता है। यदि उनके ऊपर दूसरी भाषा लादी जाती है तो उसकी समझ सशक्त नहीं होगी।

2.4.2 सुनने की समझ

सुनना भाषा के चार प्रमुख कौशलों में से एक है। यह मनुष्य जीवन के लिए एक अनिवार्य क्रिया है जिसका विकास बच्चे के जन्म से ही होने लगता है। कुछ ग्रंथों में इसका विकास जन्म से पूर्व का भी माना गया है। महाभारत के अनुसार अभिमन्यु ने अपनी मां के गर्भ में होते हुए भी चक्रव्यूह भंग करने की विधि सुन ली थी। एक शोधकर्ता के अनुसार मनुष्य अपनी नित्यचर्चा में संप्रेषण के लिए व्यतीत किए जाने वाले समय का 45 प्रतिशत सुनने, 30 प्रतिशत बोलने तथा शेष 25 प्रतिशत संयुक्त रूप से पठन एवं लेखन में लगाता है। एक अच्छा श्रोता सुनने के साथ–साथ प्रस्तुत सामग्री के मूल भाव को समझते हुए, उसमें दिए गए तथ्यों या तर्कों के आशय को समझते हुए अपने पूर्वानुभव के संदर्भ में सुनी गई वस्तु का बोधन, विवेचन एवं विश्लेषण करता है।

सुनने की समझ के संदर्भ में इसके दो प्रकार हो सकते हैं–

- गहनता से सुनना
- विस्तृत रूप से सुनना

गहनता से सुनना : गहनता से सुनने के लिए दो प्रकार के अभ्यास कार्यों का आयोजन किया जाता है–

(1) ब्योरेवार अर्थग्रहण पर केन्द्रित अभ्यास–कार्य– इसके लिए हम निम्नलिखित शिक्षण–युक्तियों का प्रयोग कर सकते हैं :
   - गहनता से सुनने के बोध का परीक्षण– तथ्यात्मक, निष्कर्षात्मक तथा व्याख्यात्मक प्रश्नों द्वारा।
   - सारांश के लिए प्रस्तुत करना– इसके लिए विद्यार्थियों को कोई लेख पढ़कर सुनाना और उनसे प्रस्तुत सामग्री का सारांश बताने के लिए कहना।
   - तर्कप्रधान समस्या प्रस्तुत करना : ऐसी समस्या प्रस्तुत करना जिनका उत्तर तार्किक विवेचन की अपेक्षा करता हो।

(2) लंबी बातचीत में दी गई श्रुत सामग्री में से मूल बिंदु को ग्रहण करना– परिसंवाद, पेनल–चर्चा अथवा किसी विषय पर चल रही लंबी बातचीत के मूल बिंदु या सूत्र को पकड़ पाना।

विस्तृत रूप से सुनना : वर्तमान युग संचार–माध्यमों का युग है। वर्तमान में रेडियो, दूरदर्शन पर समाचार, वार्ताओं, नाटकों आदि को सुनते–देखते हुए हमें अनेक ऐसे शब्द

सुनने को मिलते हैं जिनका अर्थ हमें ज्ञात नहीं होता। हम उनका अर्थ देखने के लिए शब्दकोश का प्रयोग नहीं करते बल्कि संदर्भ के अनुसार उसके अर्थ का अंदाजा लगा लेते हैं। हो सकता है कि हमारा यह अनुमान सही न हो, परंतु हमारा अनुमान हमें काफी हद तक सही अर्थ के करीब ले आता है। इससे हमें चीजों को समझने में कोई समस्या नहीं होती।

टिप्पणी

परंतु भावी जीवन में इस कुशलता के प्रयोग की क्षमता विकसित करने के लिए आवश्यक है कि शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया के दौरान विद्यार्थी के समक्ष कुछ ऐसी श्रव्य–सामग्री प्रस्तुत की जाए जिसके माध्यम से उसे इस दक्षता के समुचित विकास के अवसर मिल सकें। इस प्रकार के अवसर कक्षा में समाचारों तथा पत्र–पत्रिकाओं से ऐसी सामग्री की मौखिक प्रस्तुति से मिल सकते हैं जिसमें रोचकता के साथ कुछ अपरिचित शब्दावली का समावेश भी हो। इसके अतिरिक्त सुनने की क्षमता के विकास के लिए कुछ अन्य क्रियाकलाप भी उपयोगी हो सकते हैं–

- विद्यार्थियों के समक्ष ऐसी सामग्री की मौखिक प्रस्तुति जिसमें से कुछ शब्द छूटे हुए हों। सामग्री को सुनने के पश्चात विद्यार्थियों को छूटे हुए शब्द बताने के लिए कहा जा सकता है।
- इस क्रियाकलाप में थोड़ा परिवर्तन करके इसका कठिनाई स्तर बढ़ाया जा सकता है। इस दृष्टि से विद्यार्थियों को एक व्यक्ति के संवाद का एक अंश सुनाकर उनसे दूसरे व्यक्ति के द्वारा कहे गए संवाद को बताने के लिए कहा जा सकता है।
- विद्यार्थियों को कोई ऐसा वार्तालाप सुनाया जाए, जिसका संबंध दुकानदार–ग्राहक के बीच होने वाली बातचीत से हो, अथवा रेलवे स्टेशन के पूछताछ पटल पर किसी यात्री द्वारा स्थान विशेष को जाने वाली गाड़ियों की जानकारी से हो अथवा किसी राही द्वारा अन्य व्यक्ति से अनजाने मार्ग के बारे में मार्गदर्शन प्राप्त करने से हो या चिकित्सक–रोगी के बीच होने वाले वार्तालाप से हो। फिर उस सामग्री के लिखित रूप को कथनों या वाक्यों में लिखकर, कुछ अंशों को काट दें और विद्यार्थियों से उन काटे गए अंशों का सही संयोजन करने के लिए कहें।

2.4.3 पढ़ने की समझ

पढ़ने का क्या अर्थ है? हम कब किसी बच्चे के लिए कह सकते हैं कि वह सही मायनों में पढ़ रहा/रही हैं? इसको समझने के लिए हमको पहले 'पढ़ने' के अर्थ को गहराई से समझना होगा। विभिन्न भाषाविदों ने पढ़ने के संदर्भ में अपने मत इस प्रकार से प्रस्तुत किए हैं–

- सही मायनों में पढ़ने का अर्थ है– लिखे हुए से अर्थ गढ़ना।
- पढ़ने से अभिप्राय है लिखे हुए से धारणाओं को गढ़ना और साथ ही विचारों को आपस में जोड़ पाना और उन्हें अपनी स्मृति में रखना।
- पढ़ना, केवल वर्णमाला की पहचान, शब्द तथा वाक्य को बोल भर पाना नहीं है, बल्कि इसके आगे बहुत कुछ है। अर्थात लिखे हुए के अर्थ को समझकर, उसके बारे में अपना नजरिया बनाना या फिर अपनी निजी समझ विकसित करना है।

टिप्पणी

- शब्द के हिज्जे करके बोलना 'पढ़ना' नहीं है। पढ़ने से अभिप्राय है, लिखे हुए के साथ संवाद करना, अपने अनुभवों एवं सैद्धांतिक संरचना के सांचे में लिखे हुए को ढालना।
- पढ़ना एक एकाकी प्रक्रिया नहीं है, इसमें बहुत सी चीजें शामिल हैं जैसे– अक्षरों की आकृतियां और उनसे जुड़ी ध्वनियां, वाक्य–विन्यास, शब्दों और वाक्यों के अर्थ और साथ ही अनुमान लगाने का कौशल।
- पढ़ने में लिखी हुई जानकारियों या संकेतों की बानगी ग्रहण करना महत्वपूर्ण है।

पढ़ने की इस समझ को और मजबूत करने के लिए एक उदाहरण के माध्यम से इसको समझने का प्रयास करते हैं।

उदाहरण–1 : शरण्या प्रथम कक्षा की छात्रा है। वह किसी भी अक्षर को पढ़ते हुए रटी हुई वर्णमाला के अक्षरों को सामने लाती है और फिर अक्षर को जिस शब्द से जोड़कर रटवाया गया था, उसी अक्षर और शब्द को बोलकर कोई नया शब्द पढ़ पाती है। जैसे बरसात में ब की पहचान के लिए बस का ब, र की पहचान के लिए रथ का र, स की पहचान के लिए स से सरौता फिर आ का डंडा और त के लिए त से तरबूज का त। इस प्रकार वह बरसात शब्द को पहचान पाती है। अभी वह केवल शब्द की ही पहचान बना पाई है। वह पढ़ तो पा रही है परंतु इस शब्द से जुडने का कोई भी भाव यहां नजर नहीं आता। तो क्या शरण्या पढ़ना सीख गई है?

उदाहरण–2 : राहुल पांचवीं कक्षा का विद्यार्थी है। उसके सामने उसकी पाठ्यपुस्तक के किसी भी पाठ को पढ़ने को कहा जाए तो वह फटाफट उस पाठ को खोलकर फर्राटेदार अंदाज में उस पाठ को पढ़ जाएगा। परंतु यदि उससे पाठ्यपुस्तक के अलावा कोई भी पाठ्यसामग्री पढ़ने के लिए दी जाए, तो पढ़ना तो दूर की बात है वह अक्षरों को भी नहीं पहचान पाता। क्या उसके इस कौशल को हम पढ़ने का कौशल मान सकते हैं?

उदाहरण–3 : तीसरी कक्षा की पाठ्यपुस्तक में एक चित्र के साथ निम्न वाक्य दिया हुआ है– 'वह दौड़कर बस में चढ़ गया।' साथ में दिए गए चित्र में एक छोटा सा बच्चा भागती हुई मुद्रा में बस में चढ़ने की कोशिश कर रहा था। अब बच्चों से ये वाक्य पढ़ने को कहा गया। कई बच्चों ने इसको ऐसे पढ़ा– 'व ह ब स म च ढ़ ग या' कई बच्चों ने ऐसे पढ़ा– 'बच्चा भागकर बस में चढ़ गया।'

उदाहरण–4 : चौथी कक्षा में पढ़ने वाली ओजस्वी लिखे हुए को पढ़ लेती है। वह पढ़े जा रहे अक्षरों, शब्दों और मात्राओं की पहचान भी कर लेती है। पर पढ़े गए से अर्थ वह नहीं निकाल पाती। यही कारण है कि कहानी पढ़ने की उत्सुकता होने पर भी वह उसको दूसरों से पढ़कर सुनाने को कहती है।

अब आप पढ़ने के संदर्भ में दिए गए विचार और इन उदाहरणों को देखें। इन उदाहरणों में दिए गए सभी बच्चों में से कोई भी ठीक से पढ़ना नहीं जानता। दरअसल जब हम शब्दों के अलग–अलग हिज्जे करते हैं अर्थात टुकड़े–टुकड़े में किसी शब्द या वाक्य को पढ़ते हैं तो हमारा मस्तिष्क लिखी हुई सामग्री की सम्पूर्ण मात्रा पर ध्यान न देकर अलग–अलग शब्द एवं उसके टुकड़ों पर ध्यान देता है। इससे मस्तिष्क की क्षमता पर बेवजह बोझ पड़ता है और अर्थ ग्रहण करने की क्षमता कहीं खो जाती है।

एक वाक्य के सारे शब्दों पर फिर शब्दों के अलग–अलग अक्षरों पर ध्यान देना अर्थ से कहीं दूर ले जाने की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में बच्चों को पढ़ने में आनंद आना तो दूर की बात है, 'पढ़ना' भी ठीक से नहीं आ पाता है।

बच्चों को सही तरीके से पढ़ना सिखाने के लिए या पढ़ने की क्षमता विकसित करने के लिए यह आवश्यक है कि बच्चों को 'डीकोडिंग' से दूर रखा जाए। 'डीकोडिंग' का अर्थ है शब्द को टुकड़ों में बांटकर पहचान करना फिर उसे बोल पाना या पढ़ पाना। हाल के वर्षों में हुए व्यापक शोध बताते हैं कि पढ़ना सिर्फ शब्दों में छिपे अर्थ को खोलने (डीकोडिंग) तक सीमित नहीं है। पढ़ने की प्रक्रिया में ग्राफोफोनिक (अक्षर ध्वनि) के साथ सीमेंटिक (अर्थ अभिप्राय) तथा सिंटेक्टिक (शब्दक्रम) के संकेत शब्द शामिल होते हैं। (सिन्हा, 2008) हालांकि पढ़ना सिखाने के संदर्भ में यही विधि सबसे अधिक लोकप्रिय है और यही कारण है कि चौथी एवं पांचवीं कक्षा तक के बच्चे भी ठीक से पढ़ना नहीं जानते। पारंपरिक विधियों में पढ़ना सिखाने के लिए हर शब्द को छोटी इकाइयों में तोड़कर सिखाने का प्रयास किया जाता है जिससे शब्दों का अर्थ ग्रहण करने की मस्तिष्क की क्षमता पर बहुत अधिक बोझ पड़ता है। आपको लग रहा होगा कि पढ़ना अवश्य ही कोई जटिल प्रक्रिया है। परंतु ऐसा नहीं है। पढ़ना सिखाने की कोई एक अचूक विधि नहीं हो सकती। और न ही पढ़ना सिखाने के लिए एक अकेली विधि पर ही निर्भर रहा जा सकता है क्योंकि हर विधि की अपनी सीमाएं होती हैं। ऐसे में शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। एक शिक्षक ही यह तय कर सकता है कि उसके विद्यार्थियों के लिए कौन सी विधि पढ़ना सिखाने के लिए सबसे उपयुक्त रहेगी। आइए पढ़ना सिखाने में शिक्षक की क्या भूमिका है यह देखते हैं।

टिप्पणी

2.4.4 पढ़ना सिखाने में शिक्षक की भूमिका

पढ़ना सिखाने में शिक्षक की भूमिका को इस प्रकार समझा जा सकता है–

- **शिक्षक का आत्मीय व्यवहार** : किसी शिक्षक का बच्चे से प्यार, उसके प्रति विश्वास तथा आत्मीय व्यवहार द्वारा ही बच्चे में पढ़ने के कौशल को सही ढंग से विकसित किया जा सकता है। बच्चे के साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार करने, उस पर भरोसा करने के साथ शिक्षक को उससे इस प्रकार आत्मीयता के साथ पेश आना चाहिए कि बच्चे को लगे कि विद्यालय में भी कोई उसका अपना है। प्रत्येक विद्यार्थी को ऐसा महसूस होना चाहिए कि शिक्षक उस पर ध्यान दे रहे हैं।

  ऐसा बहुत बार होता है कि यदि कोई बच्चा ठीक से पढ़ना नहीं सीख पाता तो शिक्षक भी यह मान लेते हैं कि इस बच्चे पर ध्यान देना समय की बर्बादी है, यह कभी नहीं सीख सकता। अगर शिक्षक ही ऐसी सोच बना लेते हैं तो बच्चा भी हतोत्साहित हो जाता है और उसका आत्मविश्वास गिरने लगता है। गिरते हुए आत्मविश्वास के साथ बच्चा कैसे कुछ सीख सकता है? ऐसे में शिक्षक को संवेदनशीलता के साथ बच्चे को पढ़ने की ओर ले जाना होता है।

- **शिक्षक में स्वयं पढ़ने की समझ** : एक संवेदनशील शिक्षक ही समझ के साथ पढ़ने की कला को समझ सकता है। एक छोटा बच्चा जब कक्षा में प्रवेश करता है तो उसके पास अपने अनुभवों का भंडार होता है। शिक्षक को इन अनुभवों का प्रयोग संसाधन की तरह करते हुए इनको व्यर्थ नहीं होने नहीं देना

टिप्पणी

चाहिए। बच्चे को पढ़ने की आजादी दें, पढ़ते समय अपने अनुभवों का इस्तेमाल करने दें, अनुमान लगाने दें, ताकि बच्चे के लिए पढ़ने की प्रक्रिया सरल हो जाए और उनमें आत्मविश्वास आ सके।

इसके लिए शिक्षक का स्वयं यह जानना आवश्यक है कि पढ़ना आखिर है क्या? बच्चा पढ़ना कैसे सीखता है? पढ़ना सिखाने में सबसे बड़ी बाधा तब आती है जब कक्षा में पुस्तक पढ़ते हुए बच्चे से जरा गलती होने पर उसको डांट दिया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि बच्चा पढ़ने से डरने लगता है। ऐसे में शिक्षक को यह समझने की आवश्यकता है कि बच्चा पढ़ने का अभ्यास करके ही पढ़ना सीखता है। और यह बिना गलतियों के संभव नहीं है। जो भी लोग गलत पढ़ने को बेवकूफी समझते हैं वे दरअसल पढ़ने की बुनियादी प्रवृत्ति को नहीं समझते हैं। शिक्षक को यह हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि निर्देश पद्धति जो पढ़ने में बाधा पहुंचाती है, वह पढ़ना सीखने में भी जरूर बाधा पहुंचाएगी। पढ़ना सीखना आसान बनाने का एकमात्र तरीका पढ़ने को आसान बनाना है। पढ़ना सीखना आसान बनाने का मतलब है कि जब बच्चे को चाहिए तब संकेत मिले, जब जरूरी हो तब टिप्पणी मिले, जब आवश्यक हो तब शाबाशी मिले।

पढ़ने की प्रक्रिया में अनुमान लगाने की भूमिका भी बेहद महत्वपूर्ण है। बच्चों को पढ़ना सीखते हुए यदि अनुमान लगाने के उचित अवसर दिए जाएं तो वे पढ़ते हुए पूरी तरह से सक्रिय हो जाते हैं। जैसे यदि वे चित्रों को देखकर अनुमान लगाकर कुछ पढ़ते हैं तो उनको भी खुशी मिलती है कि हां हम पढ़ सकते हैं। इससे उनके आत्मविश्वास में वृद्धि होती है। आत्मविश्वास से परिपूर्ण बच्चे में आगे बढ़ने की ललक होती है और इस प्रकार यह सिलसिला चलता रहता है। बच्चे में स्वयं पढ़ना सीखने की ललक जगाना बेहद महत्वपूर्ण है। परंतु हमारी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में प्रारम्भिक कक्षाओं में पूरा ध्यान वर्णों की आकृति, ध्वनि उच्चारण सिखाने में ही लगाया जाता है। बिना सार्थक संदर्भ के चीजों को रटना बच्चों के लिए बेहद नीरस प्रतीत होता है। परंतु यह माना जाता है कि बच्चे बड़े होकर अक्षरों एवं ध्वनियों में संबंध स्थापित करते हुए धीरे–धीरे पढ़ना सीख ही जाएंगे। इससे बच्चे थोड़ा बहुत पढ़ना सीख जाते हैं परंतु स्थायी पठन कौशल का विकास नहीं हो पाता। इसके लिए बच्चे को अनुमान लगाते हुए पढ़ने के मौके प्रारम्भिक कक्षाओं में ही दिए जाने की जरूरत है। इसके अलावा दूसरी समस्या पढ़ने के कौशल के विकास के लिए शिक्षकों का केवल पाठ्यपुस्तकों पर निर्भर होना है। ऐसे शिक्षकों को अपने दृष्टिकोण में बदलाव लाने की आवश्यकता है। पाठ्यपुस्तकें पढ़ना सिखाने का एक साधन है एकमात्र साधन नहीं। पाठ्यपुस्तक के अलावा प्रचुर मात्रा में उपलब्ध बालसाहित्य का प्रयोग भी किया जा सकता है। इनमें भी मुख्यतः कहानियों का प्रयोग कक्षा में किया जा सकता है क्योंकि कहानियां बच्चों को बेहद प्रिय होती हैं। ऐसी पुस्तकों का चुनाव करते हुए शिक्षक को यह ध्यान रखना चाहिए कि कहानी बच्चों के परिवेश तथा रोजमर्रा के अनुभवों से जुड़ी हुई हो। कहानी की भाषा बच्चे की अपनी भाषा से मिलती–जुलती हो ताकि वे कहानी से खुद को जुड़ा हुआ महसूस कर सकें।

एक शिक्षक को यह भी ध्यान में रखने की जरूरत है कि छोटा बच्चा जब कोई पुस्तक पढ़ता है तो कई बार किसी शब्द को न पढ़ पाने की स्थिति में वह उसके

टिप्पणी

स्थान पर उस शब्द के अर्थ से मिलता–जुलता कोई और शब्द गढ़ लेता है और वाक्य का अर्थ निकाल लेता है। ऐसे में शिक्षक कई बार बच्चे को टोक देते हैं। परिणाम यह होता है कि स्वयं शब्द रचकर वाक्य का अर्थ समझकर, कहानी का आनंद लेता हुआ बच्चा सहम जाता है। उसका आगे पढ़ने का उत्साह कम हो जाता है। ऐसे में एक शिक्षक को चाहिए कि वह बच्चे पर भरोसा रखे। उसे स्वयं शब्द रचकर अर्थ समझने का आनंद लेने दें।

- **शिक्षक पूर्वाग्रहों से दूर रहे** : ऐसा बहुत बार देखा गया है कि शिक्षक के नजरिए में तमाम मूल्य, विश्वास और पूर्वाग्रह छिपे रहते हैं जिनका संबंध समाज के वर्गीय ढांचे तथा जतियों, विभिन्न समुदायों एवं अंचलों के आपसी संबंधों में ढूंढ़ा जा सकता है। शिक्षक को इन सभी पूर्वाग्रहों से दूर हटकर हर बच्चे को एक समान नजरिए से देखना होगा। बहुत से शिक्षक बच्चे की स्कूली भाषा में आंचलिकता की महक ठीक नहीं समझते। कहीं न कहीं उनका मानना है कि बच्चे के घर और परिवेश की बोली स्कूल में मानक भाषा की पढ़ाई के रास्ते की एक बाधा है। इसी सोच के कारण कक्षा में बच्चे द्वारा घर में बोली जाने वाली भाषा का प्रयोग करने पर वे बच्चों को डांट देते हैं। बच्चे की अपनी भाषा की उपेक्षा एवं तिरस्कार का दुष्परिणाम यह होता है कि बच्चा अपने आप में सिमटकर रह जाता है और कक्षा की गतिविधियों में शामिल होने से कतराने लगता है।
- **आकलन में सहजता** : पठन कौशल के विकास के आकलन के लिए बच्चों का व्यक्तिगत स्तर पर अवलोकन करना आवश्यक है। पढ़ने में दक्षता का क्रमिक विकास किस बच्चे में कितना हुआ है, यह पता लगाने के लिए बच्चों की संख्या के अनुसार महीने में कम से कम एक दिन प्रत्येक बच्चे के साथ शिक्षक को अलग समय व्यतीत करना होगा जिसमें वह बच्चे के पढ़ने को ध्यान से सुन सके। इसके साथ ही शिक्षक को पढ़ने से संबंधित गतिविधियां करवाते हुए कक्षा में नियमित रूप से बच्चों का अवलोकन करना होगा।
- **शिक्षक का सकारात्मक दृष्टिकोण** : शिक्षक के सकारात्मक दृष्टिकोण का बच्चे के प्रदर्शन पर बहुत प्रभाव पड़ता है। कई बार देखा गया है कि जिन विद्यार्थियों से सकारात्मक उम्मीदें रखी जाती हैं वे दूसरों की तुलना में बेहतर प्रदर्शन करते हैं। जिन विद्यार्थियों से कम उम्मीदें रखी जाती हैं वे अपने नकारात्मक लेबल को आत्मसात कर लेते हैं और इसका नकारात्मक प्रभाव उनके प्रदर्शन पर पड़ने लगता है। शिक्षक बच्चों से जैसी उम्मीदें रखते हैं, बच्चों का प्रदर्शन वैसा ही हो जाता है। यदि आप बच्चे के मन में यह विश्वास जगाएंगे कि तुम पढ़ सकते हो, तो बच्चा जरूर पढ़कर दिखाएगा।
- **कक्षा में अनुशासन का स्वरूप** : अनुशासन के प्रति भी शिक्षकों को अपने रवैये में बदलाव लाना होगा। अधिकांश शिक्षकों का यही मानना है कि यदि कक्षा में एकदम चुप्पी है और शांति का माहौल है तो इसका मतलब है बच्चे पूर्ण रूप से अनुशासित हैं। सक्रियता बच्चों का स्वभाव है। निष्क्रियता शून्यता को जन्म देती है। बच्चे कुछ करके ही सीखते हैं। बच्चे की सक्रियता उसे बहुत कुछ सिखाती है। बच्चा तभी सक्रिय रहेगा जब एक शिक्षक स्वयं सक्रिय होगा। फ्रेंक स्मिथ

टिप्पणी

के अनुसार, "पढ़ने के प्रति उत्साह बनाए रखने के लिए गतिविधियों का होना आवश्यक है।" किताबों के साथ खेल एवं गतिविधियों का आयोजन कर शिक्षक बड़ी सहजता के साथ बच्चों की पढ़ने में रुचि जाग्रत कर सकता है। शिक्षक की सक्रियता ही पढ़ना सीखने की प्रक्रिया के दौरान नन्हे पाठक के कौतूहल को बनाए रख सकती है। शिक्षण का कार्य जड़ता में जीते हुए नहीं किया जा सकता। जरूरत है कि शिक्षक अपने अंदर की ऊर्जा एवं क्षमता को पहचाने।

पठन शुरू करने का कारगर उपागम

- कक्षा में छपी हुई सामग्री की बहुतायत हो, संकेतों, चार्ट, कार्य संबंधी सूचना आदि उसमें लगे हों ताकि विभिन्न अक्षरों की ध्वनियां सीखने के साथ वे लिखित संकेतों की पहचान भी कर सकें।
- कल्पनाशील निवेशों की जरूरत है, जिसे एक योग्य पाठक हाव–भाव से पढ़े आदि।
- विद्यार्थियों द्वारा बताए गए अनुभवों का लेखन और उनके द्वारा उस लिखित पाठ का वाचन।
- अतिरिक्त सामग्री का पठन : कहानियां, कविता आदि।
- प्रथम पीढ़ी के विद्यार्थियों को इसका अवसर दिया जाना चाहिए कि वे अपने पाठ स्वयं तैयार करें और स्वयं द्वारा चुने हुए पाठों का कक्षा में योगदान दें।

स्रोत : राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा – 2005

मूल्यांकन शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया का अभिन्न हिस्सा है। यह एक सतत चलने वाली प्रक्रिया है और इसका उद्देश्य सीखने वाले की भाषा की संरचना और एकरूपता की समझ का आकलन साथ ही इसे विभिन्न संदर्भों में उपयोग करने की क्षमता और पहलुओं को परख सकने की क्षमता के आकलन के रूप में भी देखा जा सकता है। पिछले कुछ वर्षों से शिक्षा को एक सतत प्रक्रिया के रूप में जाना जाता है। शिक्षा को सतत प्रक्रिया मानने वाले भाषा मूल्यांकन को भी निरंतर चलने वाली एक प्रक्रिया मानते हैं। भाषा के मूल्यांकन का संबंध वास्तव में भाषा दक्षता के मूल्यांकन से है जिसका अभिप्राय भाषा के ज्ञान के साथ–साथ उस ज्ञान के परिस्थिति अनुकूल प्रयोग की क्षमता के साथ रहता है।

भाषा शिक्षण में मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्व

भाषा शिक्षण में मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्व निम्नलिखित हैं–

- मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा शिक्षक विद्यार्थियों की बुद्धिलब्धि का मूल्यांकन कर सकता है।
- सतत मूल्यांकन से छात्र की प्रगति सीमा स्तर के निर्धारण में सहायता मिलती है।
- शिक्षक मूल्यांकन प्रक्रिया के द्वारा शिक्षक विद्यार्थी को पढ़ाने के लिए निर्धारित किए गए लक्ष्यों को प्राप्त होने या न होने को जांच सकता है।
- मूल्यांकन प्रक्रिया से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के दौरान विद्यार्थी द्वारा ग्रहण किए गए ज्ञान का पता चलता है।

भाषाई कौशलों का मूल्यांकन

टिप्पणी

भाषा के चारों कौशल– श्रवण, वाचन, पठन और लेखन अंतर्संबंधित है। भाषा ग्रहण करना एवं अभिव्यक्त करना इन चारों कौशलों पर निर्भर करता है। बच्चों में इनका विकास किस प्रकार हो रहा है इसके लिए अध्यापक को सजग रहना होता है। इन कौशलों का विकास धीरे–धीरे और निरंतर होता है इसलिए इनका मूल्यांकन भी निश्चित रूप से निरंतर और सतत होना चाहिए। अब हम इन कौशलों का सतत और व्यापक रूप से मूल्यांकन कैसे करें, इसकी चर्चा करेंगे–

1. श्रवण कौशल का मूल्यांकन

हम जानते हैं कि भाषा के चारों कौशल एक–दूसरे से पूरी तरह जुड़े हैं। बच्चे में बोलने, पढ़ने और लेखन के कौशल के विकास के लिए आवश्यक है कि उसमें सुनने के कौशल का विकास हो। शिक्षक के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह जाने कि बालक का श्रवण कौशल कैसा है? वह विभिन्न परिस्थितियों में लोगों की बातों को सुनकर कितना समझ पाता है।

शिक्षक वाद–विवाद, प्रवचन, भाषण, कविता, कहानी, दूरदर्शन के प्रसारित कार्यक्रम टेप पर रिकार्ड की गई सामग्री आदि को बच्चों को सुनने के लिए देकर, उस पर आधारित प्रश्न पूछकर बच्चों की सुनने की योग्यता का मूल्यांकन कर सकते हैं। विद्यार्थियों की सुनने की योग्यता का मूल्यांकन करते समय निम्नलिखित परिवर्तनों की ओर ध्यान देना चाहिए–

- क्या विद्यार्थी ध्यानपूर्वक सुनते हैं?
- क्या वे सुनने में शिष्टाचार का पालन करते हैं?
- क्या वे मनोयोगपूर्वक सुनते हैं?
- क्या वे ग्रहणशीलता की स्थिति बनाए रखते हैं?
- क्या वे शब्दों, मुहावरों आदि का प्रसंगानुकूल अर्थग्रहण करते हैं?
- क्या वे बलाघात व अनुतान के उतार–चढ़ाव के अनुसार अर्थग्रहण कर सकते हैं?
- क्या वे श्रुत सामग्री के विषय, महत्व्वपूर्ण विचारों, भावों तथा तथ्यों को समझते हैं?
- क्या वे श्रुत सामग्री के सारांश व केंद्रीय भावों को ग्रहण कर सकते हैं?
- क्या वे वक्ता के मनोभावों को समझ सकते हैं?
- क्या वे श्रुत सामग्री के सुंदर स्थलों की पहचान कर सकते हैं?
- क्या वे श्रुत सामग्री में प्रयुक्त छंद, अलंकार तथा मूर्त–अमूर्त विधानों की पहचान कर सकते हैं?
- क्या वे भाषा एवं शैली की दृष्टि से साहित्यिक अंशों में तुलना कर सकते हैं?

अधिकतर यह देखा गया है कि बच्चे सुनकर अर्थग्रहण नहीं कर पाते हैं जिससे वह किसी सुने हुए भाषण, कहानी, कविता, वाद–विवाद आदि को समझ कर सार नहीं निकाल पाते हैं। इस योग्यता का आकलन पूरे वर्ष भर होना चाहिए। इसके लिए प्रेक्षण,

प्रश्नावली, घटना–क्रम, संचयी–वृत्त, पोर्टफोलियो, रुब्रिक्स आदि के द्वारा विद्यार्थियों की इस योग्यता का मूल्यांकन सतत रूप से किया जा सकता है।

2. बोलने का कौशल

टिप्पणी

अपने भावों और विचारों को उपयुक्त शब्दों, वाक्यों, मुहावरों आदि के प्रयोग कर प्रस्तुत करना, मौखिक अभिव्यक्ति है। मौखिक अभिव्यक्ति को तभी सार्थक माना जाता है जब वक्ता की कही हुई बात श्रोता सही ढंग से समझ लेता है।

शिक्षक अधिकांशतः मौखिक अभिव्यक्ति मूल्यांकन के प्रति उपेक्षा का भाव रखते हैं क्योंकि शिक्षक यह नहीं समझ पाते कि वे अभिव्यक्ति के किन पक्षों का मूल्यांकन करें और इसके लिए मूल्यांकन की विधियां क्या हो सकती हैं। शिक्षक को मौखिक अभिव्यक्ति का मूल्यांकन करते समय विद्यार्थियों के निम्नलिखित गुणों का मूल्यांकन करना चाहिए–

- क्या वे सुश्रव्य वाणी में बोल सकते हैं?
- क्या वे प्रसंगानुसार उचित गति के साथ बोल सकते हैं?
- क्या वे शुद्ध उच्चारण, उचित बलाघात और अनुतान में उतार–चढ़ाव के अनुसार बोल सकते हैं?
- क्या वे उचित विराम या उचित प्रवाह के साथ बोल सकते हैं?
- क्या वे क्रमबद्धता, सुसम्बद्धता का ध्यान रखते हैं?
- क्या वे विषय की एकता बनाए रखते हैं?
- क्या वे उचित हाव–भाव के साथ बोलते हैं?
- क्या वे व्याकरण–सम्मत भाषा का प्रयोग कर सकते हैं?
- क्या वे प्रसंगानुकूल उचित शब्दों, मुहावरों और सूक्तियों का प्रयोग कर सकते हैं?
- क्या वे मौखिक अभिव्यक्ति व शिष्टाचार का पालन करते हैं?
- क्या वे भावानुकूल ढंग से विचारों को प्रकट कर सकते हैं?
- क्या वे विचारों को अपनी भाषा में व्यक्त कर सकते हैं?

वार्तालाप, वाद–विवाद, परिचर्चा, भाषण, कहानी–कथन, कविता–पाठ आदि ऐसे अवसर होते हैं जिस समय शिक्षक विद्यार्थियों की मौखिक अभिव्यक्ति की योग्यता का मूल्यांकन समय–समय पर कर सकता है। मौखिक अभिव्यक्ति के मूल्यांकन को विश्वसनीय, वैध, वैज्ञानिक, तर्कसंगत बनाने के लिए विभिन्न भागों में विभक्त करके परखना आवश्यक होता है।

सुनना कौशल का सार्थक विकास बोलने के कौशल पर निर्भर है और बोलने के कौशल का विकास और सार्थकता सुनने के कौशल पर निर्भर है। सुनना और बोलना कौशल जानने के लिए निम्नलिखित पक्षों पर ध्यान देना चाहिए–

- विद्यार्थी विभिन्न परिस्थितियों में बोली जाने वाली भाषा को सुनकर समझते हैं।
- विद्यार्थी दूसरों की बातों और विचारों को सुनकर, समझकर अपने ढंग से व्यक्त करते हैं।
- विद्यार्थी अपनी बात स्पष्टता के साथ और खुलकर कहते हैं।

- विद्यार्थी अपने आस–पास घट रही घटनाओं, समस्याओं, सामायिक मुद्दों को सुनकर उन पर अपनी राय व्यक्त कर सकते हैं।
- विद्यार्थी अवसरानुकूल भाषा का प्रयोग करते हैं।

यदि हम वाद–विवाद प्रतियोगिता का उदाहरण लें तो इसमें सुनना एवं बोलना दोनों कौशलों का प्रयोग होता है। वक्ता दूसरों की बात को सुनकर ही उसके पक्ष में या विपक्ष में अपनी बात कहता है।

टिप्पणी

3. पठन कौशल के मूल्यांकन

पठन कौशल एक ऐसी संश्लिष्ट विकासशील मनोभाषिक क्रिया है जो लिपि–प्रतीकों को पहचान कर उन्हें शब्द और अर्थ में परिवर्तन करने से आरंभ होकर अर्थग्रहण के दौर से गुजरती हुई पाठक को विश्लेषण, चिंतन–मनन के स्तर तक ले जाती है। कुशल पाठक वहां पहुंचकर पठित सामग्री की सार्थकता, सारता, उपयुक्तता और उपयोगिता का मूल्यांकन करता है और साथ ही उसमें निहित निरर्थकता, अनावश्यकता, अप्रासंगिकता का समीक्षण भी। भाषा की कक्षा में बच्चों को गद्य, पद्य, कहानी आदि पढ़कर अर्थ ग्रहण की आवश्यकता प्रतिदिन होती है। कई बच्चे पठित सामग्री को पढ़कर अर्थ ग्रहण कर पाते हैं और कई नहीं। शिक्षक का कार्य है कि वह विद्यार्थियों की इस क्षमता का मूल्यांकन करें। इस क्षमता के मूल्यांकन के लिए विद्यार्थियों के निम्नलिखित पक्षों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए–

- क्या वह पाठ्यपुस्तक के अतिरिक्त की गई रचनाओं जैसे कहानी, पाठेत्तर साहित्य के बारे में जानने और उन्हें पढ़ने के लिए उत्सुक है?
- क्या विद्यार्थी अपनी पसंद की रचना को पुस्तकालय या अन्य स्थान से ढूंढ़कर पढ़ने का प्रयास करता है?
- रेडियो और टेलिविजन पर प्रसारित होने वाले विभिन्न कार्यक्रमों व फिल्मों से संबंधी समीक्षाओं और रिपोर्टों को पढ़ने के लिए उत्सुक है?
- क्या वह शब्दों, मुहावरों तथा उक्तियों का प्रसंगानुकूल भाव ग्रहण कर सकता है?
- क्या वह पठित सामग्री का सारांश एवं केन्द्रीय भाव ग्रहण कर सकता है?
- क्या वह लेखक के मनोभावों को समझने में सक्षम है?
- विभिन्न रचनाओं के शीर्षक पर उसका मत क्या है?
- क्या वह छंद, अलंकार, मूर्त–अमूर्त विधानों की पहचान कर सकता है?
- क्या वह मुद्रित/लिखित सामग्री से निजी संवाद बना पाता है?
- क्या वह किसी भी पठित अंश को अपनी भाषा में अभिव्यक्त कर पाता है?
- क्या विद्यालय, घर, आस–पड़ोस, सड़कों आदि स्थानों पर लिखित एवं मुद्रित निर्देशों, सामग्री के प्रति सजगता का भाव रखता है और उन्हें समझकर आवश्यकतानुसार प्रयोग भी करता है।

पठित सामग्री की अर्थग्रहण कुशलता के लिए मौखिक एवं लिखित दोनों प्रकार की परीक्षाओं का प्रयोग किया जा सकता है।

टिप्पणी

4. लेखन कौशल का मूल्यांकन

लिखित अभिव्यक्ति के विकास के लिए प्रारम्भ से ही विधिवत शिक्षा की आवश्यकता होती है। वैसे तो लिखित अभिव्यक्ति में मौखिक अभिव्यक्ति की अनेक विशेषताएं अपेक्षित एवं आवश्यक हैं, जैसे– शुद्ध, स्पष्ट, प्रभावपूर्ण एवं व्यावहारिक तथा अवसरानुकूल भाषा प्रयोग, क्रमबद्ध एवं सुसंबद्ध रूप से भावों एवं विचारों की कलात्मक अभिव्यक्ति। किन्तु लिपि, शब्द–ज्ञान, पदक्रम, वाक्य–गठन के विभिन्न रूपों तथा शैली आदि की प्रयोग क्षमता लिखित अभिव्यक्ति के अनिवार्य पक्ष हैं।

लिखित अभिव्यक्ति के मूल्यांकन के लिए परीक्षा पद्धति महत्वपूर्ण है। आज सतत एवं व्यापक मूल्यांकन के दौर में भी पठन, वाचन एवं श्रवण कौशलों से भी अधिक ध्यान लेखन कौशल के मूल्यांकन पर ही दिया जाता है। उसके बाद भी विद्यार्थियों की लेखन शैली संतोषजनक नहीं होती। उसका कारण है मूल्यांकन के मानदंडों का ठीक न होना जिससे लेखन के सभी पक्षों का मूल्यांकन ठीक से नहीं हो पाता। इसलिए मूल्यांकन के समय लेखन के सभी उद्देश्यों को ध्यान में रखना चाहिए। आप जब भी प्रश्न पत्र बनाए, उद्देश्यों को ध्यान में रखकर ही प्रश्नपत्र का निर्माण करें।

लेखन कौशल के मूल्यांकन के लिए अनुच्छेद लेखन, निबंध लेखन, पत्र लेखन, कहानी लेखन, संवाद लेखन, एकांकी रचना, नाटक लेखन, संस्मरण लेखन, आत्मकथा, जीवनी, पद्य लेखन, सार लेखन, विचार एवं भाव विस्तार, रिपोर्ताज, संपादकीय लेखन आदि विधियां अपनाई जा सकती हैं। विद्यार्थी की लिखित अभिव्यक्ति का मूल्यांकन करते समय निम्नलिखित पक्षों को ध्यान में रखना चाहिए–

- क्या विद्यार्थी प्रसंगानुसार उचित गति में लिख सकते हैं?
- क्या वे शुद्ध वर्तनी में लिख सकते हैं?
- क्या वे विराम चिह्नों का ठीक से प्रयोग करके लिख सकते हैं?
- क्या वे प्रसंगानुसार उचित शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों का प्रयोग कर सकते हैं?
- क्या वे यथोचित अनुच्छेदों का निर्माण कर सकते हैं?
- क्या वे व्याकरणसम्मत भाषा का प्रयोग कर सकते हैं?
- क्या वे क्रमबद्ध रूप से लिख सकते हैं?
- क्या वे विषय तथा अभिव्यक्ति के अनुकूल शैली का प्रयोग कर सकते हैं?
- क्या उनकी लेखन शैली मौलिक है?
- क्या वे अनुभवों, भावों एवं दूसरों की राय एवं विचारों को लिखने की कोशिश करते हैं?
- क्या वे सुनी हुई कहानी या अन्य रचनाओं को आगे बढ़ाते हुए लिख सकते हैं?
- क्या वे दैनिक जीवन से जुड़ी घटनाओं या काल्पनिक घटनाओं में भाषा का काल्पनिक एवं सृजनात्मक प्रयोग करते हुए लिख सकते हैं?
- लिखते हुए नए शब्दों का प्रयोग करते हैं या नहीं?
- लिखने व बोलने में अपने आस–पास, स्थानीय सुनी–समझी या पढ़ी हुई भाषा का सटीक, उपयुक्त ढंग से प्रयोग कर पाते हैं या नहीं?
- डायरी, संस्मरण, रेखाचित्र, वृतांत आदि लेखन प्रकारों में अवलोकन क्षमता का पर्याप्त प्रयोग करते हैं या नहीं?

2.4.5 समझ का मूल्यांकन करने के लिए उपकरण

सतत आकलन शिक्षकों को छात्रों की सीखने की प्रक्रिया के बारे में नियमित प्रतिक्रिया प्रदान करता है। जिसका उपयोग करके छात्रों को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है।

टिप्पणी

आकलन दो प्रकार का होता है– निर्माणात्मक आकलन और योगात्मक आकलन ये दोनों एक–दूसरे से अलग माने जाते हैं क्योंकि इनका उपयोग अलग–अलग तरीकों से और भिन्न प्रयोजनों के लिए किया जाता है।

- निर्माणात्मक आकलन कई लोगों द्वारा 'सीखने के लिए आकलन' भी कहलाता है। इस प्रकार के आकलन का मुख्य प्रयोजन छात्रों को रचनात्मक प्रतिक्रिया प्राप्त करने में सक्षम बनाना है जो उन्हें बेहतर सीखने और प्रभावी प्रगति करने में सहायक सिद्ध होगी। ऐसी प्रतिक्रिया आम तौर पर शिक्षकों द्वारा दी जाती है।
- योगात्मक आकलन को 'सीखने के आकलन' के नाम से भी जाना जाता है। इस प्रकार के आकलन का मुख्य प्रयोजन शिक्षक को छात्रों की उपलब्धि और कार्य प्रदर्शन की पहचान करने में सक्षम करना है।
- योगात्मक आकलन का उपयोग मुख्य रूप से एक छात्र की अन्य छात्रों के समक्ष तुलना करने के लिए किया जाता है, जबकि निर्माणात्मक आकलन का उपयोग सीखने की प्रगति के लिए किया जाता है।

अतः निर्माणात्मक आकलन का योगात्मक आकलन की अपेक्षा प्रयोजन और दृष्टिकोण भिन्न होता है। योगात्मक आकलन अधिक औपचारिक होता है जबकि निर्माणात्मक आकलन कक्षा के संदर्भ में संपन्न होता है तथा शिक्षक और छात्र के बीच संबंध की बुनियाद पर विकसित होता है। निर्माणात्मक आकलन (सेंट्रल बोर्ड ऑफ सेकेडरी एजुकेशन, 2009) की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. यह प्रभावी प्रतिक्रिया के लिए प्रावधान करता है।
2. यह शिक्षकों को आकलन के परिणामों को ध्यान में रखते हुए अध्यापन को समायोजित करने में सक्षम बनाता है।
3. यह छात्रों के स्वयं सीखने में उनकी सक्रिय भागीदारी के लिए मंच प्रदान करता है।
4. यह छात्रों के स्वयं का आकलन करने और सुधार करने के तरीके को समझने में सहायता करता है।
5. कैसे और क्या पढ़ाया जाना है यह तय करने के लिए सीखने की विभिन्न शैलियों को समाविष्ट करता है।
6. यह जो कुछ पढ़ाया जाना है उसकी परिकल्पना के लिए छात्रों के पूर्व ज्ञान और अनुभव की नींव पर विकसित होता है।
7. छात्रों को उन मापदंडों को समझने के लिए प्रोत्साहित करता है जिनका उपयोग उनके काम को परखने के लिए किया जाएगा।
8. छात्रों की उनके समकक्षों की सहायता किए जाने में मदद करता है।
9. यह छात्रों को प्रतिक्रिया के बाद उनके काम को सुधारने का अवसर प्रदान करता है।

निर्माणात्मक आकलन शिक्षक को आगे बढ़ने का अवसर देता है और छात्र को यह समझने का मौका देता है कि उसे सफल होने के लिए क्या करना है। निर्माणात्मक आकलन छात्र को उसके सीखने का स्वामित्व प्रदान करता है।

(क) सतत और व्यापक मूल्यांकन (सी.सी.ई.)

टिप्पणी

सतत और व्यापक मूल्यांकन (सीसीई) का वर्णन (सेंट्रल बोर्ड ऑफ सेकेंडरी एजुकेशन, 2009) निम्न प्रकार से है–

सीसीई का मुख्य जोर छात्रों के शारीरिक, बौद्धिक, भावात्मक, सांस्कृतिक और सामाजिक विकास को सुनिश्चित करते हुए उनकी सतत प्रगति पर होता है और इसलिए वह विद्यार्थी की शैक्षिक योग्यताओं तक ही सीमित नहीं होता। वह आकलन का उपयोग विद्यार्थियों की प्रतिक्रिया और अनुवर्ती काम की व्यवस्था करने के लिए जानकारी प्रदान करने को प्रेरित करने के साधन के रूप में करता है ताकि कक्षा में सीखने की प्रक्रिया में सुधार किया जा सके।

निर्माणात्मक और योगात्मक आकलन की पहचान करना

नीचे दी गई आकलन के अवसरों की सूची का उपयोग विद्यालय में कक्षाओं में किया जा सकता है।

यह एक ऐसी गतिविधि है जिसे आप अकेले भी कर सकते हैं। यदि इसे विस्तृत करना चाहते हैं तो एक सामूहिक गतिविधि के हिस्से के रूप में अन्य लोगों को शामिल कर सकते हैं।

आकलन के अवसरों की सूची निम्नलिखित है–

1. पेन और पेपर परीक्षा
2. याददाश्त से दोहराना
3. खुली पुस्तक वाली परीक्षा
4. विज्ञान के किसी प्रयोग की परिकल्पना और निष्पादन करना
5. निबंध
6. शिक्षक द्वारा छात्र का प्रेक्षण
7. प्रश्नों के मौखिक उत्तर
8. प्रदर्शन
9. किसी नाटक की रचना और अभिनय करना
10. एथलेटिक्स की दौड़ में व्यक्तिगत कीर्तिमान स्थापित करना

आकलन का उपयोग निर्माणात्मक ढंग से करना

प्रगति और कार्य–प्रदर्शन का आकलन करना उपयोगी सिद्ध होगा जब आप अपने विद्यालय में आकलन की भूमिका और शैली के बारे में चर्चाएं प्रारंभ करेंगे और देखेंगे कि किन पद्धतियों का उपयोग किया जा सकता है, और आकलन कैसे कक्षा की एक अनिवार्य गतिविधि बन सकता है।

निर्माणात्मक और योगात्मक आकलन के बीच मुख्य अंतर है–

- आकलन का प्रयोजन
- डेटा का उपयोग कैसे किया जाता है
- प्रक्रिया का स्वामी कौन है।

टिप्पणी

निर्माणात्मक आकलन में छात्रों को सहयोगी बनाने के लिए, उन्हें सक्रिय और चिंतनशील विद्यार्थी बनना होगा और अपनी सीखने की प्रक्रिया में अगले कदम उठाने के लिए प्रतिक्रिया का उपयोग करना होगा।

(ख) केस स्टडी

केस स्टडी से तात्पर्य है किसी भी वस्तु, स्थिति को भलीभांति बारीकी से जानना। इसका बुनियादी आधार विद्यार्थी की जिज्ञासु प्रवृत्ति को माना जाता है। केस स्टडी अर्थात व्यक्तिगत अध्ययन विषय विशेष जैसे बालक समूह या घटना के गुण दोषों आदि का विश्लेषण है।

कक्षा में निर्माणात्मक और योगात्मक आकलन का उपयोग करना।

केस स्टडी 1 और 2 इसके उदाहरण हैं।

केस स्टडी 1: श्याम को निर्माणात्मक आकलन प्राप्त होता है

श्याम एक पुस्तक के अध्याय का सारांश लिखने के लिए एक और अन्य छात्र के साथ मिलकर कार्य करता है। बाद में वह विचार करता है कि उन्हें वह कार्य करने में कितना समय लगा और वे दोनों कितने अव्यवस्थित थे। श्याम कार्य के बारे में असमंजस में था और उसे पता चला कि वह अध्याय के कुछ महत्वपूर्ण शब्दों को नहीं समझ पाया था। अध्याय का सारांश देर से दिया गया और शिक्षक ने कहा कि वह बहुत छोटा था, उसमें वाक्य संरचना का अभाव था और कुछ आवश्यक जानकारी छूट गई थी। तथापि, शिक्षक ने उनके प्रयास के लिए उन्हें प्रोत्साहित किया और वे इस बात पर सहमत हुए कि श्याम अपने अगले सारांश में अधिक संरचना का उपयोग करेगा। श्याम अब भी यही सोच रहा था कि वह और अधिक बेहतर कर सकता था, लेकिन यह पहली बार था जब उसने किसी अध्याय का सारांश लिखा था।

श्याम ने इस पुस्तक के लिए एक शब्दावली सूची लिखनी प्रारंभ की क्योंकि यह स्पष्ट था कि वह कहानी के कुछ भाग को भूल रहा था और देखना चाहता था कि क्या इससे उसे कुछ सहायता मिलेगी। श्याम ने अगली बार एक अन्य सहयोगी के साथ काम करने का निश्चय किया जो काम के बारे में अधिक स्पष्ट था और उसने सुझाव दिया कि सारे काम को मिलकर करने की बजाय दायित्वों को आपस में बाँट लिया जाए। वह इस बारे में निश्चित नहीं था कि भ्रमित कौन था– वह या उसका सहयोगी, वह इस बात की जांच करना चाहता था।

श्याम ने न केवल अपनी स्वयं की शिक्षण–प्रक्रिया के बारे में विचार किया, बल्कि यह भी देखना शुरू किया कि वह अगली बार कैसे बेहतर काम कर सकता है और अपनी सीखने की प्रक्रिया में सुधार करने के लिए वह और क्या कर सकता है। उसने न केवल अपने निष्कर्ष पर नजर डाली, बल्कि यह भी देखा कि वह कैसे काम कर रहा था। उसके शिक्षक ने उसे कुछ उपयोगी प्रतिक्रिया दी जिसका उसने अगली बार योजना बनाने के लिए उपयोग किया।

टिप्पणी

छात्रों को सक्रिय विद्यार्थी बनाने के लिए, उनको प्रोत्साहित करने के लिए, शिक्षक को यह सुनिश्चित करना होगा कि वे अपनी शिक्षण प्रक्रिया के प्रति सजग हैं। इससे वे–

- अपनी गतिविधि पर चिंतन करते हैं
- जो कुछ हुआ उसका विश्लेषण करना प्रारंभ करते हैं
- अपनी शिक्षण–प्रक्रिया को सुधारने और अपने अनुमानों तथा निष्कर्षों की जांच करने के लिए कार्यवाही करते हैं।

केस स्टडी 2 बताता है कि एक विद्यालय प्रमुख, श्रीमति शारदा ने शिक्षक के रूप में अपने स्वयं के अनुभवों का उपयोग करते हुए अपने विद्यालय में निर्माणात्मक आकलन का प्रारंभ कैसे किया। वे अपने विद्यालय में निर्माणात्मक आकलन का परिचय कराने के लिए अपने तरीके को इन पांच चरणों में विभाजित करती हैं–

- शिक्षकों को निर्माणात्मक आकलन से परिचित कराना।
- शिक्षकों को निर्माणात्मक आकलन के व्यावहारिक संपर्क में लाना।
- विद्यालय नेता, श्रीमति शारदा द्वारा कक्षा को पढ़ाने के प्रेक्षित तरीके पर शिक्षकों के साथ चर्चा करना।
- शिक्षकों का उनकी कक्षाओं में निर्माणात्मक आकलन करते समय प्रेक्षण करना।
- समीक्षा और चिंतन–मनन करना।

केस स्टडी 2: श्रीमति शारदा कक्षा में निर्माणात्मक आकलन का उपयोग करती हैं

श्रीमति शारदा अपनी कक्षा के प्रत्येक छात्र की विभिन्न अध्यायों में प्रगति के बारे में नोट्स बनाकर आकलन करती थीं। उन्हें अपनी कक्षा के विभिन्न छात्रों के लिए अपने पाठों को प्रासंगिक और उपयोगी बनाने पर गर्व अनुभव होता था। वे जानती थीं कि ऐसा करना तभी संभव है यदि उन्हें प्रत्येक छात्र की उसकी पढ़ाई में स्थिति की पूर्ण जानकारी हो। उन्होंने समय के साथ सीखा था कि उन्हें यह नहीं मानना चाहिए कि सबसे अधिक शोर करने वाले छात्र ही सबसे मेधावी भी होते हैं, इसलिए उन्हें ऐसे छात्रों को प्रोत्साहित करना और उन्नति करते हुए देखना पसंद था जो शांत रहकर भी सक्षम थे।

वे किसी न किसी प्रारूप में यह रिकॉर्ड करने में भी विश्वास करती थीं कि छात्र अपनी गतिविधियों में क्या कर रहे हैं और प्रत्येक छात्र को उसकी शिक्षण–प्रक्रिया और प्रगति के बारे में प्रतिक्रिया देती थीं। रिकॉर्डिंग और विश्लेषण के आधार पर, वे योजना बनाती थीं कि उनके छात्रों के साथ किस प्रकार से व्यवहार किया जाए जिससे कि उनकी सीखने की प्रक्रिया में सुधार हो सके।

श्रीमति शारदा चाहती हैं कि उनके तीन सहकर्मी अपने छात्रों की पूर्व शिक्षा को आगे बढ़ाएं और उन्हें जो कुछ पता चले उसे ध्यान में रखते हुए अपने अध्यापन को समायोजित करें।

स्टाफ के परिदृश्य और आकलन पर उनके परिदृश्य अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। तथापि, वे सफलता का केवल एक हिस्सा हैं। विद्यालय में निर्माणात्मक आकलन के सफल कार्यान्वयन के मूल में ये दो बिंदु मुख्य हैं–

1. क्या शिक्षकों को आकलन के अवसरों से छात्रों के लिए प्रभावी ढंग से सीखने में मदद करने के लिए महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हो रही है?

2. क्या छात्रों को प्रभावी ढंग से सीखने और अपनी क्षमताओं को विकसित करने के लिए आवश्यक प्रतिक्रिया प्राप्त हो रही है?

यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि छात्रों से उनके निर्माणात्मक आकलन के अनुभवों के बारे में पूछने और यह जानने के लिए समय दिया जाए कि क्या वे सुझाव दे सकते हैं कि आकलनों और प्रतिक्रियाओं में कैसे सुधार किया जा सकता है। छात्रों को शामिल करना प्रत्येक आकलन के अवसर में सन्निहित होना चाहिए, ताकि शिक्षक समझ सकें कि छात्रों ने आकलन से क्या लाभ प्राप्त किया है। इस प्रकार, आकलन व्यक्ति से संबंधित हो जाता है, जिसे विभेदित आकलन भी कहते हैं।

टिप्पणी

निर्माणात्मक आकलन तभी प्रभावशाली होता है जब शिक्षक जानते हैं कि छात्र किस ओर जा रहे हैं। एक विद्यालय प्रमुख होने के नाते, यह सुनिश्चित करना आपका दायित्व है कि शिक्षकों के पास शैक्षणिक वर्ष के अंत में, पाठों के क्रम की समाप्ति और किसी विशिष्ट गतिविधि को पूरा करने के लक्ष्य हैं।

(ग) रूब्रिक

रूब्रिक एक ऐसा उपकरण है जिसका उपयोग शिक्षक लिखित कार्य, परियोजनाओं, भाषणों और विभिन्न प्रकार के असाइनमेंट का आकलन करने के लिए करते हैं। प्रत्येक रूब्रिक को मानदंडों के एक सेट (जैसेः संगठन, साक्ष्य, निष्कर्ष) के साथ विभाजित किया गया है, ताकि उनके मानदंड को समझाने के लिए गुणवत्ता के मार्करों के साथ प्रदर्शित किया जा सकते। एक रूब्रिक में एक रेटिंग स्केल भी होता है जो असाइनमेंट के लिए छात्र के स्तर को पहचानने के लिए बिंदु मान या मानक प्रदर्शन स्तर का उपयोग करता है।

एक रूब्रिक पर रेटिंग का पैमाना इसे एक असाइनमेंट को ग्रेड देने के साथ–साथ समय के साथ छात्र के प्रदर्शन की प्रगति के लिए एक उपयुक्त तरीका बनाता है। रुब्रिक्स शिक्षण उपकरण के रूप में अत्यंत उपयोगी होते हैं अनुसंधान से पता चलता है कि रूब्रिक्स के निर्माण में छात्र इनपुट स्कोर और जुड़ाव में सुधार कर सकते हैं। रूब्रिक्स का उपयोग छात्र के काम का आकलन और सहकर्मी समीक्षा को सुविधाजनक बनाने के लिए भी किया जा सकता है।

रूब्रिक मानदंड

आम तौर पर सभी रूब्रिक्स, विषय वस्तु का विचार किए बिना, परिचय और निष्कर्ष के लिए मापदंड रखते हैं। अंग्रेजी के मानक या व्याकरण और वर्तनी, एक रूब्रिक में भी सामान्य मापदंड हैं। हालांकि, एक रूब्रिक में कई अलग–अलग मानदंड या माप हैं जो विषय विशिष्ट हैं। उदाहरणस्वरूप, एक अंग्रेजी साहित्यिक निबंध के लिए एक रूब्रिक में, मानदंड में ये माप शामिल हो सकते हैं–

- उद्देश्य या थीसिस कथन
- संगठन
- साक्ष्य और समर्थन

इसके विपरीत, एक विज्ञान प्रयोगशाला रिपोर्ट के लिए एक रूब्रिक में अन्य माप हो सकते हैं, जैसे–

- परिभाषाएं
- डेटा और परिणाम
- उपाय

टिप्पणी

मानदंड के लिए विवरणकर्ताओं में प्रदर्शन के प्रत्येक स्तर के लिए योग्य भाषा होती है जो रूब्रिक असाइनमेंट या कार्य को सीखने के उद्देश्यों से जोड़ती है। ये डिस्क्रिप्टर एक रूब्रिक को चेकलिस्ट से अलग बनाते हैं। स्पष्टीकरण एक मास्टरी के मानक के अनुसार एक रूब्रिक में प्रत्येक तत्व की गुणवत्ता का विवरण देता है, जबकि एक चेकलिस्ट ऐसा नहीं करती है।

रूब्रिक डिस्क्रिप्टर्स के साथ स्कोरिंग

छात्र का काम विभिन्न पैमानों के स्तरों के अनुसार एक रूब्रिक पर किया जा सकता है। रूब्रिक पर स्तरों के अनुसार कुछ उदाहरण हैं–

- 5–स्केल रुब्रिकः निपुण, निपुण, विकासशील, उभरता हुआ, अस्वीकार्य
- 4–स्केल रूब्रिकः प्रवीणता से ऊपर, प्रवीणता, प्रवीणता के करीब, प्रवीणता से नीचे
- 3–स्केल रूब्रिकः बकाया, संतोषजनक, असंतोषजनक

माणिक्य के प्रत्येक स्तर के लिए रूब्रिक पर विवरण भिन्न–भिन्न हैं। उदाहरण स्वरूप, भाषा में 3–पैमाने वाले रूब्रिक में अंतर, जो छात्र के ''साक्ष्यों के समावेश'' के मानदंड के लिए काम करता है–

- बकायाः उचित और सटीक प्रमाण अच्छी तरह से समझाया गया है।
- संतोषजनकः उचित साक्ष्य की व्याख्या की जाती है, हालांकि, कुछ गलत जानकारी शामिल है।
- असंतोषजनकः साक्ष्य गायब या अप्रासंगिक है।

जब शिक्षक छात्र के काम को पूरा करने के लिए एक रूब्रिक का उपयोग करता है, तो प्रत्येक तत्व का मूल्य वेतन वृद्धि में होना चाहिए और विभिन्न बिंदु मान असाइन किए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए जैसे– साक्ष्य के उत्कृष्ट उपयोग के लिए 12 अंक, साक्ष्य के संतोषजनक उपयोग के लिए 8 अंक और साक्ष्य के असंतोषजनक उपयोग के लिए 4 अंक प्रदान करने के लिए एक रूब्रिक का आयोजन किया जा सकता है।

ग्रेडिंग में अधिक भारी गणना करने के लिए एक मानदंड करना संभव है। उदाहरण के लिए, जैसे– एक सामाजिक अध्ययन शिक्षक एक छात्र की प्रतिक्रिया में साक्ष्य को शामिल करने के लिए अंक तीन गुना करने का निर्णय ले सकता है। इस तत्व का मान 36 अंकों तक बढ़ाना। जब एक असाइनमेंट में अन्य तत्व 12 अंक के होते हैं, तो प्रत्येक छात्र इस मानदंड के महत्व को इंगित करता है। इस उदाहरण में, असाइनमेंट, जो अब कुल 72 अंकों के लायक है, को निम्न प्रकार से तोड़ा जा सकता है–

- परिचय या थीसिस– 12 अंक
- साक्ष्य– 36 अंक
- संगठन –12 अंक
- निष्कर्ष –12 अंक

रूब्रिक्स के कारण

टिप्पणी

जब छात्रों को अपना काम पूरा करने से पहले रूब्रिक्स दिए जाते हैं, तो छात्रों को इस बात की बेहतर समझ होती है कि उनका मूल्यांकन कैसे किया जाएगा। रूब्रिक्स ग्रेडिंग पर खर्च किए गए समय को कम करने में मदद कर सकते हैं।

असाइनमेंट के लिए रूब्रिक्स का उपयोग करने का एक महत्वपूर्ण लाभ यह है कि वे शिक्षकों को एक कक्षा में छात्र के प्रदर्शन के मूल्यांकन में निरंतरता को विकसित करने में सहायता करते हैं। जब बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है, तो रूब्रिक्स एक ग्रेड, स्कूल या जिले में एक सुसंगत स्कोरिंग पद्धति प्रदान कर सकते हैं।

कुछ असाइनमेंट के लिए, कई शिक्षक एक ही रूब्रिक का उपयोग करके एक छात्र के काम को ग्रेड कर सकते हैं और फिर उन ग्रेड को औसत कर सकते हैं। यह प्रक्रिया, जिसे अंशांकन के रूप में जाना जाता है, विभिन्न स्तरों, जैसे कि अनुकरणीय, प्रवीण और विकास के आसपास शिक्षक समझौते का निर्माण करने में सहायता कर सकती है।

शिक्षकों के निर्माणात्मक आकलन का उपयोग विकसित करने में मदद करने के लिए छात्रों के लिए लघु, मध्यम और दीर्घावधि में स्पष्ट लक्ष्य होने आवश्यक हैं। तालिका 1 रूब्रिक का उदाहरण है जो विभिन्न स्तरों पर और विभिन्न मापदंडों के समक्ष आकलन करती है।

तालिका 1 आर्ट रूब्रिक एलीमेंटरी ग्रेड लेवल

श्रेणी	विशेषण	सक्षम	नया	विकास की आवश्यकता
शिल्प कौशल	आकार नियोजित और संतुलित है। किनारे परिष्कृत और चिकने हैं। दीवारें मोटी हैं। जोड़ संरक्षित है और छुपा हुआ है। सभी सतहों को Burrs या Wobbles के बिना चिकनी कर रहे हैं।	आकार कुछ हद तक नियोजित है और थोड़ा विषम है। अधिकांश किनारे परिस्कृत और चिकने हैं। दीवारें न्यूनतम Wobbles के साथ भी मोटी हैं। जोड़ सुरक्षित और छुपे हुए हैं। अधिकांश सतह बिना Burrs के चिकनी हैं।	आकार अनियोजित है और संतुलन का अभाव है। कुछ किनारे चिकने हैं लेकिन कई अपरिष्कृत हैं। जोड़ सुरक्षित लेकिन स्पष्ट है। दीवारें सतह कुछ Wobbles के साथ ज्यादातर चिकनी हैं। कुछ के साथ मोटाई में भिन्नता है लेकिन कुछ Burrs स्पष्ट है।	आकार में योजना और प्रयास का अभाव है। सतहों की मोटाई असमान है। जोड़ असुरक्षित है। सतहें और किनारे अपरिष्कृत हैं।
रचनात्मकता	डिजाइन अद्वितीय है और प्रदर्शित तत्व पूरी तरह से उनके अपने हैं। विस्तार, पैटर्न या अद्वितीय अनुप्रयोगों के साक्ष्य।	डिजाइन अर्थपूर्ण है, कुछ अद्वितीय विशेषतायें हैं। कुछ हद तक बाहर शाखाएं है।	डिजाइन में व्यक्तित्व का अभाव है। कुछ जानकारी हैं या आकार के लिए उपयुक्त नहीं है। नकल विचारों के साक्ष्य।	कई डिजाइन तत्वों या रूचि का अभाव/न्यूनतम अतिरिक्त सुविधाएं या दूसरों के विचारों की नकल का अभाव/व्यक्तित्व के लिए बहुत ज्यादा प्रयास नहीं दिखाया।
उत्पादन/ प्रयास	कक्षा में समय का अधिकतम उपयोग करता है। हमेशा काम समय और प्रयास कार्य के निष्पादन में स्पष्ट हो रहे हैं।	काम के लिए कक्षा के समय का उपयोग करता है लेकिन कभी–कभी दूसरों के लिए विचलित होता है। कार्य उत्सुकता से कम पड़ता है।	कठिनाई से परियोजना पर ध्यान केन्द्रित किया है। आसानी से दूसरों से विचलित।	शायद ही काम की गुणवत्ता का खयाल रखा। इसे पूरा करने के लिए कोई अतिरिक्त प्रयास का उल्लेख नहीं किया है।
काम की आदतें/ अभिवृत्ति	सम्मान और सकारात्मक सुझाव के लिए खुला है। कार्य क्षेत्र अच्छी तरह से साफ करते हैं।	सम्मान और सुझावों को स्वीकार करता है। ज्यादातर कार्यक्षेत्र अच्छी तरह से साफ करते हैं।	सुझाव के लिए खुलेपन का अभाव है। सफाई के काम के लिए कठिनाई होना।	दूसरों के लिए सफाई छोड़ देता है। एक रवैया है और सुझावों द्वारा सहायता के लिए खुला नहीं है।

टिप्पणी

सीखने के लिए आकलन में सहायक मापदंडों का उपयोग करने के लिए शिक्षकों को आगे बढ़ने में सहायता करने के लिए समय की आवश्यकता होती है। न केवल अवधारणा को समझने, आकलन के अवसरों का नियोजन करने और रूब्रिक्स का विकास करने के लिए बल्कि कक्षा में एक अलग प्रकार के संवाद का विकास करने के लिए भी। यह संवाद न केवल शिक्षण–प्रक्रिया और सीखने के लिए आगे की चर्चा करने के लिए रूब्रिक का उपयोग करते हुए शिक्षक और छात्र के बीच हो सकता है, बल्कि स्व– या समकक्ष–आकलन में लगे छात्रों को भी उनकी अपनी शिक्षण–प्रक्रिया को समझने और उसे नियंत्रित करने में मदद करने के लिए शामिल कर सकता है।

रूब्रिक का उपयोग करने का एक उदाहरण

नीचे चिह्नित आवंटन और आकलन रूब्रिक का उपयोग करते हुए शिक्षक और छात्र के बीच संवाद का एक उदाहरण प्रस्तुत है। ऐसी कल्पना करें कि यह वह संवाद है जिसे आप अपने विद्यालय में देखते हैं और सोचें कि शिक्षक को आप क्या प्रतिक्रिया देंगे।

शिक्षक : यह आपकी उत्तर शीट है। पिछले आकलन के बाद से आपका ग्रेड सुधर गया है। इस पर एक नजर डालें और मुझे बताएं कि क्या आप देख सकते हैं कि आपने क्या अच्छा किया है और कहाँ आपको और अधिक सुधार करने की आवश्यकता है।

छात्र : मैं A पाना चाहता था। आपने मुझे B+ दिया है। यह मुझे ठीक नहीं लगता! मैंने हर प्रश्न का उत्तर दिया है। मुझे समझ में नहीं आ रहा है कि मुझसे कहाँ गलती हुई है।

शिक्षक : चलिए एक बार हम सब मिलकर रूब्रिक को देखते हैं। रानी लक्ष्मीबाई के निर्णय के लिए कारणों के क्रम के विषय में दूसरा मापदंड।

छात्र : मेरे अनुसार यही सही क्रम है!

शिक्षक : मैं समझता हूं कि आपको लगता है कि आपके अनुसार आपका क्रम ही सही है। इतिहास में हमें अकसर अपने दायरे से बाहर निकलकर उन लोगों के दृष्टिकोण पर विचार करना होता है जो निर्णय लेते हैं। अब हम देखते हैं। आप यह क्यों सोचते हैं कि आपको तत्काल कारण से शुरू करना चाहिए और फिर उन कारणों पर चर्चा करनी चाहिए जिनकी वजह से संघर्ष हुआ।

छात्र : वास्तव में तत्काल कारण आम तौर पर महत्वहीन होता है। आप जानते हैं कि वर्षों से किए जा रहे अन्यायपूर्ण निर्णयों से वे नाराज थे और उन्होंने गोलियों के बारे में अफवाहों का उपयोग एक बहाने के रूप में किया।

शिक्षक : आप वाकई में परेशान हैं लेकिन आप सीधा–सीधा सोच रहे हैं! आपका अनुमान बिल्कुल ठीक है! इसलिए जब आप तत्काल कारण से शुरू करते हैं तो आप एक तरह से बहाने को महत्व दे रहे होते हैं। फिर आप व्यवस्थित ढंग से उन कारणों की तलाश करते हैं जो समय के साथ एकत्र हो रहे थे। यदि आप इस मामले में कुछ कारणों पर नजर डालते हैं, तो आप एक अनुक्रम की पहचान कर सकते हैं जो उनमें से एक को सबसे महत्वपूर्ण कारण बनाता है।

छात्र : अब मैं आपका मतलब समझ रहा हूं। तो मुझे कारणों का अनुक्रम बनाने के तरीके के बारे में सावधान रहना चाहिए और मेरे पास अनुक्रम बनाने का भी औचित्य होना चाहिए!

शिक्षक : बिल्कुल। यदि आप ऐसा करते हैं तो आगे के आकलन में आपको A न देने का मेरे पास कोई कारण नहीं होगा। आपने इसे अच्छी तरह से लिखा है।

टिप्पणी

छात्र : बहुत–बहुत धन्यवाद! यदि मैं इन उत्तरों को अधिक विचारपूर्ण क्रम में लिखूं, तो क्या आप उन पर एक नजर डालेंगे?

शिक्षक : अवश्य! उन्हें घर पर करें और कल मुझे दिखाएं।

छात्र : फिर से धन्यवाद, यह बात वाकई में उपयोगी थी!

छात्रों की प्रगति की निगरानी करने के लिए आकलन डेटा का उपयोग करना

विद्यार्थियों को पूर्ण रूप से विकसित होने में सहायता करने के साथ–साथ, शिक्षण–प्रक्रिया का आकलन शिक्षकों को छात्रों की प्रगति के बारे में नियमित रूप से आकलन डेटा एकत्र करने का अवसर प्रदान करता है। इसके परिणामस्वरूप छात्र के लिए उपयुक्त प्रतिक्रिया संभव होती हैं, जिसे विभेदन भी कहते हैं।

कुछ छात्र अपनी शिक्षण–प्रक्रिया में क्रमिक वृद्धि करते हैं; कुछ तेजी से सुधार करते हैं। जो शिक्षक यह जानते हैं कि छात्र किस प्रकार से सीखते हैं उनके पास अनेक प्रकार की गतिविधियां होती हैं जिन्हें कक्षा की विभिन्न जरूरतों को पूरा करने के लिए एक साथ किया जा सकता है। इसका लक्ष्य हर छात्र को उपयुक्त ढंग से चुनौती देना होता है, ताकि कोई भी छात्र पीछे न रह जाए, और वे प्रभावी ढंग से शिक्षा ग्रहण कर सकें।

शिक्षक को प्रत्येक छात्र की आधाररेखा का पता होना चाहिए। इससे शिक्षक अपनी गतिविधियों को नियोजित करने में सक्षम होते हैं ताकि वे उनके सभी छात्रों के लिए उपयुक्त हों, और सभी छात्रों के प्रभावी ढंग से सीखने में सहायता करने के लिए वे इन गतिविधियों पर निर्माणात्मक प्रतिक्रिया को विभेदित कर सकते हैं।

2.4.6 पढ़ने की समझ में क्या और कैसे मूल्यांकन करें : सूचना, शब्द–भंडार, व्याकरण एवं रचना

पढ़ना सीखना एवं उसका मूल्यांकन करना दोनों ही साथ–साथ चलने वाली प्रक्रियाएं हैं। इस संदर्भ में कुछ बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

- मूल्यांकन सीखने–सिखाने की प्रक्रिया का हिस्सा है। यह सतत प्रक्रिया है।
- मूल्यांकन से अभिप्राय है विभिन्न पद्धतियों का प्रयोग करते हुए बच्चों के सीखने की प्रगति संबंधी सूचनाओं को हासिल करना और उसके आधार पर उनको रचनात्मक पृष्ठभूमि देना।
- मूल्यांकन सिर्फ इसलिए नहीं किया जाता कि हम ये पता लगा सकें कि बच्चे क्या सीख रहे हैं और कितना सीख चुके हैं बल्कि यह भी समझना होता है कि

बच्चे कैसे सीख रहे हैं। बच्चों की सफलता या कठिनाइयों एवं आत्मविश्वास के स्तर को पहचानना भी जरूरी होता है।

- मूल्यांकन बच्चों के सीखने की गुणवत्ता को भी सुनिश्चित करता है।
- मूल्यांकन, भाषा के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों के संदर्भ में गतिविधियों और पद्धतियों की प्रभावशीलता को मापने में भी मदद करता है।

टिप्पणी

मूल्यांकन बच्चों की जरूरतों, रुचियों और पूर्व अनुभवों का पता लगाने के लिए भी किया जाता है। वे क्या जानते हैं और क्या कर सकते हैं ये मूल्यांकन के द्वारा समझने में मदद मिलती है। अब हम इस बात पर विचार करेंगे कि किसी विद्यार्थी को कक्षा में पढ़ाई गई सामग्री का मूल्यांकन कैसे करें? मूल्यांकन करते हुए वे कौन से आयाम होंगे जिन पर शिक्षक को अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए? क्या शिक्षक पाठ्य सामग्री में दी गई सूचना पर अधिक ध्यान दें या विद्यार्थी के शब्द भंडार पर? या फिर वह व्याकरण एवं रचना प्रक्रिया पर अधिक ध्यान दें? पढ़ने की समझ का मूल्यांकन किस आधार पर करें? इसके लिए पढ़ने से जुड़े उद्देश्यों को समझने की आवश्यकता है जो निम्नलिखित हैं–

- परिवेश में उपलब्ध संदर्भों, चित्रों या अन्य लिखित सामग्री से परिचित होना और अनुमान से पढ़ने का प्रयास करना।
- पढ़ने को दैनिक जीवन से संबंधित करना, घर और बाहर दोनों स्थान पर।
- लिपि चिह्नों को देखकर और उनकी ध्वनियां सुन और समझकर उनमें सहसंबंध बनाते हुए पढ़ने का प्रयास करना।
- सुनी हुई कहानियों/कविताओं को लिखित रूप में देखने पर उनसे अपने अनुभवों को जोड़ पाना।
- विषय सामग्री के माध्यम से नए शब्दों के अर्थ जानने की कोशिश करना।
- मुख्य विचार या मुख्य बिन्दु को ढूंढ़ने के लिए विषय सामग्री की गहराई से जांच करना।
- दूसरों के विचारों को पढ़कर समझने का प्रयास करना।
- पुस्तकों के प्रति रुचि जाग्रत होना।
- पाठ्यपुस्तक की विभिन्न विधाओं से परिचित होना और उन विधाओं की दूसरी रचनाएं पढ़ने के लिए प्रेरित होना।

हम सब जानते हैं कि पढ़ना आना कितना महत्वपूर्ण है। विद्यालय की विभिन्न गतिविधियों में पढ़ना सिखाना एवं सीखना सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। हमारे लिए यह समझना भी जरूरी है कि अधिकांश बच्चे पढ़ना सीखने की शुरुआत विद्यालय आने से पूर्व ही कर चुके होते हैं भले ही ये शुरुआत पुस्तकों से न हुई हो। समझ कर पढ़ना हमारे व्यक्तित्त्व को सुदृढ़ बनाता है और हमें आत्मविश्वास देता है। पढ़ने की प्रक्रिया में हम न केवल इस सजीव संसार में अपितु उस लोक में भी पहुंच जाते हैं जो हमसे दूर है। फ्रेंक स्मिथ इस संदर्भ में लिखते हैं कि "पढ़ने की प्रक्रिया में पाठक मुख्य भूमिका निभाते हैं या ऐसा कहा जा सकता है कि पढ़ने का सारा दारोमदार पढ़ने वाले पर ही

होता है।" उनके अनुसार पढ़ना केवल वर्ण या शब्दों को पढ़ लेना ही नहीं है, पढ़ना है समझकर पढ़ना, शब्दों में ऐसा अर्थ ढूंढ़ना जिसका पाठक के साथ एक आत्मीय रिश्ता होता है। वास्तव में पढ़ना बेहद ही सृजनात्मक और संरचनात्मक क्रियाकलाप है। पढ़ना एक ऐसी क्षमता है जिसमें पाठक के अपने पूर्व अनुभव भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जो पाठक दी गई पठन सामग्री को समझ नहीं पाता उसके लिए केवल वर्णों और शब्दों की पहचान एक अर्थहीन क्रिया है। हमारे पास पढ़ने के मुख्यतः दो उद्देश्य होते हैं– हम या तो जानकारी हासिल करने के लिए पढ़ते हैं या फिर अपने ज्ञान के विस्तार के लिए पढ़ते हैं। वर्णों को पहचानना ज्ञान पर आधारित प्रक्रिया है और यह अपने आप में पूर्ण क्रिया भी है, जबकि पढ़ने में शामिल है समझ। समझ के साथ, अपने पूर्व अनुभवों और अनुमान की मदद से पढ़ना और समझना। पढ़ने की इस प्रक्रिया में वर्तनी, शब्दों का अर्थ, शब्द पहचान का भी अपना महत्व है। हालांकि एक कुशल पाठक पढ़ते समय अपरिचित शब्दों पर अधिक ध्यान न देते हुए, संदर्भ से ही उसके अर्थ का अंदाजा लगाते हुए आगे बढ़ जाता है और अपनी रुचि एवं एकाग्रता में कोई बाधा नहीं आने देता। वे अपरिचित शब्दों का अर्थ या तो संदर्भ से निकाल लेते हैं या फिर कई बार शब्दकोश का प्रयोग भी कर लेते हैं। कुल मिलाकर बात यह है कि एक कुशल पाठक अपना सारा ध्यान पढ़कर समझने पर केन्द्रित करता है।

टिप्पणी

> शिक्षक शिक्षाशास्त्र के बुनियादी कौशलों में कमजोर होते हैं, यानी इस समझ की उनमें कमी पाई जाती है कि कहां विद्यार्थी समझ रहा है, कहां उपयुक्त प्रश्न पूछ रहा है। पढ़ना सीखने की प्रक्रिया की समझ का उनमें अभाव होता है जिसमें नीचे से ऊपर की ओर जाने की प्रवृत्ति होती है, जिसमें पहचान और पाठ के अर्थ–निर्माण की प्रक्रिया शामिल होती है। उनमें कई बार कक्षा प्रबंधन के कौशलों का भी अभाव होता है। उनका ध्यान गलतियों पर अधिक होता है न कि कल्पनाशीलता और अभिव्यक्ति पर।
>
> स्रोत : राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005

विद्यालयों में अक्सर पढ़ना सिखाने के लिए जिन तरीकों का प्रयोग किया जाता है, विद्यार्थी को उन तरीकों का ही पालन करना पड़ता है। ये तरीके यांत्रिक, उबाऊ एवं रटंत होते हैं। उदाहरण के लिए वर्णमाला का रटना, ध्वनि, अक्षर की पहचान, शुद्ध उच्चारण, व्याकरण के नियम इत्यादि। शिक्षक को यह समझना होगा कि यह सब यांत्रिक क्रियाएं पढ़ना सीखने की क्रिया का आधार नहीं हैं। समझ के साथ पढ़ना एक कला है। इसलिए पढ़ने की समझ के मूल्यांकन के लिए सूचना, शब्द–भंडार, व्याकरण एवं रचना आदि से अधिक बच्चे की समझ विकसित हुई है या नहीं इस पर ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके लिए विद्यालयों में पढ़ने की संस्कृति विकसित करने की आवश्यकता है। पढ़ने की संस्कृति बनाने के लिए बच्चों का पढ़ने को लेकर उत्साह बनाए रखने के लिए कुछ गतिविधियों का होना आवश्यक है। हमें पढ़ने का ऐसा माहौल बनाना होगा जहां बच्चे सहज तरीके से पढ़ना सीख पाएं। ऐसे में बच्चों को एक छपे शब्दों से सम्पन्न वातावरण देना बहुत आवश्यक है। कक्षा में पुस्तकों की मौजूदगी, दीवारों पर सोच–समझ कर करीने से लगाई छपी/लिखी सामग्री, बैठने की व्यवस्था में बदलाव एवं शिक्षकों का पाठ्यपुस्तकों की सीमाओं को लांघना भी अति आवश्यक है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

8. विद्यालयी परिप्रेक्ष्य में सबसे महत्वपूर्ण क्रिया क्या है?

(क) लिखना (ख) पढ़ना

(ग) बोलना (घ) सुनना

9. भाषा के प्रमुख कौशल कितने हैं?

(क) दो (ख) तीन

(ग) चार (घ) छह

10. मौखिक अभिव्यक्ति के अंतर्गत भाषा का कौन–सा कौशल आता है?

(क) श्रवण (ख) वाचन

(ग) पठन (घ) लेखन

2.5 पाठ्यचर्या क्षेत्रों में भाषाई प्रयोग

भाषा को सम्प्रेषण का माध्यम माना जाता है। इसके अतिरिक्त भाषा के ऐसे बहुत सारे आयाम हैं जो हमारे जीवन एवं समाज से भी जुड़े हैं। हम भाषा को अपने चारों तरफ देख सकते हैं। बच्चे को जब भाषा सिखाई जाती है तो किसी एक तरीके से वह भाषा नहीं सीखता, बल्कि अपने आस–पास, अपने परिवार, अपने समाज के सभी हिस्सों से भी वह भाषा सीख रहा होता है। ऐसे में भाषा सिर्फ सम्प्रेषण का माध्यम ही नहीं रह जाती बल्कि भाषा के चारों कौशलों के अतिरिक्त अन्य कौशलों को सीखने–सिखाने में भी भाषा मदद करती है। ऐसा ही एक कौशल है आलोचनात्मक चिंतन।

2.5.1 आलोचनात्मक चिंतन

आलोचनात्मक चिंतन से अभिप्राय है– किसी विषय–वस्तु पर आलोचना के साथ चिंतन करना। अर्थात किसी विषयवस्तु के अर्थ, अवधारणा, पक्ष, विपक्ष, उसके गुण एवं दोष इत्यादि सभी पक्षों पर विचार करना ही आलोचनात्मक चिंतन कहलाता है। यह अधिगम के सबसे आवश्यक तत्त्वों में से एक है। विश्लेषण और तर्क के क्षेत्र में चिंतन के स्तर को बढ़ाने के लिए आलोचनात्मक चिंतन की आवश्यकता होती है। आलोचनात्मक चिंतन समाज के विभिन्न मुद्दों को समझने में विद्यार्थियों की मदद करता है एवं उनका न्यायसंगत प्रणाली से विश्लेषण करने में भी सहायता करता है। इस प्रकार हम आलोचनात्मक चिंतन को एक ऐसे चिंतन के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जो स्व–निर्देशित है। यह किसी निष्कर्ष तक पहुंचने के लिए सक्रिय रूप से और कुशलतापूर्वक संकल्पना, आवेदन, विश्लेषण, संश्लेषण और मूल्यांकन करने की प्रक्रिया है।

आलोचनात्मक चिंतन के आवश्यक तत्त्व

किसी भी विषय में आलोचनात्मक चिंतन के लिए निम्नलिखित तत्वों का होना आवश्यक है–

टिप्पणी

- **तर्कसंगतता** : आलोचनात्मक चिंतन किसी विशेष मुद्दे/विषय के गुण और दोष दोनों पर विचार करता है। इस प्रकार, निर्णय तर्कसंगत बनता है।
- **वैज्ञानिक दृष्टिकोण** : आलोचनात्मक चिंतन किसी विशेष समस्या के बारे में कारण और प्रभाव संबंध विकसित करने में विद्यार्थी की मदद करता है जिसके परिणामस्वरूप एक विद्यार्थी में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न होता है।
- **प्रासंगिकता** : आलोचनात्मक चिंतन शिक्षण की उपयुक्त विचारधारा का चयन करके शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया में सहायता करता है। यह छात्रों द्वारा कक्षा में तर्क देने और सबसे प्रासंगिक विचारधारा को अपनाने की सराहना करता है।

आलोचनात्मक चिंतन के लाभ

आलोचनात्मक चिंतन के लाभ निम्नलिखित हैं–

- आलोचनात्मक चिंतन विद्यार्थी को अवधारणाओं, अनुप्रयोगों और विचारों का विस्तार करने में सहायता करता है।
- आलोचनात्मक चिंतन भाषा कौशल, चिंतन कौशल और सहकारी अधिगम कौशल के विकास में सहायता करता है।
- आलोचनात्मक चिंतन विद्यार्थियों के तर्कों को समझने और मूल्यांकन करने में मदद करता है।
- आलोचनात्मक चिंतन विद्यार्थियों के विश्वास को समझने और मूल्यांकन करने में मदद करता है।
- यह सही या तर्कसंगत निर्णय लेने और गलत निर्णय को अस्वीकार करने में विद्यार्थियों की मदद करता है।
- यह एक विद्यार्थी को अपने दैनिक जीवन में मूर्खतापूर्ण निर्णय लेने से बचाने में मदद करता है।

कक्षा में आलोचनात्मक चिंतन को बढ़ावा देने के लिए रणनीतियां

कक्षा में आलोचनात्मक चिंतन को बढ़ावा देने के लिए शिक्षक विभिन्न रणनीतियां अपना सकते हैं–

- एक शिक्षक को विद्यार्थियों में आलोचनात्मक चिंतन विकसित करने के लिए अधिक से अधिक अवसर उत्पन्न करने चाहिए।
- एक शिक्षक को चर्चा, बहस, रचनात्मक, लेखन, क्षेत्रीय यात्रा, सर्वेक्षण आदि आयोजित करने चाहिए।
- एक शिक्षक को विद्यार्थियों को तर्क करने के अवसर भी प्रदान करने चाहिए।
- एक शिक्षक को तर्क के बाद विद्यार्थियों की समस्याओं का समाधान करने में उनका मार्गदर्शन करना चाहिए।
- एक शिक्षक को कक्षाओं में विविधता और बहुलता बनाए रखने का सदैव प्रयास करना चाहिए।

टिप्पणी

छात्रों में आलोचनात्मक चिंतन विकसित करने की गतिविधियां

छात्रों में आलोचनात्मक चिंतन विकसित करने में सहायता प्रदान करने वाली विभिन्न गतिविधियां हैं–

- शिक्षक को विद्यार्थियों के बीच अनेक दृष्टिकोण विकसित करने के लिए कई उदाहरणों को प्रयोग में लाना चाहिए।
- एक शिक्षक को जोखिम लेने की भावना विकसित करनी चाहिए। जो विद्यार्थी को आत्म–जागरूक बनाती है ताकि यदि एक विचार, अवधारणा, समाधान आदि को लागू करने या नियोजित करने में असफलता की संभावना हो तो एक शिक्षक को उन्हें असफलता पर भी प्रोत्साहित करना चाहिए और उन्हें पुनः कार्य करने के लिए प्रेरित करना चाहिए।
- एक शिक्षक को तर्क पर आधारित विधियों की बजाय शिक्षण की अवलोकन विधि पर ध्यान देना चाहिए।

2.5.2 विद्यालयी विषयों से अलग–अलग विषयों के पाठ

वैज्ञानिक युग में जीते हुए हम इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं। विज्ञान हमारे दैनिक जीवन में रच–बस गया है। विज्ञान ने हमारे रहन–सहन को पूरी तरह से परिवर्तित कर दिया है। यह सच है कि वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय प्रगति किसी भी समाज की जीवन–शैली और सोच को प्रभावित करती है। वैज्ञानिक दृष्टि के अभाव में कोई भी समाज पूर्णतः विकसित नहीं हो सकता। हमारा समाज कई बार अंधविश्वासों के जंजाल में फंस जाता है जो सम्पूर्ण समाज के विकास में बाधा बनता है। यदि वास्तविक प्रगति करनी है तो कदम–कदम पर एक–एक बात को सच एवं तर्क की कसौटी पर परखना होगा। ऐसा तभी संभव है जब हमारे अंदर वैज्ञानिक दृष्टिकोण को विकसित किया जाए। विज्ञान में क्यों तथा कैसे का विशेष स्थान है। इसमें हम किसी भी बात को आंख मूंदकर, बिना सवाल किए या बिना प्रयोग द्वारा परखे नहीं मानते हैं।

विज्ञान के सीखने में एक नई भाषा–विज्ञान की भाषा को जानना शामिल होता है। हालांकि विज्ञान को सीखने में अधिकांश विद्यार्थियों के लिए भाषा एक प्रमुख बाधा हो सकती है। विद्यार्थियों के द्वारा वैज्ञानिक भाषा के इस्तेमाल में अनुभव की जाने वाली समस्याएं, विज्ञान को समझने और उसकी तार्किकता के संबंध में प्रमुख अवरोध हैं। अच्छे शिक्षकों को उनके विद्यार्थियों द्वारा वैज्ञानिक शब्दों को समझे जाने की जानकारी होती है। शिक्षकों के पास विशिष्ट शब्दों के लिए समझ विकसित करने के लिए रणनीतियां होती हैं। अब हम कुछ उदाहरणों के द्वारा यह समझने का प्रयास करेंगे कि विद्यार्थियों की विज्ञान के प्रति समझ का विकास करने में भाषाएं किस प्रकार मुख्य भूमिका निभाती हैं।

यहां हम कक्षा–9 की विज्ञान की पाठ्यपुस्तक का एक पाठ 'जीवन की आधारभूत इकाई : कोशिकाएं' का उदाहरण लेते हुए भाषा से जुड़े दृष्टिकोणों एवं तकनीकों को समझने का प्रयास करेंगे। इसके लिए सर्वप्रथम कुछ बातों का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है–

- हम जानते हैं कि भाषा का विकास और किसी अवधारणा का विकास एक–दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं। हमें विचार करने के लिए भाषा की जरूरत होती है।

इसलिए जब भी विज्ञान की पाठ योजना बनाई जाए तो विद्यार्थियों के भाषा के विकास पर भी विचार किया जा सकता है।

- एक कक्षा में अनेक विद्यार्थी बहुभाषी हो सकते हैं। इस बात की पूरी संभावना है कि कक्षा की भाषा उस भाषा से अलग हो सकती है जिसका इस्तेमाल बहुभाषी विद्यार्थी अपने पाठों के अतिरिक्त करते हैं। इसलिए इस बात का विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता है कि पाठों के बीच में समय का अंतराल रखें जिससे विद्यार्थी नए शब्दों को सीख सकें और उनका अभ्यास कर सकें।
- कक्षा में विद्यार्थियों को समूहों में बातचीत करके शब्दों का इस्तेमाल करने का अवसर सकते हैं। नए शब्द समझने के साथ–साथ कभी–कभी उसका उच्चारण भी कठिन हो सकता है। लिखित कार्यों में शब्दों के इस्तेमाल से भी आपके विद्यार्थियों को उचित वैज्ञानिक अर्थों को समझने का विकास करने में सहायता मिलेगी। ध्यान देने योग्य बात यह है कि यदि विद्यार्थी विज्ञान के महत्वपूर्ण शब्दों को नहीं समझते हैं, तो वैज्ञानिक अवधारणाओं को समझने की उनकी समझ सीमित होगी।

टिप्पणी

आइए अब पाठ के संदर्भ में भाषा के आयामों को समझने का प्रयास करते हैं।

1. कठिन शब्दों की समझ बनाना : विज्ञान की भाषा विशिष्ट एवं तकनीकी भाषा होती है, जिसके कारण यह पाठ्यक्रम का खास विषय होती है। विद्यार्थियों द्वारा वैज्ञानिक शब्दावली को समझने में तीन प्रकार की समस्याओं का सामना किया जाता है।

(क) **अपरिचित शब्द** : विज्ञान में चिर–परिचित वस्तुओं के लिए वैज्ञानिक शब्दों का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, पानी के स्थान पर 'जल', प्रकाश के स्थान पर 'फोटो' एवं छोटा कहने के लिए 'माइक्रो' जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है। तब इनमें से अनेक शब्दों को जटिल, संयुक्त शब्दों को बनाने के लिए एक साथ जोड़ दिया जाता है जैसे फोटोसिन्थेसिस (प्रकाश–संश्लेषण), माइक्रोस्कोप (सूक्ष्मदर्शी) इत्यादि।

(ख) **विशेषज्ञतापूर्ण अर्थ** : विज्ञान में अनेक शब्दों के दैनिक जीवन में अर्थ होते हैं और साथ ही उनके विशिष्ट वैज्ञानिक अर्थ भी होते हैं, जैसे ऊर्जा, आचरण, क्षमता आदि। प्रायः विद्यार्थियों को गलतफहमियां हो जाती हैं कि कौन से अर्थ का प्रयोग किया जाए तथा उन्हें भिन्न–भिन्न संदर्भों में स्वीकार्य वैज्ञानिक शब्दों को पढ़ाने की आवश्यकता होती है।

(ग) **कठिन अवधारणाएं** : विज्ञान में अनेक गैर–तकनीकी शब्दों का इस्तेमाल किया जाता है, जैसे 'प्रकाशन (इलुमिनेट)', 'घटक (फैक्टर)' या 'सिद्धांत (थ्योरी)'। अक्सर शिक्षक यह मान लेते हैं कि उनके विद्यार्थी ऐसे शब्दों के अर्थ समझते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि उन्हें पढ़ना आसान होता है। लेकिन अक्सर इन शब्दों का आशय जटिल कठिन वैज्ञानिक अवधारणाओं से होता है। विद्यार्थियों को सार रूप में प्रस्तुत अवधारणाओं की केवल आंशिक या गलत समझ होती है।

2. जटिल संयुक्त शब्दों को समझना : अंग्रेजी में अनेक वैज्ञानिक शब्दों को ग्रीक या लैटिन शब्दों के उद्‌गम (स्रोत) या सूत्रों के संयोजन से व्यवस्थित रूप से तैयार किया गया है। उदाहरण के लिए, 'क्लोरोफिल 'Chlorophyll' में दो हिस्से हैं : 'क्लोरो

टिप्पणी

(Chloro)' जिसका अर्थ है हरा, और 'फिल (Phyll)' जिसका अर्थ है पत्ता। इसलिए, शब्द के अर्थ के संबंध में बेहतर अर्थ का आशय हरी पत्तियों से हो सकता है। शब्दों के अर्थ को समझने में विद्यार्थियों की मदद करने के लिए प्रयोग की जाने वाली यह अच्छी कार्यनीति है। यदि विद्यार्थी स्वयं किसी शब्द का अर्थ समझ लेते हैं, तो इस बात की संभावना अधिक है कि वे भविष्य में इसे याद रख पाएंगे। इससे उन्हें समान शब्दों को समझने में मदद मिलेगी तथा वे पाठयक्रम के विभिन्न हिस्सों के बीच में सम्बन्ध भी बना पाएंगे। उदाहरण के लिए, 'फोटो (Photo)' का संबंध जीवविज्ञान में 'फोटोसिंथेसिस (Photosynthesis)' से और भौतिकी में, 'फोटोन (photon)' या 'फोटोडायोड (photodiode)' से होता है।

गतिविधि : अपरिचित शब्दों का अर्थ समझना

यह एक छोटी गतिविधि है जिसे आप पाठ के अंत में कर सकते हैं। इसका उद्देश्य यह है कि अपने विद्यार्थियों को यह समझने में मदद करें कि वे एकमात्र ऐसे व्यक्ति नहीं हैं जो किसी खास शब्द का अर्थ नहीं समझते हैं। ऐसी कार्यनीतियों को विकसित करने के लिए प्रोत्साहित करें जिससे वे इस बाद में अंदाज लगा सकें कि शब्द का क्या अर्थ हो सकता है।

अपने विषय से संबंधित कुछ शब्दों को ब्लैकबोर्ड पर लिखें। आप शब्दों को अपनी पाठयपुस्तक के अध्याय से चुन सकते हैं। उदाहरण के लिए, आप चुन सकते हैं–

- फोटोट्रॉपिक
- फोटोसिंथेसिस
- थर्मोक्रोमिक
- फोटोक्रोमिक

अपने विद्यार्थियों को जोड़ी में निम्नलिखित सूत्रों से शब्दों के अर्थ को बताने के लिए कहें–

- 'photo' – प्रकाश (light)
- 'chrom' – रंग (colour)
- 'therm' – ताप (heat)
- 'synthesis' – बनाना या सृजित करना (make or build up)
- 'tropic' – टर्निंग (turning)

यदि आपके पास अलग शब्द हैं, तो आपको अपने विद्यार्थियों को कुछ अधिक 'शब्द सूत्र' देने होंगे।

3. दोहरे अर्थ वाले वैज्ञानिक शब्द : प्रायः वैज्ञानिक भाषा और शब्दों का दैनिक जीवन में दिए गए अर्थों के बीच में द्वंद्व होता है। उदाहरण के लिए, वे 'कार्य' शब्द को नियोजन या फील्ड में गतिविधि से जुड़ा हुआ मानते हैं। यद्यपि, उन्हें यह समझना चाहिए कि विज्ञान में, 'कार्य करना' का अर्थ बहुत ही विशिष्ट अर्थ है और इसमें दूरी के संदर्भ में बल का प्रयोग होता है। ऐसे ही अन्य शब्दों में 'ऊर्जा', 'ऊतक' और 'बल' शामिल हैं। आप पाठयचर्या में दूसरे शब्दों पर विचार कर सकते हैं।

टिप्पणी

अपने विद्यार्थियों को शब्दों के उद्गम के बारे में समझाना उपयोगी होता है। 'जीवन की आधारभूत इकाई' कोशिकाओं से संबंधित है, और 'कोशिकाओं' का वैज्ञानिक शब्द के रूप में पहली बार इस्तेमाल रॉबर्ट हुक द्वारा किया गया था जब उन्होंने 1665 में सूक्ष्मदर्शी के माध्यम से कॉर्क के एक टुकड़े को देखा था। कोशिकाओं के अध्ययन से अनेक नए शब्द जुड़े हैं तथा आपको यह सुनिश्चत करने की आवश्यकता है कि आपके विद्यार्थियों के पास उनके इस्तेमाल के संबंध में अभ्यास करने का अवसर है।

गतिविधि : कोशिका विषय के आरम्भ में कठिन शब्दों की पहचान करना।

'जीवन की आधारभूत इकाई' को पढ़ाने की तैयारी करने के लिए गतिविधि आपके द्वारा स्वयं करने या किसी सहकर्मी के साथ करने के लिए है। इस गतिविधि का उद्देश्य, इस विषय में वैज्ञानिक शब्दों को समझने की आपकी जानकारी की जांच करना और आपको उन कठिनाइयों के बारे में सोचने में मदद करना है जिनका सामना आपके विद्यार्थियों द्वारा किया जाएगा।

- जिस अध्याय को आप पढ़ा रहे हैं, उसे अपनी पाठयपुस्तक में पढ़ें तथा कोशिकाओं के बारे में सीखने से संबंधित सभी तकनीकी शब्दों को लिखें।
- हाईलाइटर पेन या पैंसिल का प्रयोग करते हुए, उन शब्दों को हाईलाइट करें जिन्हें विद्यार्थियों द्वारा पहले देखा गया हो सकता है, वह पूर्णतया किसी अलग संदर्भ में हो।
- उन विशिष्ट वैज्ञानिक शब्दों को रेखांकित करें जो उनके लिए नए हो सकते हैं।
- अपने आप एक शब्दावली तैयार करें– परिभाषा सहित शब्दों की सूची। प्रत्येक परिभाषा को जितना सरल हो सके, उतना सरल लिखने की कोशिश करें। यदि आप ऐसी किन्हीं सादृश्यताओं के बारे में सोच सकते हैं जो सहायक हो सकती हैं, तो उन्हें भी लिख लें। उदाहरण के लिए, कोशिका झिल्ली एक छलनी की तरह काम करती है। छिद्रों का आकार ऐसा होता है कि जिसमें से कुछ अणु गुजर सकते हैं, और कुछ नहीं गुजर सकते हैं।

जब आप नए शब्दों या ऐसे शब्दों, जिनके विशिष्ट वैज्ञानिक अर्थ हैं, का इस्तेमाल करना शुरू करते हैं, तो इस शब्दावली को कक्षा में इस्तेमाल करने के लिए अपने पास रखें। आप अपने विद्यार्थियों को उनकी अपनी शब्दावलियों का विकास करने के लिए प्रेरित कर सकते हैं।

4. विज्ञान में बोलना एवं सुनना : किसी भी नई भाषा को सीखने वाले विद्यार्थियों के लिए इसको बोलने का अभ्यास करने का अवसर तथा इसे सुनने का अवसर होना चाहिए। ऐसा तब भी सच होता है कि जब विद्यार्थी विज्ञान की भाषा सीखते हैं।

ऐसे अनेक शब्द खेल हैं जिन्हें आप अपने विद्यार्थियों के साथ खेल सकते हैं। 'खेल का इस्तेमाल करना' इकाई में अधिक विचार दिए गए हैं। विद्यार्थियों के लिए खेल बहुत प्रेरणादायक हो सकते हैं और उन्हें सीखने का अवसर भी मिलता है। अक्सर उन्हें यह आभास ही नहीं होता कि वे सीख रहे हैं क्योंकि यह सब कुछ मौज मस्ती में होता है। शब्द खेल से विद्यार्थियों को विज्ञान के बारे में बातचीत करने का अच्छा अवसर

मिलता है। इससे उनके समझने में भी मदद प्राप्त होगी। अपने विद्यार्थियों को नए शब्दों का अभ्यास करने का मौका देने और इस बात की जांच करने के लिए कि वे इस बात को समझते हैं कि उनके क्या अर्थ हैं, किसी जटिल चित्र पर लेबल लगाने के लिए मिलजुल कर काम करना एक अच्छा तरीका है।

टिप्पणी

यदि आपके विद्यार्थियों के लिए वैज्ञानिक शब्दों का उच्चारण करना कठिन लगता है, तो आप उनको मोबाइल फोन पर अभ्यास करने और अपनी आवाज को रिकार्ड करने के लिए हमेशा प्रोत्साहित कर सकते हैं। वे एक–दूसरे की रिकॉर्डिंग को सुन सकते हैं और फीडबैक दे सकते हैं।

5. सीखने के लिए बातचीत : सीखने के लिए बातचीत क्यों महत्वपूर्ण है?

बातचीत मानव विकास का हिस्सा है, जो सोचने–विचारने, सीखने और विश्व का ज्ञान प्राप्त करने में हमारी मदद करती है। लोग भाषा का इस्तेमाल तार्किक क्षमता, ज्ञान और ज्ञान को विकसित करने के लिए औजार के रूप में करते हैं। अतः विद्यार्थियों को उनके शिक्षण अनुभवों के भाग के रूप में बात करने के लिए प्रोत्साहित करने का अर्थ होगा उनकी शैक्षणिक प्रगति का बढ़ना। सीखे गए विचारों के बारे में बात करने का अर्थ होता है–

- उन विचारों को परखा गया है।
- तार्किक क्षमता विकसित और सुव्यवस्थित है।
- जिससे विद्यार्थी अधिक सीखते हैं।

किसी कक्षा में रटा–रटाया दोहराने से लेकर उच्च श्रेणी की चर्चा तक विद्यार्थी वार्तालाप के विभिन्न तरीके होते हैं। पारंपरिक तौर पर, शिक्षक की बातचीत का दबदबा होता था और वह विद्यार्थियों की बातचीत या विद्यार्थियों के ज्ञान के मुकाबले अधिक मूल्यवान समझी जाती थी। यद्यपि, पढ़ाई के लिए बातचीत में पाठों का नियोजन शामिल होता है ताकि विद्यार्थी इस ढंग से अधिक बात करें और अधिक सीखें कि शिक्षक विद्यार्थियों के पहले के अनुभव के साथ संबंध कायम करें। यह किसी शिक्षक और उसके विद्यार्थियों के बीच प्रश्न और उत्तर सत्र से कहीं अधिक होता है क्योंकि इसमें विद्यार्थी की अपनी भाषा, विचारों और रुचियों को ज्यादा समय दिया जाता है। हम में से अधिकांश कठिन मुद्दे के बारे में या किसी बात का पता करने के लिए किसी से बात करना चाहते हैं, और अध्यापक बेहद सुनियोजित गतिविधियों से इस सहज प्रवृत्ति को बढ़ा सकते हैं।

कक्षा में गतिविधियों के लिए बातचीत की योजना बनाना

कक्षा की गतिविधियों के लिए बातचीत की योजना बनाना महज साक्षरता और शब्दावली के लिए नहीं है, यह गणित एवं विज्ञान के काम तथा अन्य विषयों के नियोजन का हिस्सा भी है। इसे पूरी कक्षा में, जोड़ी कार्य या सामूहिक कार्य में, आउटडोर गतिविधियों में, रोल–प्ले गतिविधियों में, लेखन, वाचन, प्रायोगिक खोज और रचनात्मक कार्य में योजनाबद्ध किया जा सकता है।

यहां तक कि साक्षरता और गणना के सीमित कौशलों वाले नन्हे विद्यार्थी भी उच्चतर श्रेणी के चिंतन कौशलों का प्रदर्शन कर सकते हैं, कि उन्हें दिया जाने वाला कार्य उनके पहले के अनुभव पर आधारित और आनंदप्रद हो। उदाहरण के लिए,

विद्यार्थी चित्रों, रेखाचित्रों से किसी कहानी, पशु या आकृति के बारे में पूर्वानुमान लगा सकते हैं। विद्यार्थी रोल–प्ले के समय कठपुतली या पात्र की समस्याओं के बारे में सुझावों और संभावित समाधानों को सूचीबद्ध कर सकते हैं।

शिक्षक को चाहिए कि वह जो कुछ विद्यार्थियों को सिखाना चाहते हैं, उसके इर्द–गिर्द पाठ योजना बनाएं और इस बारे में सोचें, और साथ ही इस बारे में भी कि किस प्रकार की बातचीत को विद्यार्थियों में विकसित होते देखना चाहते हैं। कुछ प्रकार की बातचीत अन्वेषी होती है, उदाहरण के लिए– 'इसके बाद क्या होगा?', 'क्या हमने इसे पहले देखा है?', 'यह क्या हो सकता है?' या 'आप ऐसा क्यों सोचते हैं कि वह यह है?' कुछ अन्य प्रकार की वार्ताएं ज्यादा विश्लेषणात्मक होती हैं, उदाहरण के लिए विचारों, साक्ष्य या सुझावों का आकलन करना।

टिप्पणी

इसे रोचक, मजेदार और सभी विद्यार्थियों के लिए संवाद में भाग लेने योग्य बनाने की कोशिश करें। विद्यार्थियों को हंसी का पात्र बनने या गलत होने के भय के बिना दृष्टिकोणों को व्यक्त करने और विचारों का पता लगाने में सहज होने और सुरक्षित महसूस करने की जरूरत होती है।

विद्यार्थियों की वार्ता को आगे बढ़ाएं

शिक्षण के लिए वार्ता अध्यापकों को निम्न अवसर प्रदान करती है–

- विद्यार्थी जो कहते हैं उसे सुनना।
- विद्यार्थियों के विचारों की प्रशंसा करना और उस पर आगे काम करना।
- इसे आगे ले जाने के लिए विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करना।

सभी उत्तरों को लिखना या उनका औपचारिक आकलन नहीं करना होता है, क्योंकि वार्ता के जरिए विचारों को विकसित करना शिक्षण का महत्वपूर्ण हिस्सा है। आपको उनके शिक्षण को प्रासंगिक बनाने के लिए उनके अनुभवों और विचारों का यथासंभव प्रयोग करना चाहिए। सर्वश्रेष्ठ विद्यार्थी वार्ता अन्वेषी होती है, जिसका अर्थ होता है कि विद्यार्थी एक–दूसरे के विचारों की जांच करते हैं और चुनौती पेश करते हैं जिससे वे अपने उत्तरों को लेकर विश्वस्त हो सकें। एक साथ बातचीत करने वाले समूहों को किसी के भी द्वारा दिए गए उत्तर को स्वीकार करने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए। आप पूरी कक्षा की सेटिंग में 'क्यों?', 'आपने उसका निर्णय क्यों किया?' या 'क्या आपको उस हल में कोई समस्या नजर आती है?' जैसे जांच वाले प्रश्नों के अपने प्रयोग के माध्यम से चुनौतीपूर्ण विचारशीलता को तैयार कर सकते हैं। आप विद्यार्थियों के समूहों को सुनते हुए कक्षा में घूम सकते हैं और ऐसे प्रश्न पूछकर उनकी विचारशीलता को बढ़ा सकते हैं।

अगर विद्यार्थियों की वार्ता, विचारों और अनुभवों का सम्मान और सराहना की जाती है तो वे प्रोत्साहित होंगे। बातचीत करने के दौरान अपने व्यवहार, सावधानी से सुनने, एक–दूसरे से प्रश्न पूछने, और बाधा न डालना सीखने के लिए अपने विद्यार्थियों की प्रशंसा करें। कक्षा में कमजोर विद्यार्थियों के बारे में सावधान रहें और उन्हें भी शामिल किया जाना सुनिश्चित करने के तरीकों पर विचार करें। कामकाज के ऐसे तरीकों को स्थापित करने में थोड़ा समय लग सकता है, जो सभी विद्यार्थियों को पूरी तरह से भाग लेने की सुविधा प्रदान करते हों।

टिप्पणी

विद्यार्थियों को स्वयं से प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करें

अपनी कक्षा में ऐसा वातावरण तैयार करें जहां अच्छे चुनौतीपूर्ण प्रश्न पूछे जाते हैं और जहां विद्यार्थियों के विचारों को सम्मान दिया जाता है और उनकी प्रशंसा की जाती है। विद्यार्थी प्रश्न नहीं पूछेंगे अगर उन्हें उनके साथ किए जाने वाले व्यवहार को लेकर भय होगा या अगर उन्हें लगेगा कि उनके विचारों का मान नहीं किया जाएगा। विद्यार्थियों को प्रश्न पूछने के लिए आमंत्रित करना उनको जिज्ञासा दर्शाने के लिए प्रोत्साहित करता है, उनसे अपने शिक्षण के बार में अलग ढंग से विचार करने के लिए कहता है और उनके दृष्टिकोण को समझने में आपकी सहायता करता है।

शिक्षक कुछ नियमित समूह या जोड़े में कार्य करने, या शायद 'विद्यार्थियों के प्रश्न पूछने का समय' जैसी कोई योजना बना सकते हैं जिससे विद्यार्थी प्रश्न पूछ सकें या स्पष्टीकरण मांग सकें। आप–

- अपने पाठ के एक भाग को 'अगर आपका प्रश्न है तो हाथ उठाएं' नाम रख सकते हैं।
- किसी विद्यार्थी को हॉट–सीट पर बैठा सकते हैं और दूसरे विद्यार्थियों को उस विद्यार्थी से प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं जैसे कि वे पात्र हों, उदाहरणतः पाइथागोरस या मीराबाई।
- जोड़ों में या छोटे समूहों में 'मुझे और अधिक बताएं' खेल को खेल सकते हैं।
- मूल पूछताछ का अभ्यास करने के लिए विद्यार्थियों को कौन/क्या/कहां/कब/क्यों वाले प्रश्न ग्रिड दे सकते हैं।
- विद्यार्थियों को कुछ आंकड़े (जैसे कि विश्व डेटा बैंक से उपलब्ध डेटा) दे सकते हैं, और उनसे उन प्रश्नों के बारे में सोचने के लिए कह सकते हैं जो शिक्षक के द्वारा इन आकड़ों के बारे में पूछे जा सकते हैं।
- विद्यार्थियों के सप्ताह भर के प्रश्नों को सूचीबद्ध करते हुए प्रश्न दीवार डिजाइन कर सकते हैं।

जब विद्यार्थी प्रश्न पूछने और उन्हें मिलने वाले प्रश्नों के उत्तर देने के लिए मुक्त होते हैं तो उस समय उनकी रुचि और विचारशीलता का स्तर बेहतरीन होता है। जब विद्यार्थी अधिक स्पष्टता और सटीक संवाद करना सीख जाते हैं, तो वे केवल अपनी मौखिक और लिखित शब्दावलियां ही नहीं बढ़ाते हैं, अपितु उनमें नया ज्ञान और कौशल भी विकसित होता है।

6. लेखन : इस बात की संभावना है कि विद्यार्थियों द्वारा अधिकांश लेखन कार्य ब्लैकबोर्ड या पाठयपुस्तकों में से कॉपी करके या आपके द्वारा दिए गए नोट्स को लिख कर किया जाता है। वे प्रश्नों के उत्तर भी लिखेंगे। स्पष्ट रूप से यह महत्वपूर्ण है क्योंकि शिक्षक यह चाहेंगे कि उनके पास उन सभी चीजों का रिकॉर्ड हो जिसका परीक्षा के लिए ज्ञान होना आवश्यक होता है। यद्यपि, अपने विद्यार्थियों को विज्ञान के बारे में उनके स्वयं के शब्दों में लिखने का अवसर देना, साथ ही आपके लिए बहुत सहायक साबित होगा। इससे उन्हें अपने लिए विचारों को तैयार करने का अवसर मिलेगा और आपको उनकी समझ के स्तर के बारे में जानने का अवसर प्राप्त होगा। यदि विद्यार्थी स्वतंत्र रूप से लिखने के आदी नहीं हैं तो राइटिंग फ्रेम से उनकी सोच की प्रक्रिया में सहायता प्राप्त हो सकती है। खाली पेज पर लिखने से शुरुआत करके

गतिविधि को आरम्भ करना अधिकांश विश्वास से भरे विद्यार्थियों के लिए भी कठिन कार्य हो सकता है। राइटिंग फ्रेम एक सांचा होता है जो विद्यार्थियों को किसी खास गतिविधि के लिए संरचना प्रदान करता है और उनका मार्गदर्शन करता है। उन्हें तैयार करना सरल होता है। शिक्षक इसका निर्माण करने के लिए वेब का सहारा ले सकते हैं जहां इंटरनेट पर इसके अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं। कमजोर और तेज विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुरूप आप राइटिंग फ्रेम्स को सरल या कठिन बना सकते हैं।

टिप्पणी

सामाजिक विज्ञान

सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत समाज के विविध आयामों को जानने एवं समझने का मौका मिलता है। सामाजिक विज्ञान के लिए राष्ट्रीय फोकस समूह के आधार पत्र के अनुसार, "एक सार्थक सामाजिक विज्ञान पाठ्यचर्या अपनी पाठ्य सामग्री के चयन व गठन द्वारा विद्यार्थियों में समाज की आलोचनात्मक समझ विकसित करने में समर्थ होती है, अतः यह एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। नए आयामों और सरोकारों को शामिल किए जाने की अपार संभावनाएं हैं, विशेषतः विद्यार्थियों के जीवन के निजी अनुभवों से।" इस दृष्टि से सामाजिक विज्ञान का शिक्षण बेहद महत्वपूर्ण है। यह समाज की संरचना, शासन एवं प्रबंध को समझने में मदद करता है। यह विद्यार्थियों को भारतीय संविधान में प्रतिष्ठित मूल्यों जैसे– न्याय, स्वतन्त्रता, समानता, भाईचारा, एकता आदि से अवगत करवाने के साथ–साथ इनके महत्व को भी रेखांकित करता है।

सामाजिक विज्ञान का क्षेत्र

सामाजिक विज्ञान का क्षेत्र बेहद विस्तृत है। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में मानव एवं समाज, मानव संबंध, संस्थान, परम्पराएं, रीति–रिवाज इत्यादि शामिल हैं।

- सामाजिक विज्ञान मुख्यतः समाज के अध्ययन से संबंधित है। प्रत्येक मनुष्य समाज में रहता है। समाज के विभिन्न आयामों का अध्ययन सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत ही किया जाता है। इसमें मानव समाज की आवश्यकता, मानव समाज के विभिन्न अंग, मानव समाज का प्रारम्भिक रूप एवं मानव समाज का बदलता स्वरूप शामिल है।
- सामाजिक विज्ञान में मानव संबंधों का भी अध्ययन किया जाता है। इसमें मनुष्य का मनुष्य के साथ, मनुष्य का समाज के साथ, मनुष्य का अन्य संस्थाओं के साथ संबंधों का अध्ययन किया जाता है। ये संस्थाएं किस प्रकार से मानव संबंधों को प्रभावित करती हैं एवं किस प्रकार से जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने पर जोर देती हैं इन सब प्रश्नों का हल खोजने का प्रयास सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत किया जाता है।
- सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों का अध्ययन सम्मिलित है। ये किसी भी समाज की सांस्कृतिक संपदा को सुरक्षित करने, उन्नत बनाने एवं इस सांस्कृतिक संपदा को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करने का सर्वोत्तम माध्यम है। सामाजिक विज्ञान न केवल भारत की विभिन्न संस्कृतियों की समझ पैदा कर विद्यार्थियों में सांस्कृतिक स्तर पर अनेकता में एकता के सारतत्व की समझ बनाता है, बल्कि विश्व की अन्य देशों की संस्कृतियों का अध्ययन करने का अवसर भी प्रदान करता है जिससे छात्रों में सार्वभौमिक संस्कृति सम्मान आदि सामाजिक गुण निर्मित होते हैं।

टिप्पणी

- सामाजिक विज्ञान में व्यक्ति एवं भौतिक वातावरण के बीच अंतःसंबंधों का अध्ययन किया जाता है कि किस प्रकार से व्यक्ति एवं वातावरण एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं। इसके अंतर्गत हम मनुष्य की गतिविधियों के कारण मौसम एवं वातावरण में पैदा हुए असंतुलन का अध्ययन करते हैं।
- सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में मानव का अन्य संस्थाओं के साथ संबंध भी जुड़ा है, जैसा कि हमारे जीवन से अनेक संस्थाएं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ी रहती हैं यथा– परिवार, धर्म, समुदाय, समाज एवं सरकार आदि। सामाजिक विज्ञान में उपरोक्त संस्थाओं के मनुष्य के साथ अंतःक्रियात्मक संबंधों का यथार्थ वर्णन किया जाता है जिससे पक्ष–विपक्ष दोनों उजागर होते हैं।
- सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में इतिहास की घटनाओं का अध्ययन एवं विश्लेषण सम्मिलित हैं। जैसे–भारत में मुस्लिम शासकों का आगमन, आपसी युद्ध, भारत के उपनिवेश बनने के कारण, स्वतन्त्रता आंदोलन का प्रारम्भ, स्वतन्त्रता प्राप्ति एवं भारत विभाजन इत्यादि जैसी घटनाओं का अध्ययन हमें वर्तमान एवं भविष्य में सामंजस्य स्थापित करने में मदद करता है।
- सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में व्यक्ति एवं अर्थव्यवस्था के अंतःसंबंधों का अध्ययन किया जाता है। सामाजिक परिवेश में कानून का राज एवं सुरक्षा होने से विदेशी निवेश के बढ़ने की संभावना बढ़ जाती है। जिससे न केवल समाज के लिए रोजगार के अवसर पैदा होंगे बल्कि यह देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत करेगा।
- सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में सम–सामयिक घटनाओं का अध्ययन भी शामिल है। समसामयिक घटनाएं न केवल विद्यार्थियों में तार्किक चिंतन करने में योग देती हैं, बल्कि एक स्वतंत्र सोच का भी विकास करती हैं। विद्यार्थी विश्व के विभिन्न देशों में हो रहे राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, भौगोलिक परिवर्तनों से अवगत होते रहते हैं। इससे उन्हें बदलती हुई परिस्थितियों में स्वयं को मानसिक रूप से समायोजित करने में मदद मिलती है।
- सामाजिक विज्ञान के माध्यम से न केवल राष्ट्रीय बल्कि अंतर्राष्ट्रीय समझ के विकास का अध्ययन किया जा सकता है। जैसे– विद्यार्थियों में विभिन्न देशों की संस्कृतियों के अध्ययन से अनेकता में एकता की समझ पैदा होती है। सामाजिक विज्ञान, विद्यार्थियों में यह दृष्टिकोण विकसित करता है कि हम सब न केवल अपने देश के नागरिक हैं, बल्कि विश्व समुदाय के भी नागरिक हैं, ताकि विद्यार्थी किसी वैश्विक घटना का वस्तुनिष्ठ एवं समालोचनात्मक मूल्यांकन करके सही निष्कर्ष पर पहुंच सकें।
- सामाजिक विज्ञान में विभिन्न प्रकार की ललित कलाओं का अध्ययन सम्मिलित है। यथा चित्रकारी, पच्चीकारी, मिट्टी के पात्रों का निर्माण एवं मूर्ति निर्माण आदि। इनका अध्ययन न केवल छात्रों का संवेगात्मक, नैतिक, मानसिक और सौंदर्यात्मक विकास करता है, बल्कि सृजनात्मक क्षमताओं के बढ़ाने में भी सहायक है।
- सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में हमारे जीवन पर पड़ने वाले प्रौद्योगिकीय प्रभाव भी सम्मिलित हैं। जैसा कि आप जानते हैं कि इंटरनेट एवं मोबाइल ने हमारे सामाजिक एवं पारिवारिक संबंधों को बदला है।
- यद्यपि सामाजिक विज्ञान एवं प्राकृतिक विज्ञान दोनों अलग–अलग क्षेत्र हैं, लेकिन सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में इस बात का अध्ययन किया जाता है कि

दोनों किस प्रकार से एक–दूसरे पर आश्रित हैं। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में प्राकृतिक विज्ञानों के कार्यात्मक पक्ष का अध्ययन किया जाता है। वहीं पर भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जन्तु विज्ञान, वनस्पति विज्ञान एवं शरीर क्रिया विज्ञान आदि का ज्ञान किस प्रकार से हमारे सामाजिक जीवन के लिए लाभकारी है, आदि का अध्ययन किया जाता है।

टिप्पणी

उपरोक्त विश्लेषण से आप यह समझ गए होंगे कि सामाजिक विज्ञान को किसी प्रकार की सीमा में बांधना मुश्किल है। इसका क्षेत्र असीमित है। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में एक विस्तृत शृंखला समाहित है क्योंकि इसकी विषय–वस्तु न केवल सामाजिक विज्ञान के विषयों बल्कि भौतिक विज्ञान के विषयों से भी निर्धारित होती है।

इतने सारे अलग–अलग विषयों को कक्षा में पढ़ाते हुए विद्यार्थियों के भाषिक विकास की संभावनाएं भी काफी ज्यादा बढ़ जाती हैं। जैसा कि हम विज्ञान के संदर्भ में देख चुके हैं कि किसी भी विषय की अपनी एक अलग प्रकार की शब्दावली होती है। जब बच्चा इस विषय को पढ़ता है तो वह इसकी शब्दावली से भी परिचित होता है, वह नए शब्द सीखता है, उन शब्दों के अर्थ सीखता है और इसके साथ ही वह उन शब्दों का उचित प्रयोग करना भी सीखता है। सामाजिक विज्ञान में भी ऐसा ही होता है। इसके अतिरिक्त सामाजिक विज्ञान में गतिविधियों के लिए अनंत संभावनाएं हैं जिससे बच्चों के अलग–अलग भाषिक कौशलों का विकास होता है। उदाहरण के लिए राजनीतिक विज्ञान में संसद की कार्यवाही को समझाने के लिए बच्चों से विधानसभा के दृश्य का मंचन करने के लिए कहा जा सकता है जहां वे अलग–अलग दलों के नेता के रूप में अपनी बात रखेंगे और विभिन्न विषयों पर चर्चा करेंगे। इस प्रकार की गतिविधि में बच्चों की मौखिक भाषा का विकास होगा। इसी प्रकार विद्यार्थियों से किसी भी सामाजिक मुद्दे पर लेखन करवाया जा सकता है। उनको उनके इलाके की समस्या के बारे में शिकायती पत्र लिखने को कहा जा सकता है। इस प्रकार की गतिविधियां उनकी सामाजिक मुद्दों पर समझ में विकास के साथ–साथ उनके लेखन कौशल के विकास में भी योगदान देंगी। इसी प्रकार अलग–अलग समाजों का अध्ययन करते हुए कक्षा में उनकी भाषा पर भी चर्चा करवाई जा सकती है। अलग–अलग समुदायों के बारे में पढ़ाते हुए विद्यार्थियों को उनकी भाषा के कुछ शब्दों से परिचित करवाया जा सकता है। इस प्रकार सामाजिक–विज्ञान की कक्षा में विद्यार्थियों के भाषिक विकास की अनंत संभावनाएं हैं।

2.5.3 घटनाओं के विवरण, व्याख्या, वर्णन, तर्क–वितर्क आदि कर पाना

घटनाओं के विवरण, व्याख्या, वर्णन, तर्क–वितर्क आदि को क्रमशः इस प्रकार समझा जा सकता है–

- **घटनाओं का विवरण** : कक्षा में कोई भी विषय पढ़ाने से पूर्व या पढ़ाते हुए विद्यार्थियों को उस विषय का विवरण दिया जाता है। शिक्षक द्वारा विवरण देना एक महत्वपूर्ण क्रिया है। वैसे तो वर्तमान में ज्ञान के संरचनावादी दृष्टिकोण के अंतर्गत यह माना जाता है कि ज्ञान का निर्माण विद्यार्थी स्वयं करता है। परंतु ज्ञान के निर्माण की प्रक्रिया में विद्यार्थी को एक सहायक के रूप में एक शिक्षक की आवश्यकता होती है। शिक्षक विद्यार्थियों के समक्ष पढ़ने वाले विषय में आने वाली कठिनाई के निवारण के लिए विवरण प्रस्तुत करता है। विवरण से

टिप्पणी

विद्यार्थियों को विषय–वस्तु के बारे में समझ विकसित करने में मदद मिलती है। इसलिए विवरण समय बचाने में भी सहायक है। इसके अतिरिक्त किसी भी विषय का विवरण विद्यार्थियों में जिज्ञासा उत्पन्न करता है। उनमें उस विषय के बारे में और अधिक ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा जाग्रत होती है। हालांकि विवरण देते हुए शिक्षक को यह ध्यान रखना चाहिए कि विवरण विषयसामग्री के अनुसार ही दिया जाना चाहिए नहीं तो विद्यार्थियों में अनावश्यक उलझन पैदा होगी। इसके अतिरिक्त शिक्षक को विवरण देते हुए यह याद रखना चाहिए कि वह विवरण बहुत अधिक भी न दें। अधिक विवरण देने से विद्यार्थियों को अपनी समझ एवं रचनाशीलता विकसित करने का मौका नहीं मिलेगा।

- **व्याख्या** : अपने विचारों एवं भावों को विस्तारपूर्वक लिखना ही व्याख्या है। सरल शब्दों में व्याख्या किसी भाव या विचार के विस्तार एवं विवेचन को कहते हैं। किसी भी घटना की व्याख्या करते हुए इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि भावों और विचारों का संतुलित विवेचन हो। इसके लिए विद्यार्थी स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विचारों को लिखें। विचारों का विवेचन करते समय छात्र को विषय के गुण एवं दोषों की समीक्षा करनी चाहिए। कक्षा में शिक्षक को भी कभी–कभी व्याख्या विधि का प्रयोग करना पड़ता है विशेष रूप से जब विषय बेहद जटिल हो। जटिल विषयों को विद्यार्थियों के लिए सरल बनाने, उनको उस विषय के बारे में जानकारी देने के लिए व्याख्या विधि का प्रयोग किया जाता है।
- **वर्णन** : वर्णन में किसी विषय से संबंधित विषयसामग्री, किसी घटना, किसी जगह, किसी दृश्य आदि का विस्तारपूर्वक लेखा–जोखा किया जाता है। इसके द्वारा हम किसी भी घटना का शाब्दिक चित्रण कर सकते हैं। इसमें पहले किसी भी विषय का काफी गहनता से अवलोकन किया जाता है। उसके बारे में समझ बनाई जाती है। उसके बारे में विभिन्न स्रोतों से अधिक से अधिक जानकारी इकट्ठा की जाती है और उसके बाद ही उसके बारे में कुछ लिखा जाता है। किसी भी विषयवस्तु का वर्णन करना आसान नहीं है। इसके लिए उसकी गहन समझ होने के साथ–साथ लेखन कला में भी निपुण होना आवश्यक है। यदि आप लेखन में निपुण नहीं हैं तो भी आप लिख तो सकेंगे परंतु पढ़ने वाले उस वर्णन को पढ़कर, विषय को कितना समझ सकेंगे इसका अंदाजा लगाना मुश्किल है। कक्षा में शिक्षक किसी विषय के बारे में वर्णन लिखवा सकते हैं जिससे विद्यार्थियों में लेखन कौशल का विकास हो। यदि शिक्षक स्वयं किसी विषय पर वर्णन लिखवा या सुना रहे हैं तो उनको इसके लिए पहले से ही एक रूपरेखा तैयार कर लेनी चाहिए और सरल शब्दों में, प्रभावपूर्ण शैली में मनोरंजक तरीके से वर्णन करना चाहिए। शिक्षक को अधिक लंबा वर्णन करने से बचना चाहिए।
- **तर्क–वितर्क करना** : शिक्षा का एक मुख्य उद्देश्य है तर्क–वितर्क की क्षमता का विकास करना। यह उद्देश्य सभी विषयों के लिए महत्वपूर्ण है। तर्क को अधिकांशतः गणित शिक्षण से जोड़ कर देखा जाता है। ये सामान्य मान्यता है कि केवल गणित में अच्छे विद्यार्थियों की तर्क क्षमता अच्छी होती है। परंतु ऐसा नहीं है। हर विषय विद्यार्थियों की तर्क क्षमता को विकसित करने में अपना योगदान देता है। इस दृष्टि से भाषा शिक्षण और भी अधिक महत्वपूर्ण है। तर्क–वितर्क करने की क्षमता का बच्चे की भाषाई क्षमता से सीधा संबंध है। भाषा किसी विद्यार्थी को विचारों के माध्यम से बेहतर तर्क करने की क्षमता देती है।

टिप्पणी

किसी भी विषय के बारे में विद्यार्थी स्वयं जानकारी इकट्ठा करके उनका तुलनात्मक अध्ययन करते हुए उस पर तर्क–वितर्क कर सकता है। यहां उसका पढ़ने का कौशल काम आता है। वह पढ़ने के साथ–साथ उनके भीतर छुपे अर्थों को समझ कर अपने तर्क बना सकता है। अपने तर्क बेहतर ढंग से प्रस्तुत करने के लिए विद्यार्थी के पास बोलने का कौशल होना चाहिए। वह अपनी बात को उचित हाव–भाव, लय एवं गति के साथ प्रस्तुत तभी कर सकता है जब उसे बोलने के कौशल में दक्षता प्राप्त हो। इसके साथ ही वह किसी अन्य के साथ तर्क–वितर्क कर रहा है तो उसमें सुनने का कौशल भी होना चाहिए जिससे वह सामने वाले की बात को अच्छे से सुनकर, समझकर उस पर अपनी प्रतिक्रिया दे। और अंत में यदि विद्यार्थी को किसी विषय पर तर्क के साथ अपनी बात को लिखना है तो यहां लेखन कौशल काम आता है।

2.5.4 आनंद के लिए पढ़ना

भाषा के चारों कौशलों में से 'पढ़ने' का कौशल सबसे चुनौतीपूर्ण कौशल है। ऐसा इसलिए है क्योंकि पढ़ना एक सामान्य कौशल नहीं है उसमें कई प्रकार के कौशल एवं बोध ा–क्षमताएं शामिल होती हैं। पढ़ना सिखाने का कोई एक तरीका नहीं होता। हर अध्यापक अपनी कक्षा अलग–अलग तरीके से पढ़ना सिखाने का प्रयास करता है। इन अनेक विधि ायों की अपनी सीमाएं हो सकती हैं। यदि एक बार आप बच्चे को पढ़ने और पुस्तकों से सफलतापूर्वक जोड़ सकें तो फिर उसके लिए संभावित उपलब्धियों का कोई अंत नहीं है।

अब प्रश्न यह उठता है कि बच्चों में पढ़ने के प्रति आनंद कैसे उत्पन्न करवाया जाए। कक्षा में ऐसा करवाया जाए कि पढ़ना बच्चे के लिए बोझ नहीं बल्कि एक आनंददायी प्रक्रिया बन जाए। बच्चों में कैसे पढ़ने के प्रति रुचि जाग्रत की जाए जिससे वे स्वयं पढ़ने के लिए इच्छुक हों।

विद्यार्थियों को पढ़ने में जितना मजा आएगा वे उतना अधिक पढ़ना चाहेंगे। एक पाठक होने के कई लाभ हैं। पठन मानसिक रूप से प्रेरक होता है। इससे ज्ञान, जागरुकता और समझ बढ़ती है। इससे सुनने और बोलने का कौशल बढ़ता है और यह अच्छी तरह लिखने की क्षमता पर भी प्रभाव डालता है। जो छात्र अच्छी तरह पढ़ना नहीं सीखते, उन्हें सीखने के उपलब्ध अवसरों से जुड़ने में भी कठिनाई होती है और इस बात का जोखिम भी रहता है कि वे पीछे न छूट जाएं।

यदि हमें किसी विशिष्ट गतिविधि में आनंद मिलता है, तो हम उसे बार–बार करने के मौके ढूंढ़ेंगे। हम उस गतिविधि में जितना ज्यादा शामिल होते हैं, उसमें उतने ही बेहतर होते जाते हैं। यह बात पठन पर भी उतनी ही अच्छी तरह लागू होती है जितना किसी अन्य कौशल के लिए। अपने छात्रों को एक आनंददायक तरीके से पढ़ने का अनुभव लेने के ज्यादा से ज्यादा अवसर देकर, शिक्षक उन्हें जीवन पर्यन्त, एक आत्मविश्वास से युक्त पाठक बनने की राह पर आगे बढ़ा सकते हैं।

पढ़ने को आनंददायक बनाने के लिए कुछ गतिविधियां

पढ़ने को आनंददायक बनाने के लिए कुछ गतिविधियां इस प्रकार हैं–

अखबार पढ़ना : शिक्षक कक्षा में अखबार पढ़ने–पढ़ाने से दिन की शुरुआत करवा सकते हैं। समाचार–पत्र, राष्ट्रीय एवं स्थानीय दोनों ही या दोनों में से कोई एक शामिल कर सकते हैं। इन समाचार–पत्रों में से उस सामग्री का चयन करके विद्यार्थियों को

टिप्पणी

दिखाया जा सकता है, जो विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से सबसे अधिक लगे। उसके बाद उस सामग्री को लेकर उनके दृष्टिकोण व संबंधित अनुभवों के बारे में कक्षा में बात करवाई जा सकती है। इस गतिविधि को कक्षा में नियमित रूप से करवाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों को अखबार और पत्रिकाएं उपलब्ध करवाकर प्रोत्साहित किया जा सकता है कि वे अपनी रुचि की सामग्री चुनें और अपना चयन अपने सहपाठियों के साथ साझा करें। विद्यार्थियों को बोलकर पढ़ने, चुपचाप पढ़ने या जोड़ियों में बैठकर पढ़ने की जगह देकर, अपने स्तर पर इस गतिविधि से जुड़ने का अवसर दिया जाना चाहिए। छोटे छात्रों को पढ़कर सुनाने के लिए बड़े छात्रों को आमंत्रित कर बड़े छात्रों के पठन कौशल की जांच भी की जा सकती है।

हालांकि इस गतिविधि के लिए ज्यादातर अखबारों और पत्रिकाओं से जुड़ने के लिए एक न्यूनतम स्तर के पठन कौशल की आवश्यकता होती है। इसी तरह, कई समाचार सामग्रियों के लिए ऐसे ज्ञान और समझ की जरूरत होती है, जो प्राथमिक कक्षाओं के छात्रों में होना अपेक्षित नहीं है। इसलिए यह गतिविधि बहुत शुरुआती पाठकों के लिए उपयुक्त नहीं है।

विद्यार्थियों का स्तर चाहे जो भी हो, लेकिन उन्हें पठन का कुछ न कुछ अनुभव अवश्य होगा। चाहे सकारात्मक हो या नकारात्मक, लेकिन उनके मन में पठन के प्रति कोई न कोई दृष्टिकोण भी अवश्य होगा, जो कि स्कूल में, घर पर या उनके समुदाय में उसी प्रकार के अनुभवों पर आधारित होगा। विद्यार्थियों के लिए किस तरह की नियमित पठन गतिविधि कारगर होगी? आप यह कैसे सुनिश्चित कर सकते हैं कि हर विद्यार्थी शामिल हो? यह सोचना शिक्षक का काम है।

पुस्तक पर बातचीत करना

निम्नलिखित प्रश्नों पर विचार कीजिए–

- आपने ऐसा क्या पढ़ा था, जो उत्कृष्ट था और जिसे आप अपने किसी मित्र को सुझाएंगे?
- आपने क्या पढ़ना शुरू किया था, जिसे आपने ऊबाऊ या कठिन होने के कारण बीच में ही छोड़ दिया?
- क्या पढ़ने के बारे में आपकी कोई विशिष्ट पसंद या नापसंद है?

इस तरह के प्रश्न 'पुस्तक पर बात' को प्रोत्साहन देते हैं। आपके सभी उत्तर एक पाठक होने के महत्वपूर्ण पहलू हैं। पठन की समझ अपने आप विकसित नहीं होती, यह सिखाई जानी चाहिए। यह सर्वश्रेष्ठ ढंग से तब पूरी तरह सीखी जा सकती है, जब शिक्षक अपने विचारों को व्यक्त करके और पाठ के अर्थ के बारे में अपने छात्रों से चर्चा करके इस अवधारणा प्रक्रिया का नमूना प्रस्तुत करते हैं। छात्रों ने जो पाठ सुना या खुद पढ़ा है, जब उन्हें उसके बारे में बात करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, तो उनमें आत्मविश्वास विकसित होता है कि वे अपनी प्रतिक्रियाओं और व्याख्याओं के बारे में बात करने का आत्मविश्वास विकसित होता है। वयस्क होने के कारण, आमतौर पर हम स्वयं चुन सकते हैं कि हमें क्या पढ़ना है। अक्सर हम किसी विशिष्ट तरह के पाठ को अन्य पाठ की तुलना में ज्यादा पसंद करते हैं। हम अपने पठन को प्रदर्शित करते हैं और दूसरों के साथ इस पर चर्चा करते हैं। हमें अपने छात्रों को भी ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए कि वे उनकी पसंद की किताबें चुनें और वे जो भी पढ़ते हैं, उस पर बुद्धिमानी से प्रतिक्रिया दें।

इसके लिए किसी पुस्तक पर बातचीत के लिए कक्षा में विशेष सत्र करवाया जा सकता है। इसको निम्नलिखित गतिविधि के द्वारा समझा जा सकता है और कक्षा में करवाया जा सकता है–

अपनी कक्षा में पुस्तक पर बात करने के लिए एक संक्षिप्त सत्र की योजना बनाएं। यह 30 मिनट से ज्यादा समय की नहीं होनी चाहिए। एक छोटा–सा काल्पनिक या अकाल्पनिक पाठ चुनें। यह कोई कहानी, अखबार का कोई तथ्यात्मक लेख, किसी नाटक की स्क्रिप्ट या कोई कविता हो सकती है। आप चाहे जो भी पाठ चुनते हैं, सबसे पहले उसमें अपरिचित शब्दावली का अनुमान लगा लें। शुरू में ही विषय का परिचय देने और यदि कोई अज्ञात शब्द हैं, तो उनका अर्थ समझाने से आप अपने छात्रों की परेशानी को कम करने में मदद करेंगे और आगे जो आने वाला है, उसे समझने में उन्हें इससे सहायता मिलेगी।

टिप्पणी

पाठ पढ़कर सुनाने के बाद, संक्षेप में अपने छात्रों को बताएं कि इसके बारे में आपकी क्या राय है और इसे पढ़कर आपके मन में क्या विचार आए। हालांकि इस तरह पुस्तक पर बात का मॉडल प्रस्तुत करना महत्वपूर्ण है, लेकिन शुरुआत में अच्छा यह होगा कि इसे ध्यान से किया जाए, ताकि आप उस पाठ के बारे में अपने छात्रों की राय को बहुत ज्यादा प्रभावित न कर दें। इसके बाद अपने छात्रों को प्रतिक्रिया देने के लिए आमंत्रित करें। उनसे पूछें (उदाहरण के लिए)–

- उन्हें पाठ के बारे में क्या अच्छा लगा या नहीं लगा?
- पात्रों के बारे में उनके क्या विचार हैं?
- क्या इसमें कुछ ऐसा था, जिसे समझना कठिन हो?
- क्या वे किसी और को इसे पढ़ने का सुझाव देंगे?

आपके छात्रों की सभी प्रतिक्रियाओं के प्रति रुचि दर्शाएं। यदि आपकी कक्षा बड़ी है, तो हर दिन छात्रों के अलग–अलग समूह के साथ पुस्तक पर बात के सत्र की योजना बनाएं। जब आप इस छोटे समूह के साथ काम कर रहे हों, तब शेष कक्षा को पुस्तक पर बात के पठन से संबंधित कोई स्वतंत्र कार्य करने को दें। कक्षा को छात्रों के स्तर के अनुसार बांटकर, आप प्रत्येक समूह के लिए उपयुक्त पाठ का चयन कर सकते हैं। पुस्तक पर बात के सत्र केवल उस पाठ तक सीमित नहीं होने चाहिए, जो आप अपने छात्रों को पढ़कर सुनाते हैं, बल्कि इनका विस्तार करके उन पाठ को भी शामिल किया जा सकता है, जिन्हें छात्र स्वयं पढ़ते हैं। इस चरण में मुख्य संसाधन 'सीखने के लिए बात करना' पढ़ना आपके लिए मददगार हो सकता है।

- **पुस्तक समीक्षा करना** : आप पुस्तक पर बात के सत्र का विस्तार करने के लिए अपने छात्रों से कह सकते हैं कि उन्होंने जो पढ़ा है, उस पर वे एक संक्षिप्त समीक्षा लिखें। जैसा कि कक्षा की चर्चाओं में होता है, आपके छात्रों द्वारा इन समीक्षाओं में व्यक्त किए गए सभी विचारों को स्वीकार किया जाना चाहिए और महत्व दिया जाना चाहिए।

  जोड़ी में पठन : अकेले पढ़ने की तुलना में साथ मिलकर पढ़ना ज्यादा लाभदायक हो सकता है, और यह मजेदार भी हो सकता है। जोड़ियों में पठन से एक सहायक, सहयोगी शिक्षण संरचना मिलती है, जो तब आदर्श होती है, जब एक छात्र दूसरे छात्र जितना आत्मविश्वासी पाठक नहीं है। छात्र एक–दूसरे

टिप्पणी

के लिए बहुत सक्षम और संवेदनशील 'शिक्षक' हो सकते हैं। जोड़ी में कार्य के द्वारा, दो छात्र एक पुस्तक को साझा करते हैं और बारी–बारी से एक–एक वाक्य, पैराग्राफ या पृष्ठ पढ़ते हैं। पहला पाठक पढ़ता है, जबकि दूसरा उसे सुनता है और साथ–साथ बढ़ता है। जहां पहला पाठक रुकता है, दूसरा पाठक उसके आगे से पढ़ना जारी रखता है। यदि दोनों में से किसी को भी कठिनाई होती है या वे गलती करते हैं, तो उनका साथी उनकी सहायता कर सकता है या उनकी गलती सुधार सकता है। आप समान पठन क्षमता वाले छात्रों की जोड़ी बना सकते हैं या आप अधिक वाक्पटु छात्रों की कम वाक्पटु छात्रों के साथ, या मल्टी–ग्रेड कक्षा में बड़े छात्रों की छोटे छात्रों के साथ जोड़ी बना सकते हैं। यदि जोड़ियों में पठन सुनियोजित हो, तो इसका उपयोग छात्रों की बड़ी संख्या के साथ किया जा सकता है।

हम एक विविधतापूर्ण, बहुभाषी समाज में रहते हैं, जहां सभी भाषाएं मूल्यवान संसाधन हैं। अपने छात्रों को उनकी घरेलू भाषा का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करने से उन्हें स्कूल में आत्मविश्वासी और सहज महसूस करने में मदद मिल सकती है, और इससे उन्हें अपनी हिन्दी सुधारने में मदद मिल सकती है। भले ही आप वह भाषा न बोलते हों, जो आपके छात्रों की घरेलू भाषा है, लेकिन स्कूल में ऐसे कुछ छात्र हो सकते हैं, जो उनकी मदद कर सकें। जिन छात्रों की घरेलू भाषा एक ही है, उन्हें जोड़ियों में या छोटे समूहों में पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करें। इस तरह वे स्कूल की भाषा के विकास में सहायता करने के लिए उनके घर की भाषा का उपयोग करके एक–दूसरे की मदद कर सकते हैं।

- **कविता सुनना व गाना** : नियमित रूप से कविताएं सुनकर बच्चे भाषा की बुनियादी संरचना ग्रहण कर लेते हैं। कविता इसके लिए विशेष रूप से उपयोगी इसलिए भी है क्योंकि कविताओं को याद रखना आसान होता है। कविता याद रखने के लिए बच्चों को कोई विशेष प्रयास भी नहीं करना पड़ता। बार–बार सुनकर, मजे से दोहराते हुए वे कविताओं को याद कर लेते हैं। एक शिक्षक के लिए सबसे बड़ी चुनौती यह है कि अच्छी कविताओं का चुनाव कैसे करें और उनको कहां खोजे। अधिकांश पाठ्यपुस्तकों में दी गई कविताओं की भाषिक दृष्टि से उपयोगिता बहुत कम होती है। पाठ्यपुस्तकों एवं पत्रिकाओं की अधिकांश कविताएं उबाऊ और एक सतही अर्थ में आदर्शवादी होती हैं। उनकी वाक्य–रचना और शब्दावली कृत्रिम होती है। उनमें रोजमर्रा की भाषा का पुट नहीं होता। यही कारण है कि वे भाषा सीखने के साधन के रूप में विशेष उपयोगी नहीं होतीं। इस संदर्भ में एक काम कोई भी शिक्षक कर सकता है कि बच्चों के खेलते समय गाने वाले गीतों को लिखकर रख सकता है। ऐसे गीतों की एक पुस्तक तैयार की जा सकती है।

  कविता की किताब पढ़ने का ढंग वही है जो अन्य किताबें पढ़ने का है अर्थात बच्चों को अपने चारों ओर बैठाएं और किताब को बीच में रखें। दो–तीन बार पढ़ने के बाद आप किताब के बगैर कविता गाकर सुनाएं और बच्चे साथ–साथ गाएं। बाद में जब वे इस पुस्तक को पढ़ेंगे तो शब्दों का अनुमान आसानी से लगा सकेंगे।

- **कहानी** : कहानी सुनाना एक शक्तिशाली शिक्षण विधि हो सकती है क्योंकि शिक्षक अपने विद्यार्थियों के साथ सीधे बातचीत करते हैं। कहानियों और कहानियां सुनाने के लिए केवल एक ही संसाधन की आवश्यकता होती है–

टिप्पणी

शिक्षक। कहानी सुनाकर शिक्षक खुले सवाल कर सकते हैं, जैसे 'आपके अनुसार आगे क्या हुआ होगा?' और 'आपको क्यों लगता है कि वह ऐसा करता है?', जिनसे विद्यार्थियों को सोचने, याद करने, प्रतिबिंबित करने, कल्पना करने और प्रतिक्रिया देने का प्रोत्साहन मिलता है। ये सभी उनके भाषा संबंधी कौशल का विकास करते हैं। अनुभवी शिक्षक यह जानते हैं कि विद्यार्थी जब भाषा को किसी कहानी में सुनते हैं, तो उन्हें यह बहुत अच्छी तरह याद रहती है और वे इसका उपयोग करने की कोशिश भी करते हैं। कक्षा में नियमित रूप से कहानियां कहना और पढ़कर सुनाना एक अच्छा अभ्यास है क्योंकि इससे सीखने का अवसर भी मिलता है और यह मजेदार अनुभव भी होता है। हम भाग्यशाली हैं कि भारत में लोककथाओं और परंपराओं के माध्यम से हमारे पास बहुत सारी कहानियां उपलब्ध हैं, जिनका उपयोग शिक्षक भाषा के शिक्षण को आगे बढाने के लिए कर सकते हैं। जब आप कक्षा में कहानियां सुनाते हैं, तो यह साधारण होंगी और इसमें अंग्रेजी और स्थानीय भाषाओं का मिश्रण भी होगा खासतौर पर विद्यालय के शुरुआती वर्षों में।

कहानी ऐसी विधा है जिसमें विद्यार्थियों की रुचि किसी भी अन्य विधा से कहीं अधिक होती है। बच्चों को कहानी सुनाने की परंपरा काफी पुरानी है। कहानियां पढ़ने से बच्चों में वाक्य संरचना, शब्दों की संख्या में वृद्धि, घटनाक्रम आदि की समझ का विकास होता है। अलग–अलग स्तर के अनुसार विद्यार्थियों के लिए अलग–अलग प्रकार की कहानियों का चयन किया जा सकता है। छोटी कक्षा के बच्चों को चमत्कारिक एवं पौराणिक कहानियां अधिक पसंद होती हैं। उन्हें घटनाओं के चमत्कार एवं महापुरुषों के विलक्षण कार्यों को पढ़ने में मजा आता है। इसके बाद के स्तरों में पारिवारिक एवं सामाजिक कहानियां, मनोवैज्ञानिक कहानियां, नैतिक मूल्यों वाली साहसिक कहानियों को भी पढ़ने के लिए शामिल किया जा सकता है।

अपनी प्रगति जांचिए

11. निम्न में से संप्रेषण का माध्यम किसे माना जाता है?
    (क) ज्ञान (ख) पाठ्यक्रम
    (ग) भाषा (घ) पाठ्यपुस्तक
12. किसी भी विषय में आलोचनात्मक चिंतन के लिए किस तत्व का होना आवश्यक है?
    (क) तर्कसंगतता (ख) प्रासंगिकता
    (ग) वैज्ञानिक दृष्टिकोण (घ) ये सभी
13. किस विज्ञान के अंतर्गत समाज के विविध आयामों को जानने एवं समझने का मौका मिलता है?
    (क) जीव विज्ञान (ख) सामाजिक विज्ञान
    (ग) मनोविज्ञान (घ) इनमें से कोई नहीं
14. अपने विचारों एवं भावों को विस्तारपूर्वक लिखना क्या कहलाता है?
    (क) घटनाओं का विवरण (ख) तर्क–वितर्क
    (ग) व्याख्या (घ) वर्णन

टिप्पणी

2.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ख)
2. (ग)
3. (घ)
4. (क)
5. (ग)
6. (ख)
7. (क)
8. (ख)
9. (ग)
10. (ख)
11. (ग)
12. (घ)
13. (ख)
14. (ग)

2.7 सारांश

तमाम आलोचनाओं के बावजूद भी पाठ्यपुस्तकों की आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता। यह सस्ता और आसानी से उपलब्ध होने वाला ऐसा संसाधन है जो विद्यार्थियों के कौशलों के विकास में मदद करता है। यह शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों के लिए ही आधार–सामग्री का कार्य करती हैं। पाठ्यचर्या बच्चे के सीखने को सुगम बनाने की योजना है। यह योजना शुरू होती है वहां से जहां बच्चा होता है। यह सीखने के उन सभी आयामों और पहलुओं को सूचीबद्ध करती है जो जरूरी हैं। पाठ्यक्रम का अर्थ है कि विषयवस्तु के हिसाब से क्या पढ़ाया जाए और वे ज्ञान, कौशल एवं अभिवृत्तियां जो स्तर विशिष्ट उद्देश्यों के साथ हो और जिन्हें खास रूप से बढ़ावा मिले।

विद्यालयों में जो भी पढ़ाया जाता है उसका उदेश्य मात्र पढ़ने–लिखने में योग्यता बढ़ाना और ज्ञान में वृद्धि करना नहीं होता। उसका विद्यार्थियों के मन–मस्तिष्क पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है। विषय–सामग्री के सकारात्मक प्रस्तुतीकरण से बच्चों का दृष्टिकोण सकारात्मक होता है जबकि नकारात्मक प्रस्तुतीकरण से नकारात्मक दिशा में ही उनका विकास संभव होगा। शिक्षा व्यवस्था में सुधार हेतु यह आवश्यक है कि पाठ्यपुस्तकों का समय–समय पर विश्लेषण किया जाए। विश्लेषण करने से पहले कुछ आधार बिन्दुओं का निर्माण किया जाना चाहिए जिनके आधार पर पाठ्यपुस्तक का विश्लेषण किया जा सके।

मूल्यांकन विद्यार्थी के नियमित प्रदर्शन की जांच करने के लिए आवश्यक है। इसके माध्यम से हम विद्यार्थी के व्यक्तित्व का विकास कर सकते हैं क्योंकि निरंतर मूल्यांकन समय–समय पर विद्यार्थियों की खामियां बताता है जिसमें सुधार किया जा सकता है। मूल्यांकन के कई तरीके हो सकते हैं जैसे मौखिक परीक्षण, लिखित परीक्षण और प्रयोगात्मक परीक्षण। मूल्यांकन के लिए लिखित परीक्षण का प्रयोग हमेशा से होता आया है। मुख्यतः लेखन कौशल का परीक्षण बिना लिखित परीक्षा के संभव नहीं है। प्रश्नों का उत्तर हो या रिक्त स्थान की पूर्ति, संक्षिप्त प्रश्न हो या निबंधात्मक प्रश्न सभी कुछ लिखित परीक्षण के द्वारा ही लिए जाते हैं।

प्रश्नों का सही जवाब लिखने के लिए या अपनी बात को व्यक्त करने के लिए हमारा लेखन कला में दक्ष होना आवश्यक है। इसके लिए हमारे पास सही शब्द, वाक्य संरचना, अनुच्छेद आदि की समझ होना आवश्यक है। अच्छे लेखन के लिए हमें यह

टिप्पणी

ध्यान रखना चाहिए कि लेखन का उद्देश्य क्या है। जो भी लिखा जा रहा है वो विषय के अनुरूप है या नहीं। शब्दों का चुनाव ठीक ढंग से किया गया है या नहीं। भाषा की दृष्टि से लेखन में त्रुटियां तो नहीं हैं। विराम चिह्नों का प्रयोग ठीक ढंग से हुआ है या नहीं। लिखते हुए इन सारी बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। लेखन कौशल के अंतर्गत ही नोट लेना एवं नोट बनाना, सारांश लिखना, रिपोर्ट लिखना आदि शामिल हैं। इन सब की अपनी कुछ विशेषताएं हैं, उनके अनुसार लिखने के अलावा जो बातें हमें आम लिखते हुए ध्यान रखनी चाहिए वह इन सबके लेखन पर भी लागू होती हैं।

पढ़ना सीखने का शुरुआती दौर बच्चों एवं शिक्षकों दोनों के लिए ही महत्वपूर्ण होता है। पिछले कुछ दशकों में पढ़ना सीखने वाले की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। परंतु इनमें बड़ी तादाद में ऐसे बच्चे शामिल हैं जो पढ़ तो सकते हैं परंतु अपने पढ़े हुए को समझ पाने की क्षमता उनमें नहीं है। भले ही इस क्षेत्र में किए गए अथक प्रयासों से हालात सुधरे हैं परंतु कुल मिलाकर स्थिति बेहद निराशाजनक है। समझ कर पढ़ने के कौशल का विकास कक्षा तीन–चार के विद्यार्थियों में भी नहीं हो पाता। भाषा शिक्षण का तात्पर्य पाठ्यपुस्तक के पाठों का वाचन और भाषा पाठ्यक्रम को पूरा करने से कहीं अधिक व्यापक है। 'पढ़ने की समझ' को लेकर प्राय : शिक्षकों में ही समझ का अभाव पाया जाता है। इसके लिए एक शिक्षक को सर्वप्रथम पढ़ने की समझ से अवगत होना पड़ेगा और साथ ही कक्षा में भाषाई कौशलों की समझ को विकसित करने के लिए विभिन्न उपकरणों का कक्षा में प्रयोग करने के साथ–साथ नए उपकरणों की तलाश भी करनी होगी। कक्षा में विद्यार्थियों को पढ़ने एवं समझ विकसित करने के उचित अवसर देने होंगे। अब तो बाहरी दुनिया की समझ बनाने के लिए भी 'पढ़ना आना' आवश्यक है। इसके साथ ही पढ़ने की इस समझ का मूल्यांकन कैसे किया जाए यह भी गहन चर्चा का विषय है। हम जानते हैं कि 'पढ़ना' भाषा का अर्जित किया जाने वाला कौशल है। इसलिए यह समझ बनाना बहुत जरूरी है कि बच्चे इस कौशल को कैसे अर्जित कर रहे हैं।

भाषा के पाठ्यक्रम में हम भाषा के कौशलों को सिखाने की बात करते हैं। कक्षा में भाषा कौशल सिखाने के अतिरिक्त भाषा के माध्यम से हम विद्यार्थियों में अन्य बहुत से कौशलों का विकास कर सकते हैं जैसे– रचनात्मकता, सृजनात्मकता, विचारात्मक चिंतन, आलोचनात्मक चिंतन इत्यादि। किसी विषयवस्तु के अर्थ, अवधारणा, पक्ष, विपक्ष, उसके गुण एवं दोष इत्यादि सभी पक्षों पर विचार करना ही आलोचनात्मक चिंतन कहलाता है। कक्षा में शिक्षण का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य विद्यार्थियों में आलोचनात्मक चिंतन का विकास करना होता है। यह विद्यार्थियों के तर्कों को समझने और मूल्यांकन करने में भी मदद करता है। एक शिक्षक अन्य विषयों की कक्षाओं में भी विभिन्न गतिविधियों को करवा कर भाषा शिक्षण में योगदान कर सकता है। भाषा की कक्षा में घटनाओं के विवरण, व्याख्या, वर्णन, तर्क–वितर्क आदि का भी अपना महत्व है। कक्षा में विभिन्न मौकों पर शिक्षक द्वारा इनका प्रयोग किया जाता है। तर्क–वितर्क करने की क्षमता का बच्चे की भाषाई क्षमता से सीधा संबंध है। भाषा किसी विद्यार्थी को विचारों के माध्यम से बेहतर तर्क करने की क्षमता देती है। शिक्षक का कार्य भाषा कौशलों के विकास के साथ–साथ पूरी शिक्षण प्रक्रिया में बच्चों के लिए आनंद का सृजन करना है। शिक्षक को विशेषकर पठन कौशल इस प्रकार विकसित करने के प्रयास करने चाहिए जिससे विद्यार्थी आनंद की अनुभूति कर सकें और वह स्वयं पढ़ने के लिए प्रेरित हो सकें।

2.8 मुख्य शब्दावली

टिप्पणी

- **पाठ्यपुस्तक** : पाठ्यपुस्तक ज्ञान, अनुभवों, भावनाओं, विचारों एवं प्रवृत्तियों का शिक्षण क्रियाओं एवं अभिप्रायों के लिए सुव्यवस्थित चिंतन एवं ज्ञान का लिखित रूप है।
- **पाठ्यचर्या** : सही रूप से निर्धारित गतिविधियों का एक समूह जिनकी रचना कुछ खास शैक्षिक उद्देश्यों को कार्यान्वित करने के लिए हो।
- **पाठ्यक्रम** : इसका अर्थ है विषयवस्तु के हिसाब से क्या पढ़ाया जाए और वे ज्ञान, कौशल एवं अभिवृत्तियां जिन्हें खास रूप से बढ़ावा मिले, स्तर विशिष्ट उद्देश्यों के साथ।
- **मूल्यांकन** : मूल्यांकन किसी वस्तु के मूल्य को निर्धारित करने के कार्य या प्रक्रिया की ओर संकेत करता है।
- **निबंधात्मक प्रश्न** : जिन प्रश्नों के जवाब लंबे होते हैं और जिनको लिखने में समय लगता है उनको निबंधात्मक प्रश्न कहा जाता है।
- **लघु उत्तर वाले प्रश्न** : जिन प्रश्नों का जवाब अपेक्षाकृत कम समय एवं कम शब्दों में (1 या 2 छोटे अनुच्छेदों में) दिया जा सकता है उनको लघु उत्तर वाले प्रश्न कहा जाता है।
- **वस्तुनिष्ठ प्रश्न** : वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर में विचारों की स्वतन्त्रता नहीं रहती है। प्रश्नोत्तरों के विकल्प दिए रहते हैं। उनमें से ही सही उत्तर को चिन्हित करना होता है इसलिए इनका जवाब बहुत ही कम समय में दिया जा सकता है।
- **पढ़ना सीखना** : लिखे हुए से अर्थ गढ़ना।
- **डीकोडिंग** : शब्द को टुकड़ों में बांटकर पहचान करना फिर उसे बोल पाना या पढ़ पाना।
- **मौखिक अभिव्यक्ति** : अपने भावों और विचारों को उपयुक्त शब्दों, वाक्यों, मुहावरों आदि के प्रयोग कर प्रस्तुत करना, मौखिक अभिव्यक्ति है।
- **पठन कौशल** : पठन कौशल एक ऐसी संश्लिष्ट विकासशील मनोभाषिक क्रिया है जो लिपि–प्रतीकों को पहचान कर उन्हें शब्द और अर्थ में परिवर्तन करने से आरंभ होकर अर्थग्रहण के दौर से गुजरती हुई पाठक को विश्लेषण, चिंतन–मनन के स्तर तक ले जाती है।
- **लिखित अभिव्यक्ति** : लिपि, शब्द–ज्ञान, पदक्रम, वाक्य–गठन के विभिन्न रूपों तथा शैली आदि की प्रयोग क्षमता लिखित अभिव्यक्ति के अनिवार्य पक्ष है।
- **आलोचनात्मक चिंतन** : आलोचनात्मक चिंतन से अभिप्राय है– किसी विषय–वस्तु पर आलोचना के साथ चिंतन करना।
- **घटनाओं का विवरण** : कक्षा में कोई भी विषय पढ़ाने से पूर्व या पढ़ाते हुए विद्यार्थियों को उस विषय का विवरण दिया जाता है।
- **व्याख्या** : अपने विचारों एवं भावों को विस्तारपूर्वक लिखना ही व्याख्या है।
- **वर्णन** : वर्णन में किसी विषय से संबंधित विषयसामग्री, किसी घटना, किसी जगह, किसी दृश्य आदि का विस्तारपूर्वक लेखा–जोखा किया जाता है।

2.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

टिप्पणी

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. पाठ्यपुस्तक की रचना के क्या सिद्धान्त हैं?
2. विषय–सामग्री के चयन में किन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए।
3. पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रम कैसे भिन्न हैं?
4. किसी पाठ के विश्लेषण एवं पाठ्यपुस्तक के विश्लेषण में क्या भिन्नता है।
5. एक अच्छे प्रश्नपत्र का निर्माण करते समय आप किन बातों का ध्यान रखेंगे?
6. नोट लेने के लिए किन चीजों का ध्यान रखना चाहिए।
7. सारांश लिखते हुए आप किन बातों का ध्यान रखोगे? उदाहरण सहित बताइए।
8. प्रभावी लेखन के लिए लेखन में कौन–कौन से गुण होने चाहिए।
9. अपनी कक्षा की एक दिन की दिनचर्या पर एक रिपोर्ट बनाइए।
10. भाषा शिक्षण में समझ का विकास क्यों महत्वपूर्ण है?
11. भाषा शिक्षण में मूल्यांकन की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।
12. पढ़ने की समझ के आकलन के लिए किन बातों का ध्यान रखना चाहिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. बच्चे की शिक्षा की दृष्टि से पाठ्यपुस्तक के महत्व एवं उसकी उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।
2. भाषा की पाठ्यपुस्तक अन्य पाठ्यपुस्तकों से किस संदर्भ में भिन्न हैं?
3. पाठ्यपुस्तकों का विश्लेषण करते हुए किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए।
4. शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में मूल्यांकन क्यों महत्वपूर्ण है?
5. निबंधात्मक प्रश्नों में क्या खामियां हैं? उनको किस प्रकार दूर किया जा सकता है?
6. भाषाई कौशलों में सुनने एवं पढ़ने की समझ काफी हद तक एक–दूसरे पर निर्भर है। टिप्पणी कीजिए।
7. 'पढ़ने की सही क्षमता के विकास के लिए बच्चों को 'डीकोडिंग' से दूर रखना चाहिए।' क्या आप इस कथन से सहमत हैं? अपने उत्तर तर्क सहित बताइए।
8. पढ़ने की क्षमता के विकास में शिक्षक की भूमिका का आकलन कीजिए।
9. भाषाई कौशलों के विकास के मूल्यांकन के लिए एक शिक्षक को किन बातों का ध्यान रखना होता है।
10. कक्षा में आलोचनात्मक चिंतन के विकास के लिए एक शिक्षक द्वारा कौन सी रणनीतियां अपनाई जा सकती हैं? विस्तार से विवेचन कीजिए।
11. विज्ञान की कक्षा में भाषा सीखने के अवसरों की चर्चा उदाहरण सहित कीजिए।
12. एक भाषा शिक्षक के रूप में सामाजिक विज्ञान की कक्षा में आप भाषा कौशलों का विकास किस प्रकार करेंगे। विस्तारपूर्वक चर्चा कीजिए।

13. कक्षा में वर्णन एवं व्याख्या विधि का प्रयोग करते हुए एक शिक्षक को क्या–क्या सावधानियां रखनी चाहिए।
14. तर्क–वितर्क एवं भाषा शिक्षण में संबंध की व्याख्या कीजिए।
15. 'आनंद के लिए पढ़ना' सिखाने में शिक्षक की भूमिका पर चर्चा कीजिए।

टिप्पणी

2.10 सहायक पाठ्य सामग्री

1. क्रिस्टल डेविड, 'लिंगुइस्टिक्स', पैंगविन पब्लिकेशन्स, संस्करण 1990
2. क्रिस्टोफर, 'विंचय शिक्षा दर्शन में मुख्य अवधारणाएं : रूटलेज', लंदन, यू.के. संस्करण
3. कुमार, कृष्ण, 'बच्चे की भाषा और अध्यापक', राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, संस्करण 1996
4. गिलियन, लजर, 'लिटरेचर एंड लैड्ग्वेज टीचिंग' कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेसय संस्करण 1993
5. जी. डब्ल्यू फोर्ड और लारेंस पुंगी, 'द स्ट्रक्चर ऑफ नॉलेज एंड द करीकुलम', रेंड मैकनल्ली एंड कंपनी, शिकागो, संस्करण 1964
6. डेविड, स्कॉट, (सं.), 'करीकुलम स्टडीस : मेजर थीम्स इन एडुकेशन', रूटलेज, लंदन, संस्करण 2003
7. तिवारी, भोलानाथ, 'भाषा विज्ञान प्रवेश' किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2013
8. प्रतिमा, 'भाषा शिक्षण', श्री नटराज प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2017
9. यादव, एस. के., 'टेन इयर्स स्कूल करीकुलम इन इंडिया–ए स्टेट्स स्टडी', एनसीईआरटी, दिल्लीय संस्करण 2003
10. रा.शै.अ.प्र.प. (2005), 'राष्ट्रीय पाठचर्या की रूपरेखा', नई दिल्ली
11. लोर्च सू, 'बेसिक राईटिंगस : ए प्रकटिकल अप्रोच', विन्थ्रोप पब्लिशर्स, संस्करण 1981
12. वर्मा एस. के. एवं कृष्णस्वामी, 'मॉडर्न लिंगुइस्टिक्स', ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, संस्करण 1997
13. श्रीवास्तव, डॉ. रवीन्द्रनाथ, 'भाषा शिक्षण', वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2016
14. सिंह, निरंजन कुमार, 'माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण', राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, संस्करण 2011
15. Sharma, I. S.– National Council of Educational Research and Training (India), (1993), On Language Comprehensibility- National Council of Educational Research and Training.